आठ असमिया एकांकी
और
पियली फुकन

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

आठ असमिया एकांकी और पियली फुकन

संपादक
प्रफुल्ल दत्त गोस्वामी

अनुवादक
नवारुण वर्मा

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-1240-5

1995 (शक 1916)

रु. 51.00

Original title : Assamese One Act Plays and Piyali Phukan (*Assamese*)
Translation : Aath Assamiya Ekankee aur Piyalı Phukan (*Hindi*)

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5, ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित।

विषय सूची

भूमिका

एकांकी नाटकों के उदाहरण पुराने नाटक-साहित्य में दुर्लभ हों, ऐसी बात नहीं। परंतु वर्तमान सदी में लोकप्रिय हो उठे इस वर्ग के नाटक उन्नीसवीं सदी के आखिरी दशक में ही अधिक पल्लवित हुए। यूरोप में स्टीनबर्ग, चेखव, इंग्लैंड में आर्थर कानन डायल, लेवी, ग्रेगरी, सीं, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में--यूजीन ओ'नील, आदि नाटककारों के प्रयासों से एकांकी नाटक एक विशिष्ट सार्थक रूप से मच पर सुप्रतिष्ठित हो गया। स्टीनबर्ग का एकांकी नाटक "मिस सोली" सन् 1888 ई. में लिखा गया था। सीं का विख्यात एकांकी "दि राइडर्स टू दि सी" सन् 1904 ई. में मंचित हुआ था। इन नये नाटकों को प्रायः परीक्षामूलक ढंग से विभिन्न दलीया या गोष्ठी के थियेटरों में मंचित किया गया था। चिंतन एवं उद्‌भावना के क्षेत्र में अग्रणी एक वर्ग के लोगों के आग्रह के कारण ऐसे नाटकों के विकास में प्रेरणा मिली थी।

पहले जब बड़े-बड़े नाटक मंचित हुआ करते थे, तो अंकों के बीच कभी-कभी एक-एक कौतुक भरे दृश्य प्रस्तुत कर दर्शको का मनोरंजन किया जाता था। पर अब ऐसे लघु दृश्य या नाटिका कलात्मक रूप लेने लगे, तथा नाटक के रूप में भी उन्हें सम्मान मिलने लगा। उदाहरणार्थ, लेडी ग्रेगरी के "दि राइजिंग आफ दि मून" या सीं के "दि राइडर्स टु दि सी" जैसे एकांकियों मे देशप्रेम, प्रकृति की अजेय शक्ति से मनुष्य का संग्राम आदि गंभीर और गहरे विषयों वाली समस्याएं कला-सुलभ रूप में प्रस्तुत हुई है। ये कोई सस्ती या बाजारू कृतियां नहीं हैं। ऐसे लघु-नाटक यह प्रमाणित करते है कि हास्य-विनोद, व्यंग्य आदि के आधार पर एकांकी लिखे जा सकते हैं। इन विशेषताओ के साथ-साथ यथार्थवाद के प्रति लोगों का आकर्षण दिनोंदिन बढ़ने के कारण कहानियों की भाति एकांकी भी वर्तमान युग के साहित्य की एक विशिष्ट विधा माना जाने लगा है। लेडी ग्रेगरी, चेखव आदि नाटककारों के जिन दो-चार लघु-नाटकों के असमिया रूपांतर मंचित हुए हैं, वे भी हमारे लेखकों को प्रेरणा दिये बगैर नहीं रहे हैं। इंग्लैंड की स्कूली नाटक मंडलियां ऐसे एकांकी नाटकों का मंचन निरंतर करती रहती हैं और किसी नाटक को मंचित करने पर नाटककार को नाटक के लिए निश्चित शुल्क भी देने का नियम है। ऐसे नियम हमारे यहां भी अगर चालू हों, तो हो सकता है कि यहां के नाटक-लेखकों को कुछ प्रेरणा मिले।

असम में एकांकी-नाटकों का व्यापक विकास हमारी स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ साल बाद से प्रारंभ हुआ। मगर अचरज की बात यह है कि लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ की रचना "गदाधर

राजा" सन् 1918 ई. में लिखी गयी थी, जिसे एकांकी ही कहा जा सकता है। बेजबरुआ ने इसे "चरा घरीया भाओना" यानी "बैठकखाने का नाटक" कहा है। यह हल्के किस्म का नाटक है। पर उसकी विषयवस्तु हल्की-फुल्की नहीं है। उसकी विषयवस्तु है–राजनीति। आहोम राजकुमार गदाधर (जिसे गदापाणि भी कहा जाता है) का पलायन और राज्य-उद्धार का प्रयास एवं उसके प्रति सचेतन वर्ग के लोगों की सहानुभूति–यही इस नाटक का मूल उपजीव्य है। इसके अलावा जैसा कि फणी तालुकदार का कथन है–"प्रमुख पात्र गदाधर खुद मंच पर न आकर या सिर्फ पृष्ठभूमि में ही रहकर कहानी को गति प्रवाह देने में हाथ बंटाता रहा है।"–शैली की दृष्टि से यह भी उल्लेखनीय है।

सन् 1937 में प्रकाशित रमेश चंद्र बरुआ के काव्य-नाटक "मना लिछा" (मोनालिसा) को छोड़ दिया जाय, तो उल्लेखनीय दूसरा एकांकी है–अनिल चौधुरी का "चिरंतन"। इससे पहले "एबेलार नाट" (एक बेला का नाटक) छपा था। वीणा देवी के नाम से लिखने वाले विरिंचि कुमार बरुआ द्वारा रचित यह "एबेलार नाट" सन् 1955 में छपा था जबकि "चिरंतन" छपा था सन् 1962 में। "एबेलार नाट" लघु-नाटक नहीं, पूर्णांग नाटक जैसा ही बड़ा है। पुस्तक की भूमिका में लेखक ने जो मंतव्य किया है, उससे एकांकी के रूप का कुछ आभास मिलता है। "यह एवेलार नाट" असमिया साहित्य में नवीन ढंग की रचना है। इस नाटक में कार्य की अपेक्षा "कथा" (संवाद) अधिक है। एक परिवार की बैठक में दिन की एक बेला में होनेवाली एक घटना या कहानी के आधार पर ही इस नाटक की रचना हुई है। घटना का फैलाव कम है, पात्रों की संख्या भी कम है "दृश्य है सिर्फ एक!" "दृश्य" यानी घटनावाला स्थान भी एक ही है–"योरहाट के धैर्य चरण बरुआ की बैठक। हालांकि नाटक के 20 और 40 पृष्ठ पर देखी जाती है कि वहां नाटककार कुछ विराम की आवश्यकता अनुभव कर रहा है। ऐसी ही स्थिति में अनिल चौधुरी ने "दर्शन" शब्द का प्रयोग किया है जैसे कि "चिरंतन" एकांकी में है। एकांकी में ऐसा विराम या दृश्यांतर शैली की दृष्टि से कुछ त्रुटिपूर्ण होता है। क्योंकि एकांकी नाटक के अभिनय में अटूट सिलसिला बनाये रखना वांछनीय है। मंच खाली हो जाय तो नाटक की गति में रुकावट पड़ती है। हालांकि कुछ अंग्रेजी एकांकियों में ऐसा विराम दिखाई पड़ता है। "एबेलार नाट" की विषयवस्तु गंभीर है। नवीन के साथ प्राचीन का संघर्ष, कुछ हद तक युक्ति-तर्क के साथ अनुभूति का संघात। इसका अंत भी शोकपूर्ण है। नाटक के अंत में एक पात्र कहता है–"पुरानी-नयी दो शक्तियों के संघर्ष में इंसानों में इंसान जैसे एक व्यक्ति की जिंदगी खत्म हो गयी।" उच्च-मध्यवर्गीय समाज की समस्या पर नाटक की कहानी आधारित है। समस्या और व्यक्ति इन दोनों क्षेत्रों में नाटकीय संघात सुस्पष्ट है।

अनिल चौधुरी का "चिरंतन" उसी तरह का एक लंबा एवं गंभीर एकांकी है। इसमें भी संघात कोई कम प्रबल नहीं है। यह संघात एक ओर दरिद्रता एवं व्यर्थता के बीच है, दूसरी ओर विवेक एवं मनुष्य की आदिम प्रवृत्ति के बीच भी है। घटना-क्रम लंबा होने के कारण इस

नाटक के दृश्य को दो भागों में बाट दिया है। लेखक ने हर भाग को "दर्शन" कहा है। मूल नाटक के प्रथम दर्शन में लगभग 30 पृष्ठों पर फैला एक सपना है। मूल नाटक में इस सपने का मनस्तात्विक मूल्य न हो, ऐसी बात नहीं। परंतु नाटककार का निर्देश है कि इस सपने को असुविधा होने पर अभिनय में छोड़ा भी जा सकता है। अगर सपने को छोड़ दिया जाय तो इसे एकांकी माने बगैर रहा नहीं जा सकता। इसकी घटनाओं का स्थान भी एक ही है, शाम से लेकर आधी रात वे लगातार होती रहती हैं, चरित्रों की संख्या भी बिलकुल कम ही है।

चौधुरी का यह नाटक सन् 1953 के मई महीने में गुवाहाटी में लगातार दो रात मंचित हुआ था। सन् 1954 में आकाशवाणी केंद्र से "संघात" नाम से इसे प्रसारित किया गया था। वीणा देवी का "एबेलार नाट" और अनिल चौधुरी का "चिरंतन" नाटक के रूप में अनाकर्षक या असफल न होने पर भी इन दोनों की लंबाई और विषयवस्तु की गहराई की समकक्षता करने वाला कोई नाटक कुछ दिनों तक सामने नहीं आया। वर्तमान असम के एकांकी नाटक आंदोलन में इन दोनों नाटकों का आदर्श एवं प्रभाव अधिक नहीं है, ऐसा लगता है। वास्तव में असम के एकांकी-क्षेत्र में भोला कटकी के "बिभ्राट" और घन शइकिया के "महासमर" आदि लघु-नाटकों द्वारा ही आलोड़न आया।

भोला कटकी के "बिभ्राट" एकांकी को सन् 1956 में अखिल भारतीय युवा उत्सव में प्रथम पुरस्कार मिला। यह सन् 1956 में "चित्रबन" में प्रकाशित हुआ था। तफज्जुल आली का "नेपाति केनेकै थाकों" (मनाये बिना कैसे रहूं), अतुल बरुआ का "छकुरि ब्रकुर एकुरि" (छः कोड़ी हृदयों की एक कोड़ी) आदि अन्य उल्लेखनीय एकांकी हैं। प्रवीण फुकन, फणी तालुकदार आदि पूर्णांग नाटक लिखने में प्रसिद्ध नाटककार भी बीच-बीच में दो एक एकांकी लिखते रहे हैं। आजकल हर वर्ष सार्वजनिक रूप से आयोजित होनेवाले कुछ नाटक-समारोहों में विशेष रूप से एकांकी मंचित होते हैं। पर उनमें से ज्यादातर पुस्तकाकार प्रकाशित नहीं हुए। कभी-कभी उनमे से दो-एक एकांकी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते हैं। और तो और भवेन शइकिया के "पुतला नाच" आदि जैसे एकांकी भी प्रकाशित रूप में नहीं मिलते। इसी कारण एकांकी नाटकों का कोई सुचारु संकलन प्रस्तुत कर पाने में कम परेशानी नहीं होती।

भोला कटकी के "बिभ्राट" एकांकी में "एबेलार नाट" या "चिरंतन" जैसा उच्च चिंतन या जीवन-दर्शन का प्रतिफलन न होने पर भी इसकी रचना भी व्यक्तिगत जीवन के सुख-दुख को लेकर ही हुई है। ग्रामीण पारिवारिक जीवन में बीच-बीच में दिखाई पड़ने वाले पति-पत्नी के मनोमालिन्य के आधार पर रचित यह एकांकी "हास्य-व्यंग्य" के वर्ग में होने पर भी इसे प्रहसन नहीं कहा जा सकता। दूसरी ओर अतुल बरुआ का "छकुरि ब्रकुर एकुरि" (1960 में छपा) ग्रामीण परिवेश में रचित प्रहसन है। तफज्जुल आली का "नेपाति केनेकै थाकों" योगेन बायन का "बेजर नाकत खरे खाले" आदि भी ग्रामीण परिवेश के झगड़े-विवाद आदि के आधार पर रचित लघु-नाटक हैं। इस तरह की गलतफहमी, झगड़े-टंटे और मेल-मिलाप आदि

विषय पर और भी कई एकांकी लिखे गये हैं। ये या तो प्रहसन हैं, या प्रहसन जैसी रचनाए हैं। कल्पना को आलोड़ित करने वाले या कुछ आधिक सार्थकता संपन्न एकाकियो की सख्या कम है। तफज्जुल आली का "हे युद्ध बिदाय", फणी तालुकदार का "छां" आदि इसके अपवाद हैं। प्रवीण फुकन का "चकरी", फणी शमी का "क'लाबजार" आदि व्यंग्यात्मक एकाकी हैं। इनकी सामाजिक सार्थकता न हो, ऐसी बात नहीं। अभिनय अगर अच्छा हो, तो ये दिलचस्प भी हैं। व्यंग्य और "लाल झंडा" उड़ाने वाली विप्लवी विचारधारा नाटकों की विषयवस्तु बने, इसमें कोई आपत्ति नहीं है, पर नाटकीय सामग्री को रूपायित कैसे किया जाता है, इसी पर बहुत कुछ निर्भर होता है। अति-नाटकीय उत्तेजना का मूल्य भी सामयिक और क्षणिक होता है। अतुल बरदलै ने दो परिवारों के बीच गलतफहमी के आधार पर "एखन दुवार लागे" (एक दरवाजा चाहिए) जैसा आकर्षक एकांकी लिखा है। सब कुछ नाटककार की क्षमता पर ही निर्भर होता है।

भवेन शइकिया सुप्रतिष्ठित कथाकार हैं। इनके एकांकियों में भी उद्भावनी शक्ति का परिचय मिलता है। इनका "पुतला नाच" जहां एक ओर रुपये-पैसे की लेन-देन वाले एक दफ्तर के कुछ कर्मचारियों की विश्वसनीयता की जांच करने पर आधारित है, दूसरी ओर अभावग्रस्त लोगों का मन प्रलोभन में पड़कर कैसे विचलित हो जाता है, इस पर भी प्रकाश डालता है।। सन् 1961 से लेकर यह कई बार मंचित हो चुका है। "बाओना" (बौना), "अवरोध" आदि और भी कई एकांकी शइकिया ने लिखे हैं। "अवरोध" एकांकी में राजनीतिक आदर्श के नाम पर चलनेवाले कुछ हठपूर्ण आंदोलनों का पर्दाफाश किया गया है। इसका उद्देश्य व्यंग्यात्मक है।

प्रतिष्ठित नाटककार सत्य प्रसाद बरुआ ने भी एकांकी के क्षेत्र में विचारपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की है। बरुआ की "शाश्वती" में उनके तीन एकांकी "शाश्वती" "दुपर निशा" और "भास्वती" समाविष्ट हैं। "शाश्वती" और "भास्वती" पति-पत्नी के मिलन की राह में आनेवाली समस्याओं पर रचित है। और "दुपर निशा" (आधी रात) की विषयवस्तु अपराध पर आधारित है। यह एकांकी प्रहसन-जैसा है, जबकि "शाश्वती" और "भास्वती" कुछ गंभीर और दुखांत हैं। बरुआ की भाषा में आवेश नहीं है, पर चूंकि पृष्ठभूमि समस्यामूलक है, अतः वे संवादों के जरिये समस्या के विभिन्न पहलुओं को तटस्थ रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। एकांकी-परंपरा का एक विशेष लक्षण है परीक्षण। "भास्वती" में नाटककार ने वही परीक्षण-प्रयोग करने की कोशिश की है। कथावस्तु एवं पृष्ठभूमि के निर्माण, इन दोनों क्षेत्रों में परीक्षण-प्रयोग करते हुए उन्होंने अपना विचार इस प्रकार से प्रकट किया है--"इस नाटक में एक मात्र 'लेखक' के सिवा और किसी भी चरित्र का सर्जन पारंपरिक रूप से नहीं किया गया है। अन्य नाटकीय पात्रों की भांति वे प्रवेश-प्रस्थान नहीं करते। 'लेखक' के मन में जब किसी की याद उभरती है, तो वह पात्र उसी समय उसके सामने आ जाता है। इस नाटक का असली अभिनय-स्थल है 'लेखक' का 'मन-मंच'। नाटककार का यह प्रयोग कुछ हद तक अति यथार्थवादी है।

हिमेंद्र कुमार बरठाकुर के एकांकी ''द्वीप'' की पृष्ठभूमि अद्‌भुत है और इसके जरिये सरकार एव समाज की जो आलोचना की गयी है वह कौशलपूर्ण है। इस गंभीर एकांकी का केंद्रीय चरित्र अर्ध-उन्माद, बुड्ढा, सर्वहारा एवं विद्रोह का प्रतीक होने के बावजूद मानवीय गुणों से सपन्न है। बरठाकुर की कृति में जाति के वर्तमान एवं भविष्य के बारे में विचारपूर्ण तत्व मिल जाते हैं, दूसरी ओर वह भाषण-वाजी के दोष से मुक्त है। बरठाकुर के नाटक ''बाघ'' में भी कौशलपूर्ण व्यंग्य निहित है। उनके एकांकी ''द्वीप'' को सफलतापूर्णक मंचित भी किया जा चुका है।

आकाशवाणी के जरिये हास्य-व्यग्यात्मक नाटकों की रचना एव प्रसारण कर दुर्गेश्वर बरठाकुर लोकप्रिय हो चुके हैं। उनका एकांकी ''दैनंदिन'' एक अभावग्रस्त परिवार की समस्या पर आधारित है। पर इसके तीनों पात्रों के आशावादी मानस और रगीली प्रवृत्ति ने इस एकांकी को आमोदपूर्ण बना दिया है। इस एकाकी में दैनंदिन जीवन का अभाव-बोध होने पर भी वैसे अभाव में पनपने वाला कोई जीवन दर्शन या राजनीतिक तथ्यप्रियता नहीं है।

प्रस्तुत संकलन में असमिया एकांकियो की विभिन्न शैलियों का आभास देनेवाले कतिपय एकांकी प्रस्तुत किये गये है। इनमें लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ का ''गदाधर राजा'' ऐतिहासिक विषयवस्तु के आधार पर रचित है, ऐसा कहा जा सकता है। दूसरी ओर यह बात प्रायः दिखायी पड़ती है कि असमिया कहानियों और एकाकियो मे आजकल ऐतिहासिक विषयवस्तु के प्रति उपेक्षा ही बरती जा रही है। जहां तक मुझे पता है, असम के वर्तमान नाटककार ऐतिहासिक सामग्रियों के आधार पर किसी उल्लेखनीय एकांकी की रचना कर नही सके हैं। गिरीश चौधुरी के ''आलेक जेण्डार-पुरु'', ''छाह जाहान'' (शाहजहां) आदि लघु-नाटक छात्र-छात्राओं के लिए रचित हैं और उनकी विषयवस्तु भी असम के इतिहास से नही ली गयी है।

कहानी की भांति एकांकी भी संक्षिप्तता की सर्जना है। पृष्ठभूमि, कथा-विन्यास पात्र, सवाद—सब में पर्याप्त मितव्यायिता की आवश्यकता होती है। ऐसे नाटकों में पात्रों की संख्या जितनी कम हो, उतना ही अच्छा होता है। पात्र, सवाद आदि की दृष्टि से भोला कटकी का ''बिभ्राट'' उल्लेखनीय है। अनिल चौधुरी के ''चिरंतन'' में बर्नार्ड शॉ के नाटको की भांति दो या तीन पात्र लंबे-लंबे संवादों के जरिये नाटक के सूत्र को रबर जैसे खींचते-बढ़ाते ले गये हैं। ऐसे लबे सवादो में अगर विचारात्मक आकर्षण न रहे तो नाटक के असफल होने की संभावना रहती है। कथा एवं कार्य के बीच समन्वय बनाये रखना एकाकी के क्षेत्र में बहुत अधिक आवश्यक होता है। असम में एकाकी के क्षेत्र में बहुत बड़ी संभावनाएं हैं। समय के साथ-साथ असमिया नाटककार एकांकियों की रचना मे आगे चल कर और अधिक मूल्यवान देन जुटाने में समर्थ होंगे।

नगाव नाट्य-समाज द्वारा प्रकाशित ''पियली फुकन'' (1948) सही माने में एकांकी नहीं है। यद्यपि इसमें अंक विभाजन नहीं है, फिर भी दृश्य ही अक का काम करते हैं। सन् 1830

में असम से अंग्रेजों को खदेड़ने का जो प्रयास किया गया था, उसी घटना के आधार पर रचित इस नाटक ने असम के नाटक-जगत में क्रांति लाने में अग्रणी भूमिका निभायी थी। स्वातंत्र्योन्मुख सामंत-वर्ग का नौजवान पियली फुकन अपने सहयोगियों के साथ मिलकर शिव सागर स्थित अंग्रेजों के बारूद-घर में आग लगाने के कारण पकड़े गये थे और अंत में उन्हें अपने प्राणों का बलिदान करना पड़ा। इसी प्रेरणादायक परंतु शोकपूर्ण घटना के नाटकीय प्रस्तुतिकरण, मुहावरेदार ओजस्वी संवाद, वीरोचित चरित्र-चित्रण आदि गुणों के कारण यह नाटक उल्लेखनीय है। इसी कारण ''पियली फुकन'' नाटक को भी इस संकलन में समाविष्ट किया गया है।

—प्रफुल्ल दत्त गोस्वामी

गदाधर राजा

लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ

पात्र

कमला	:	उम्र 18 साल	शिमलुगुरीया बरुआ की बेटिया
विमला	:	उम्र 16 साल	
गेधेला	:	एक ग्रामीण आदमी	
मंगला	:	शिमलुगुरीया बरुआ का घरेलू नौकर	

दृश्य

(शिमलुगुरीया[1] बरुआ के मकान का एक कमरा जिसमें करघा लगा हुआ है। कमला करघे पर मूगा[2] का एक रिहा[3] बुन रही है। बिमला पास बैठी चरखी लपेटन पर सूत लपेटने का प्रयास कर रही है, मगर लपेट न पाकर तंग हो, उफ्-उफ् करने लगती है।)

समय

आहोम शासन के ल'रा राजा[4] का जमाना। गदापाणि[5] के पलायन के बाद।

पहनावा

कमला और बिमला पाट (रेशम) का रिहा-मेखला पहने हुए है। सिर पर कलगीदार जूड़े। ललाट पर चंदन की लकीर और सुनहरी बिंदी।

गेधेला घुटने तक की धोती और और वास्कट पहने हुए है। कमर में तामोल-पान की थैली। कानों में मोटा चंपई कर्णफूल। दाढी साफ। चेहरे पर मूछें और मुंह में भरा तामोल! होंठों पर पान की लाली। हाथ में मोटे बास का डंडा। सिर पर चोटीनुमा जूड़ा और बाल लहरदार कटे हुए।

कमला : विमला, हाथ में लपेटन लिए भला तू यों उफ-आह क्या कर रही है? सूत क्यों नहीं लपेटती? आखिर क्या हो गया है तुझे!

विमला : मैं तो यही सोच रही हूं कि औरत के रूप में जन्म लेने की कोई जरूरत ही नहीं। न जाने किस पाप के कारण ईश्वर ने हमें औरत बनाकर भेजा है।

कमला : (मुस्कुराती हुई) यह भी अजीब मसखरी है। अरे, यह भी क्या कोई कहने की बात है? औरत न होती तू, तो भला कौन-सा हाथी-घोडा मारकर कमाल दिखाती? सुनूं तो जरा--

विमला : जरूर मार लेती। फिर हाथी-घोड़े मारने की तो बात ही क्या, उससे भी बडा कमाल दिखा देती। पहले तो उस पापी ल'रा राजा का सिर काट कर जंगली

---

1 शिमलुगुरीया बरुआ--शिमलु गुरी नामक जगह का प्रशासक।

2 मूगा--असमिया सुनहला रेशम

3 रिहा--असमिया बूटेदार चादर

4 ल'रा राजा--आहोम राजा चुनिक फा, कम उम्र में राजा बनने के कारण उसे ल'रा राजा या ''बच्चा राजा'' कहते हैं।

5. गदापाणि--ल'रा राजा का प्रतिद्वंद्वी राज कुमार, जो आगे चलकर राजा बना था।

कुत्तों के आगे डाल देती और उसकी खाल उतार कर नगाड़ा मढ़वा कर बजाती। उसके बाद ही कोई और बात करती।

कमला : ओ हो, हमारी बड़ी वीरांगना। अरी सूत लपेट, सूत! ऐसे पटा पट जबान न चला!

बिमला : जबान चलाने की बात नहीं, दीदी! सच कहती हूं--देखना, मेरी बात का सबूत तुम्हें जल्दी ही मिल जायेगा।

कमला : री बिमली। देख, मैं कहे देती हूं। तू यह सब अंट-संट बातें यों ही न बकती रह। पिताजी तो गदाधर राजा के पक्ष में रह कर चोरी-छिपे इधर-उधर चक्कर लगा, उनसे जो कुछ बन पड़ता है, काम करने में जुटे हुए हैं। पिताजी की हरकतों से उधर बूढ़ा गोहांइ[1] के मन में उन पर शक हो गया है। उसे जैसे ही कोई बहाना मिलेगा, तुरंत हम सब को जाल में फंसा कर पकड़ लेगा। अब तू कटे घाव पर नमक न छिड़क बहना, औरत है, बस औरत ही बनी रह!

बिमला : इसी से तो कहती हूं न! न जाने किस विधाता के अभिशाप के कारण हमे औरत बनकर जन्म लेना पड़ा है। मगर तुम सच-सच जान लो दीदी, मैं अब मेखला पहन कर घर में घुसी बैठी रहने वाली नहीं। सती जयमती की सजा का बदला जरूर लूंगी। जान हथेली पर लेकर।

कमला : जरा सुनूं तो, बदला तू किस तरह से लेगी?

बिमला : मर्द का बाना लेकर, हाथों में धनुष-बाण ले, गदाधर राजा के पक्ष में मैं पापी ल'रा राजा का वध करूंगी और राजा बनने योग्य गदाधर को राजपाट पर बिठा कर देश का कल्याण करूंगी।

कमला : खैर, हमारी बहना कैसी देशोद्धारिणी बनी है, जरा चेहरा तो देखूं!

बिमला : जरूर, जरूर, देख लो आज ही! पता नहीं, कल तक देख भी पाओगी या नहीं।

कमला : देख बिमला, मैं जानती हूं कि तू आसमान में उड़ान भरनेवाली लडकी है। मगर अभी तो पिताजी यहां हैं नहीं। तू कोई अंट-संट काम न कर बैठना, मेरी मुन्नी! मैं हाथ जोड़ती हूं।

बिमला : दीदी, अंट-संट काम नहीं, मैं तो गदाधर राजा के पक्ष में लड़ाई में जरूर उतरूंगी। डंके के चोट से! उनका जो भी काम मुझ से बन पड़ेगा, मैं जरूर करूंगी। पिताजी की राह ही मेरी भी राह है।

कमला : बिमली, सुन, पिताजी तो जाते समय कह गये थे न, गदाधर राजा भेस बदल कर इधर ही चक्कर लगा रहे हैं। हो सकता है कि वे हमारी तरफ आ निकलें!

---

1. राजा का मुख्य मंत्री

अगर सचमुच वे यहां आ जाते हैं, तो हमें उनका स्वागत-सत्कार भी अच्छी तरह से करना ही होगा। इसलिए तू जल्दबाजी में होश-हवास खोकर कोई काम न कर बैठना! तेल देखना है और तेल की धार देखनी है।

(मंगला आता है)

मंगला : मुन्नी मैया! न जाने कहां से यह देहाती आया है। आप लोगों से मिलना चाहता है। कोई चिट्ठी-विट्ठी लाया है शायद।

बिमला : (धीमी आवाज से) दीदी, होशियार हो जाओ! बस-बस, भेस बदले हुए गदाधर राजा ही इधर आ पहुंचे हैं। आज जहां तक हो सके उनका स्वागत-सत्कार अच्छी तरह से करना है। आज उन्हें बड़ी सावधानी से रखना है, जिसमे कोई त्रुटि भी न रहे और न किसी को पता ही चल पाये।

कमला : मंगला! वह आदमी देखने मे कैसा लगता है? कौन है वह?

मंगला : वह है कौन, भला यह बात मैं क्या बताऊं? हां, वह देखने में कैसा है, यह पूछती हो न? अरे, वह उल्लू जैसे चेहरेवाला है! बिखरे बाल, घुटने तक की धोती पहने! भला उस गंवार के चेहरे-मुहरे की बात क्या पूछती हो? मुन्नी मैया, आप लोग भी बड़ी भोली हो, उस लंबी-सी मूंछोंवाले, हमारी पतीली चाटने वाले, सियार को देखा था न आप लोगों ने? वह भी बिलकुल वैसा ही है।

बिमला : (कमला के कानों मे) बिलकुल ठीक कहा है, दीदी! बिलकुल सही है। भेस बदल कर गदाधर राजा ही आ पहुंचे है। कहो दीदी, आज हमारा भाग्य जगा है। अब और देर नहीं करनी चाहिए दीदी। चलो, उन्हें अंदर ले आयें!

कमला : (मंगला से) मंगला, जाकर, उसे यहां ले आओ! (मंगला जाता है) मुझे भी ऐसा ही लगता है, बिमला। वह गदाधर राजा ही है। राजा को बिठलाने के लिए कुर्सी ले आ। बेचारे राजा कितने पहाड़ों-जंगलों मे घूमते फिर रहे हैं। कितने भूखे-प्यासे होंगे! राजा को खिलाने के लिए अच्छे जलपान का भी इंतजाम कर!

(गेंधेला और मंगला का प्रवेश। कमला और बिमला सम्मान के साथ उठकर एक कुर्सी लगा देती हैं। गेंधेला कुर्सी पर बैठने में संकोच करता है।

बिमला : मंगला, तू जा! (मंगला चला जाता है) आप इस कुर्सी पर आराम से बैठिये स्वर्गदेव, हम अल्प-बुद्धि नारियां ठहरीं। हमारे गुण-दोषों पर ध्यान न दें।

गेंधेला : (हाथ जोड़कर) माताओ! मैं तो गंवार मजदूर हूं। आप सबके सामने इस कुर्सी पर बैठना उचित नहीं लगता। ईश्वर मुझे माफ करे! मै यही जमीन पर बैठता हूं।

(गेंधेला जमीन पर बैठ जाता है)

विमला : सर्वनाश! आप यह क्या कर रहे हैं स्वर्गदेव! आपको हम पहचान गयी हैं। हम आपकी बांदियां हैं। हमारे सामने आप जरा भी संशय न करें। हमारी गर्दन हमेशा आपके सामने हाजिर है। हमारे भैया अभी घूमने निकल गये हैं, थोड़ी ही देर में लौटेंगे। स्वर्गदेव! आप हमें और हमारे घरवालों को अपना सेवक ही समझें।

गेंधेला : (स्वगत) यह सब क्या हो रहा है? मैं यह कहां आ पहुंचा? ये सब क्या कर रही है? क्या यह शिमलुगुरीया बरुआ का मकान नहीं है? मैं यह किसके यहां आ गया? क्या मुझे चुड़ैल ने छू लिया है? (खुल कर) माताओ, यह तो शिमलुगुरीया बरुआ जी का मकान है न?

बिमला : जी हां, स्वर्गदेव!

गेंधेला : तो फिर तुम सब मुझ पर यह कौन-सा जादू का बाण मार रही हो? मुझे स्वर्गदेव बनाकर क्या मजाक उड़ना चाहती हो? अरे, मै तो हूं दुखीराम मेधी का लड़का गेंधेला बायन! स्वर्गदेव—फर्गदेव आदि कुछ नहीं।

कमला : (हाथ जोड़कर) स्वर्गदेव! आप हम पर जरा भी संदेह न करें। हम दोनों ही शिमलुगुरीया बरुआ की बेटियां हैं। हमारे भैया अभी आ जायेंगे। चूंकि स्वर्गदेव पर दुश्मनों की कड़ी नजर है, इसलिए उनसे बचाव के लिए आपका ऐसे भेस बदल कर चलना तो ठीक ही है। स्वर्गदेव! आप कृपया हमारे पिताजी का समाचार बतायें!

गेंधेला : शिमलुगुरीया बरुआ जी का समाचार मुझे सिर्फ इतना ही मालूम है कि कल राह में उनसे हमारी भेंट हो गयी थी और आप लोगों को देने के लिए उन्होंने यह चिट्ठी मुझे दी थी।

(गेंधेला अपनी धोती के फेंटे में चिट्ठी ढूंढ़ता है। मगर न पाकर जोर से रो पड़ता है।)

बिमला : स्वर्गदेव, चुप रहें, चुप रहें! चिट्ठी खो गयी तो खो जाने दें। आप मन में कोई सोच-विचार, दुख-कष्ट न करें। पिताजी को आप तो भला-चंगा ही देख आये हैं न?

गेंधेला : हा, देख तो आया ही हूं। अगर वे भले-चंगे न होते तो मुझे चिट्ठी कैसे देते? (सिसकता हुआ स्वगत) देखता हूं, इन चुड़ैलों ने बाण मारकर मेरे हाथ से चिट्ठी भी उड़ा दी। (खुल कर) मुन्नी मैया, तुम लोग चाहे जो भी हो, मगर मैं सच कह रहा हूं, मैं तो राजा-वाजा कुछ नहीं हूं। मैं गरीब-दुखिया, सीधा-सादा आदमी ठहरा। तुम लोग मेरा मजाक न उड़ाओ। (सिर पर हाथ रखकर) उफ्, मेरा तो सर चकरा रहा है।

कमला : बिमला! जा, स्वर्गदेव के लिए जल्दी से जलपान अच्छी तरह से सजाकर ले आ। पहाड़-जगल में चक्कर लगाते-लगाते स्वर्गदेव तंग हो गये हैं। पहले पंखा ला दे। मैं स्वर्गदेव को हवा कर दूं।

(बिमला दौड़ कर एक पंखा ले आती है। उसे कमला को थमाकर जलपान लाने दौड़ पड़ती है। कमला गेंधेला के सिर पर पंखा झलती है। कुछ क्षण बाद बिमला गुड़, पीठा गुरी[1] और गर्म दूध से भरा जलपान का बड़ा कटोरा ले आती है और गेंधेला के सामने रख देती है।)

बिमला : (हाथ जोड़कर) स्वर्गदेव! आप जमीन पर से उठिये। कुर्सी पर बैठकर जलपान कर, जरा स्वस्थ होइये।

गेंधेला : (स्वगत) पेट में चूहे तो दौड़ ही रहे हैं। बाद में चाहे जो हो, पहले यह जलपान तो कर लूं। चुड़ैलों की ओर ठठोली से तो देखता हूं, यह कहीं अच्छा है।

(गेंधेला कटोरे का जलपान सान कर ''गप्-गप्'' खाता है। पीठागुरी से सन कर उसकी मूंछें सफेद-सी हो जाती हैं।)

बिमला : देखती हो न, पीठागुरी भी स्वर्गदेव कैसे देहाती मजूरों जैसे ही खा रहे हैं। सचमुच देहाती जैसा वेश और रहन-सहन भी देहाती जैसा ही न हो, तो कैसे चले? चारों ओर जासूसों का जाल कैसा फैला हुआ है!

कमला : बिमला, तू लोटा भर पानी और हाथ धुलाने के लिए एक चरिया[2] ले आ। स्वर्गदेव अब हाथ-मुंह धोकर जरा आराम करें।

गेंधेला : नहीं, मुझे चरिया-वरिया नहीं चाहिए। मेरी सोने की चुड़ैलें! पोखरा किधर है, मुझे दिखला दो, जाकर हाथ-मुंह धो आऊं! कहावत है न, ''सात पुश्त में न रही गाय, चरिया लेकर दुहने जाय।'' मुझे ''चरिया'' की जरूरत नहीं, सोन जुही; मैं अपने इस तामोल-बंधे अंगोछे से ही हाथ-मुंह पोंछे लेता हू।

(अंगोछे से हाथ-मुंह पोंछता है)

कमला : बिमली! जा - जा, एक चरिया और लोटा भर पानी ले आ! स्वर्गदेव मुंह धो लें! (बिमला जाती है)

गेंधेला : अगर देना ही चाहती हो तो एक टुकड़ा तामोल दे दो! उसी से मुख-शुद्धि कर लूं। हालांकि मेरी थैली में भी तामोल-पान है।

---

1. पीठा गुरी—''बरा चावल'' (एक तरह का कोमल चावल) को कूटकर बनाया गया आटा, जिससे 'पीठा' आदि बनते हैं। उसे दूध आदि के साथ भी खाया जाता है।

2. चरिया—कटोरे जैसा धात का बना बर्तन।

कमला : री बिमला। तांबूल का बटा[1] भी लेती आना। मैं स्वर्गदेव के लिए पान लगा दूंगी। स्वर्गदेव! बुरा न मानें तो आपको एक गीत सुनाना चाहती हूं।

गेंधेला : स्वर्गदेव को गाना पसंद आये या न आये, पता नहीं, पर झुर्रियों वाले शरीर के इस गेंधेला बायन को तो जरूर अच्छा लगेगा। और हां, गाना ही चाहती हो तो हमारे गुरुदेव महापुरुष[2] का रचा हुआ एक बरगीत[3] ही सुना दो। कम से कम मेरे शरीर पर चढ़ा हुआ भूत उतर जाये। (कमला गाती है)

मेरो पिया बिन कैसे रहूगी, सजनी!
बहुत दिनों पर नहीं आवत, मेरो
निश दिन जागत, नींद नहीं आवत
पिय को संदेश कहीं नहीं पावे, मेरो।

गेंधेला : मुन्नी मैया की आवाज तो बड़ी मीठी है। और भला मीठी होगी क्यों नहीं? मगर शायद कोई बंगला गीत ही है न यह? मुझ महामूर्ख की तो समझ मे ही नहीं आया गीत मे संदेश यानी हमारे "सांदह"[4] की बात ही कही गयी है न? मुन्नी मैया! मगर मेरे पेट में तो पीठागुरी भरी पड़ी है। तिस पर "सांदह" भी कटोरी भर पड़ जाय, तो भला मैं संभाल कैसे पाऊंगा! हे मेरे ईश्वर! (अपने शरीर को उंगली से दिखाकर) इस कंगले को भी दो-एक "बरगीत" गाना न आता हो, ऐसी बात नहीं। अब भी गांव के दस-पांच लोग पर्व-त्यौहार, शादी-ब्याह के अवसर पर इस गेंधेला बायन को बुलाकर अनाज-सीधा दिया करते हैं।

(गेंधेला स्वर-साध कर माधवदेव रचित बरगीत गाता है)

राम गोसांई, करोहो गोहारि[5]!
रहु हृदि-पंकज ठाम[6] हामारी!
माया छांड़ि[7] भकति करु दाना
करु तुवा चरण-पंकज रस पाना।

---

1 तामोल बटा–पान-सुपारी देने का पात्र (खुला पनबट्टा)
2. महापुरुष–असम के महापुरुष शकर देव और महापुरुष माधव देव।
3. बरगीत–शंकरदेव माधव देव विरचित भजन जैसे गीत।
4. सांदह–बरा चावल को भूनकर बनाया गया आटा।
5. गोहारि–पुकार, गुहार लगाना।
6. ठाम–स्थान।
7. छांडि–छोड़कर।

कहय माधव, दास प्रभु तेरा
जहां-जहा चरण ताहां सिर मेरा।

(बाहर शोरगुल होता है)

कमला : गजब हो गया, गजब हो गया! लगता है, यहां स्वर्गदेव के आने का पता किसी तरह से चल जाने के कारण ल'रा राजा के लोग उन्हें पकड़ने के लिए आ ही पहुंचे हैं।

(बिमला बेतहाशा दौड़ती हुई आती है)

बिमला : अब क्या होगा दीदी! हम करें क्या? कहां जायें? स्वर्गदेव को कहां छिपायें?

कमला : स्वर्गदेव, उठिये, जल्दी उठिये। हमारे इस करघे के पाटे के तले ही छिप जायें।

गेंधेला : मुन्नी मैया! आप लोग भला इतना परेशान क्यो हो रही हैं? डर के मारे ऐसे कांप क्यों रही हैं? राजा के सिपाही अगर आ रहे हैं तो क्या हुआ? आने दो उन्हें! वे भला मेरा क्या कर लेंगे? मैंने तो कहीं, किसी की कोई गड़बड़ी नहीं की है। मैं तो सिर्फ गुरुजन के गीत का एक पद गा रहा था। उसमें भला किसका कौन-सा अपराध हो गया? मै कहे देता हूं, इस करघे के पाटे के तले मैं नहीं घुस सकता! वहां चीटियों के झुंडों से अपने को कटवा कर मरना मैं पसंद नही करता। तुम लोग भले ही इसे पसंद करो या न करो!

बिमला : स्वर्गदेव! हमें मालूम है, आप बड़े हिम्मतवाले हैं। फिर भी हम दोनो अबला बहनें हाथ जोड़कर आप से कह रही है, आप अभी-अभी इस करघे के पाटे के नीचे घुसकर छिप जाये। जल्दी छिप जाये, देर न करे।

(बिमला गेंधेला का हाथ पकड़कर खींचती है)

गेंधेला : भला यह कैसा उपद्रव है? मुझे आज प्रेत-पिशाचों ने पकड़ लिया है। मैं ठहरा बैल, दूसरों की चिट्ठी ढोने की मुझे क्या पड़ी थी? हे मेरे भगवान! आज तुमने मुझे किस मुसीबत मे डाल दिया?

(बड़ी अनिच्छा से करघे के पाटे के नीचे घुसकर छिप जाता है)

कमला : जा, बिमला, दौड़कर मेरा वह एंडी का बड़ा कपड़ा उठा ला, उसे ही करघे पर फैलाकर स्वर्गदेव को ढक दू।

(बिमला दौड़कर एंडी का कपड़ा लाती है। कमला उसे करघे पर डालकर गेंधेला को ढंकती है)

गेंधेला : (करघे के नीचे से) मुन्नी मैया, अब दम घुटने से मैं तो मर ही जाऊंगा। इस तरह दम घोट कर मुझे न मारो। मेरी सौगंध! तुम्हें मेरी हत्या लगेगी। ओ, कौन हो, कहां हो? आ जाओ! मुझे आज ये चुड़ैलें दम घोंट कर मारे डाल रही हैं।

बिमला : स्वर्गदेव, चुप रहिये, चुप रहिये! हम आपसे हाथ जोड़कर विनती करती हैं। (मगला

दौड़ता आता है) अरे मंगला, बाहर कितने लोग आये हैं रे? हमारे मकान को कितने सिपाहियों ने घेर लिया है?

मंगला : सिपाही? मकान घेर लिया है, किसका? मुन्नी मैया! उस गंवार को घर में घुसाये रखकर आप लोग न जाने कौन-सी ठठोली कर रही हैं! मगर यह सब करना अच्छा नहीं। भैया अगर लौटकर सुनेंगे, तो हम सबको गालियां देंगे। बुरा-भला कहेंगे। मैं कहता हूं...

कमला : तो फिर बाहर वह शोर कैसा हो रहा है?

मंगला : वह रातिया नाम का चोर है न! वह अभी-अभी, दिन-दहाड़े तोलन शइकिया के घर में घुस गया था और पानी पीने का लोटा उठाकर भागा जा रहा था। उसे पकड़ने के लिए गांव के लोग शोर मचाते दौड़ रहे थे। वह पकड़ा गया और लोगों ने मार-मार कर उसका भुर्ता बना दिया।

गेंधेला : (करघे के पाटे के अंदर से सिर निकाल कर) मुन्नी मैया, मैं तो यहां बिलकुल पिस गया। अब यहां घुसा नहीं रह सकता मैं। तुम लोग भले ही मुझे मारो या काटो!

(करघे के पाटे से निकल आना चाहता है)

मंगला : अबे कमबख्त। निकल आ! मुन्नी मैया! भला आप लोग उस मजूरे गंवार को इस तरह से परेशान क्यों कर रही हैं?

गेंधेला : भला मैं अब क्या बताऊं? मुझे इन लोगों ने कितना परेशान किया है, क्या तुम सुनोगे भैया? ये दोनों तभी से जो कुछ नहीं करना चाहिए, वही सब किये जा रही हैं। मुझे राजा बनाया है, कुर्सी पर बिठाया है, हालांकि जलपान भर-पेट खिलाया है। अब झूठ क्या बोलूं भैया, इन सारी ठिठोलियों में यही ठठोली सबसे बढ़िया रही।

मंगला : (पीठागुरी से सनी गेंधेला की सफेद मूंछों को देखकर हंसता हुआ) वही ठिठोली सबसे बढ़िया रही, यह तो सही है, अरे उन सबने तो पीठागुरी में सान कर तेरी मूंछों को भी और बढ़िया बना रखा है, पट्ठे!

गेंधेला : मुन्नी मैया! यह रही वह चिट्ठी! (हाथ फैलाकर बिमला को देते हुए) मैंने इसे धोती की गांठ में बांयीं ओर खोंस रखा था, और दायीं ओर खोज कर परेशान हो रहा था।

(बिमला पत्र पढती है)

कल्याणी,

मैं अपने महाराज गदाधर स्वर्गदेव के साथ हूं। एक दो दिन के अंदर ही हम गुवाहाटी की ओर जाने वाले हैं। वहां बरफुकन से मदद मांगी जायेगी। अगर मदद मिल जाय, तो तुम लोग हमें जल्दी ही वहां देखोगी। अब सब कुछ ईश्वर के हाथ है। तुम लोग होशियारी से रहना। इस पत्रवाहक को एक इकन्नी देकर विदा करना!

तुम लोगों का शुभाकांक्षी

पिता

(पत्र पढ़कर कमला-बिमला एक-दूसरे के चेहरे की ओर देखती हैं और शर्म के मारे लाल हो जाती हैं।)

–पटाक्षेप–

चिरंतन

अनिल चौधुरी

पात्र

अंजन

प्रकाश

नेओग

दीपक

जेउती

(पहला दृश्य)

अंजन का घर। किराये का मकान। समय—अपराह्न। पर्दा खुलने पर अंजन के घर का अत्यंत साधारण रूप से सजा एक कमरा दिखाई पड़ता है। मेहमानों आदि को इसी कमरे में बिठलाया जाता है। असबाब् आदि हालांकि गरीबी के सूचक हैं, पर कमरे में सामान की सजावट सुरुचिपूर्ण है। इस कमरे के पिछवाडे एक और कमरा दिखाई पड़ता है। एक ओर बरामदा है। बीच का दरवाजा खुला रहने के कारण दूसरे कमरे का काफी हिस्सा दिखाई पड़ता है। एक बिस्तर, एक सहेजी हुई मसहरी, एक अलगनी पर दो-एक कपडे, दो-तीन पुराने ट्रंक।

घर में तीन कमरे हैं। सामने के कमरे के बायीं ओर किनारे पर (दर्शकों की बायीं ओर) एक और कमरा है, जिस कमरे के दरवाजे के मुहाने के सिवा और कुछ दिखाई नहीं पड़ता। अभिनय के साथ-साथ क्रमशः अपराह्न से शाम, शाम से रात होगी (इसे प्रकाश नियंत्रण के जरिये प्रदर्शित किया जा सकेगा।)।

दूसरे कमरे के पिछवाड़े के दरवाजे और खिड़की से दिन ढले सूरज की आखिरी आभा आकर फर्श पर पड़ रही है। दिखाई पडता है कि जेउती बिस्तर पर सो रही है। दूर कहीं से तैरती हुई आती वायलिन की हल्की-हल्की करुण लय सुनायी पडती है। पृष्ठभूमि के इस संगीत की धुन सारे वातावरण को गंभीर बना रही है। कुछ क्षण में अंजन बायीं ओर के कमरे से निकलकर धीरे-धीरे चुपचाप पहले कमरे में आता है। एक-एक कदम बढाता हुआ जेउती की ओर जाता है। अंजन अस्वस्थ है। बाल उलझे-उलझे। जेउती के सिरहाने आकर कुछ देर तन्मय-सा होकर उसके चेहरे की ओर देखता रहता है। नींद में ही जेउती अपने सिरहाने से तकिये को खींचकर अपनी छाती से लगा लेती है। यह देख अंजन कुछ चौंक-सा पड़ता है, डर कर कदम-भर पीछे हट जाता है। नेपथ्य में गूंजती वायलिन की धुन तेज होकर भयावह रूप लेती है। अंजन लंबी सांस लेता है। धीरे-धीरे आकर पहले कमरे के बरामदे की ओर के दरवाजे के सामने खडा हो जाता है। अंजन के शरीर के एक हिस्से से उस ओर बाहर का एक हिस्सा दिखाई पड़ता है। नींद में ही जेउती "उह" "आह" कर तडप उठती है। अंजन चौंककर फिर जेउती के पास आ जाता है। जेउती के सिरहाने खड़े होकर उसके कपाल पर हाथ रख पुकारना चाहता है, पर अचानक रुक जाता है। तभी वायलिन की वह तेज धुन बीच मे ही रुक जाती है। कहीं जेउती की नींद टूट न जाय, इस डर से अंजन उसे पुकारता नहीं। पर कुछ क्षण उधेड-बुन में पडा रहने के बाद जेउती के कपाल के पास अपना मुंह ले जाकर एकटक उसे बड़ी विकलता से देखता रहता है। जेउती नींद मे ही कुछ बडबड़ाने लगती है।

एक लंबी सास लेकर अंजन जेउती के चेहरे के पास से धीरे-धीरे अपना मुंह हटा लेता है। इस बार जेउती अचानक एक विकट चीख मारकर उठ बैठती है। लगभग पगली-जैसी इधर-उधर देखती है, डर के मारे कांपती हुई कहती है–

जेउती : (अंजन को देखते ही व्याकुलता से उसे बाहों में भर लेती है और उसकी छाती पर सिर रखकर कहती है)--अंजन!

अंजन : जेउती (लगभग जबरन उसे हटा कर अंजन पहले कमरे में आ जाता है।)

जेउती : अंजन, (विकलता से अंजन का अनुसरण करती हुई) तुम जाओ मत! मेरा—मेरा—(अंजन का हाथ पकड़ लेती है। व्याकुलता का भाव उसके हृदय को कंपा-सा देता है।)

अंजन : डाक्टर कहता है, मुझे टी.बी. हुई है। मेरी जान, तुम मेरे इतने करीब न आओ।

जेउती : अगर मेरा सपना सच हो?

अंजन : कौन-सा सपना, जेउती? (हंसने की कोशिश करता हुआ) रात भर मेरी रखवाली कर अब यह शाम को सोयी हो। गहरी नींद तो आयी नही, इसीलिए सपना दिखाई पड़ा होगा। फिर भला वह सपना सच कैसे हो सकता है, जेउती?

जेउती : तुम्हे तो सब कुछ पता है, फिर भी प्रकाश को तुमने किसलिए बुलवा भेजा है?

अंजन : (पहले कोई जवाब दिये बगैर जेउती के पास से हट जाता है, उसके बाद मानों अपने-आपसे कहता है)—मैंने प्रकाश को किसलिए बुलवा भेजा है—प्रकाश को?

जेउती : अंजन!

अंजन : आज नौ सालों से तुम्हारे साथ रहकर संसार चला रहा हू। इन नौ सालों मे कभी प्रकाश के साथ कोई संपर्क नहीं रखा है। तिस पर भी, आज खुद ही मैंने प्रकाश को किसलिए बुलवा भेजा है? -- किसलिए?

जेउती : (पास आकर) अंजन!

अजन : सुनना चाहती हो जेउती, प्रकाश को मैंने किसलिए बुलवा भेजा है? सुनोगी?

जेउती : अंजन!

अंजन : मृत्यु के दरवाजे पर खड़ा होकर मै अव समझ रहा हूं—हां, जेउती, मै समझ रहा हूं, मुझे अपने से प्यार है।

जेउती : अंजन!

अंजन : मुझी पर तीन जिंदगियो का भविष्य निर्भर है। जेउती—मेरे मरने से नहीं चलेगा! मुझे चंगा होना है। इलाज करवाना है। इसीलिए प्रकाश को (आवेश के कारण खांसी आ जाती है। अंजन की खांसी के बीच ही जेउती विकलता से कहती है)

जेउती : तुम चंगे हो जाओगे--चंगे हो जाओगे अंजन!

अजन : डाक्टर का कहना है कि अत्यधिक परिश्रम करने एवं उचित भोजन के अभाव

के कारण ही मुझे टी.बी. हुई है। परंतु किसलिए--मेरी ऐसी हालत किसलिए हुई? मुझे इस किसलिए का जवाब चाहिए, जेउती!

जेउती : मुझे माफ कर दो अंजन! यह शायद मेरी कमजोरी है। हो सकता है कि उसी कमजोरी के कारण मैं चीख पड़ी थी, मगर फिर भी वह बड़ा अजीब-सा सपना था।

अंजन : जेउती!

जेउती : जरा सपने के जरिये हम में से हर आदमी के अवचेतन मानस का उत्कट प्रकटीकरण दिखाई पड़ा था। लगता है, इस बार प्रकाश ने अपनी स्वार्थ-सिद्धि हेतु--

अंजन : प्रकाश ने!

जेउती : हां, प्रकाश ने --वहां भी पहुच कर उसने रुकावट डाल दी।

अंजन : हूं, उसके बाद फिर क्या हुआ जेउती? बताओ उसके बाद--

जेउती : अंजन, मैं तो नहीं--नहीं--अंजन, मुझसे अब न पूछो, उस डरावने सपने के बारे में मैं नहीं बता सकती। वह तो मेरा... नहीं, नहीं, अंजन, मुझे तुम माफ कर दो!

(अचानक आवेश में, दोनों हाथों से अपना चेहरा ढककर, दौड़कर कमरे से निकल जाती है। जेउती के जाने की दिशा में कुछ देर देखता हुआ अंजन कहता है--)

अंजन : झूठ -- झूठ, सब कुछ झूठ है। तुम स्वार्थी हो! उसी स्वार्थ-भावना ने तुम्हारी विचार-धारा को विकृत कर डाला है। और उसी विकृत विचार-धारा से ही तुम्हारे इस सपने की पैदाइश हुई है। (खांसता है) अगर तुम स्वार्थी न होती तो जिंदा रहने के लिए मैं जो कोशिश कर रहा हूं, उससे आतंकित होकर ऐसा सपना नहीं देखतीं। मैंने तो कोई अन्याय नहीं किया, मैं...मैं.. (जोर की खांसी आ जाती है--खांसते-खांसते वह थक-सा जाता है। तभी 'मां-मां' पुकारता हुआ दीप आ जाता है। आठ साल का लड़का। हाथ में एक आवेदन-पत्र लिये हुए है।)

दीप : मां - मां (पिता को देखकर) पिताजी, पि-ता-जी!

अंजन : (प्रकृतिस्थ होकर क्षण भर दीप की ओर देखता हुआ) हूं, नहीं, मुझे कुछ भी नहीं हुआ है। तू जा यहां से! (दीप अचरज में पड़ जाता है। इधर-उधर लाचार सा नजर डाल, एक-दो कदम बढ़ाता हुआ अंदर जाना चाहता है।)

अंजन : दीप!

(दीप ठहर जाता है--पिता की ओर चुपचाप देखता रहता है। अंजन, दीप के पास आकर कहता है--)

अंजन : वह क्या है?

(जेउती गंभीर भाव से आती है। वेशभूषा पहले जैसी ही है।)

जेउती : दीप, इधर आ।

दीप : (पास जाकर एक बार पिता की ओर देखता हुआ डरता-सा कहता है) मां, यह एक रुपया दिया है। और यह रहा आवेदन-पत्र। उन्होंने नहीं लिया, कहा कि--

जेउती : (रोकती हुई) अंदर आ जा!
(रुपया लेती है और दीप को पकड़ कर अंदर ले जाना चाहती है)

अंजन : जेउती! यह आवेदन-पत्र किसलिए है?

जेउती : भला यह जानकर क्या फायदा होगा?

अंजन : दीप!
(दीप भौंचक-सा रह जाता है)

जेउती : दीप, मैं उस कमरे में हूं, तू वहीं आ।
(जेउती चली जाती है।)

दीप : पिताजी, क्या मां गुस्से में है? लेकिन मैंने तो सचमुच झूठ नहीं कहा! आप विश्वास करें। मैंने रमेन के पिताजी को दिया था।

अंजन : (प्यार से हाथ फेरते हुए) क्या दिया था तूने दीप?

दीप : मां का दिया हुआ यह आवेदन-पत्र।

अंजन : (आवेदन-पत्र पर नजर डालकर) हूं, रमेन के पिताजी ने क्या कहा?

दीप : कहा -- अभी उनके दफ्तर में औरत के लिए कोई काम खाली नहीं है। कहा है बुरा न मानें।

अंजन : और वह पैसा?

दीप : वह रमेन की मां ने दिया है। बुलु की फ्राक की सिलाई के लिए। पिताजी, क्या आपको मालूम नहीं कि मां तो हमेशा फ्राक सीकर पैसे लेती है। हम बहुत ही गरीब हैं, हैं न पिताजी?

अंजन : दीप! मेरे प्यारे मुन्ने, तू अब अंदर जा।

दीप : पिताजी, लोग कहते हैं, आपको कोई बुरी बीमारी हुई है। मां की स्कूल की नौकरी भी सुना है, इसीलिए चली गयी है?

अंजन : यह किसने कहा? झूठी बात है।
(बीमारी की बात कहते हुए अंजन मानों खुद ही अपने अनजाने में कुछ उत्तेजित-सा हो जाता है।)

दीप : हम भी तो कहते हैं, झूठी बात है। मगर वह रमेन कहता है, आपको कोई बड़ी बुरी बीमारी हुई है। वह बीमारी आपसे चलकर हमें भी हो जायेगी।

अंजन : (चीखता-सा) झूठी बात है, झूठी बात! रमेन ने ये बातें जरूर उसके मा-बाप

से सुनी होंगी। वे लोग झूठी बातें—(अचानक खासी उठ जाती है, जिससे बात कह नहीं पाता।)

दीप : (अंजन की खांसी के बीच ही डर से चीखकर कहता है)--पिताजी! पिताजी!!

अंजन : (दीप की ओर आखे तरेर कर पूछता है) रमेन को यह कैसे पता चला? (फिर खासने लगता है।)

दीप (रुआसा होकर) पिताजी, आप नाराज हो गये हैं। मैंने तो नही बताया था!

अजन . (प्रकृतिस्थ होने का प्रयास करता हुआ) हूं, नही, नहीं, बेटे। मैं तुझ पर नाराज नही हो रहा हूं। तू अदर जा। सचमुच मुझे बड़ी बुरी बीमारी हो गयी है। इसीलिए तो तुझे मैंने अपने कमरे में जाने से मना किया था। मां से भी कह दिया है कि वह भी मेरे पास न आवे। जा, तू चला जा।

(दीप को पकड़ कर, उसे धक्के-सा देता है। दीप चला जाता है।)

अंजन (अपने शरीर पर एक बार नजर डालकर कहता है)--बीमारी बुरी है-- मैं मर जाऊंगा—मैं मर जाऊंगा। नहीं - नही (अचानक कुछ सोचकर पुकारता है।) दीप - दीप --

(दीप फिर आ जाता है। दीप के एक हाथ को पकड़ कर मच के किनारे ले जाता है और धीमी आवाज मे कहता है)-- वे लोग तुझसे और क्या-क्या कह रहे थे?

दीप : (कुछ विमूढ़-सा हो जाता है। फिर कहता है)-- रमेन और बुनू ने साथ खेलने से मुझे मना कर दिया है। मैं अगर उनके साथ खेलूंगा तो उनके मा-बाप उन पर नाराज होंगे।

अजन (आवेश मे पुनः चीख उठता है--)क्यों, किसलिए नाराज होंगे? किसलिए खेलने से मना करेंगे?--किसलिए? तू बताता क्यों नही? (खांसता है। आवेश मे दीप को झकझोर देता है।)

दीप (डर के मारे चीख पड़ता है) --पिताजी।

(जेउती दौड़ती हुई आती है।)

जेउती : दीप!

दीप : मां -- (दौड़ता हुआ जाकर मा की छाती से लग जाता है। जेउती को देखकर अंजन दीप को छोड़ विमूढ़-सा खड़ा रहता है। उसकी नजरों में सूनापन छा जाता है-- जेउती दीप को अपनी छाती से लगाकर चाहती है कि प्यार करे, पर अचानक फूट फूट कर रो पड़ती है। दूसरे ही क्षण अपने को संयत कर दीप से कहती है--)

जेउती : दीप, चल अंदर (जाना चाहती है)

अंजन . जेउती!

जेउती : दीप, तू अंदर जा। मैं भी आ रही हूं।
(दीप चला जाता है। दीप के जाने के बाद जेउती मुड़कर अंजन की ओर देखती है। रुलाई के बदले उसके चेहरे पर कठोरता का भाव जाग उठता है।)

अंजन : प्रकाश को बुलवा कर मैंने कोई बुरा काम नहीं किया। इंसान के गुनाहों को भूल कर उसे अपने नजदीक ले आना कोई अन्याय नहीं हो सकता।

जेउती : अंजन! जिंदगी की उपेक्षा कर अगर तुम अन्याय को शह न देते, तो शायद रोना मुझे ही पड़ता, मगर उस रुलाई में होती....

अंजन : (जेउती की बात पूरी होने के पहले ही चीख कर--) तुम स्वार्थी हो!

जेउती : जी हां, मैं स्वार्थी हूं।

अंजन : हां, और तुम कमजोर हो, भावुक हो, सेंटिमेंटल।

जेउती : भाव-प्रवणता बड़ी पवित्र अनुभूति है अंजन! जिंदा रहने के मोह में तुम उस बात को भूल चुके हो। तुम आशीर्वाद दो कि मैं अपनी इस भाव-प्रवणता को संजोये रखकर जिंदगी की लड़ाई में जूझ सकूं, जीत सकूं।

अंजन : रहने दो, तुम्हारे नाटकीय संवाद मैं सुनना नहीं चाहता। सिर्फ इतना ही समझ लो, मैंने कोई अन्याय नहीं किया। आज भले ही न हो, कभी प्रकाश मेरा दोस्त था। अतीत के उसी दावे पर आज अगर मैं उससे कुछ मदद लेता हूं, तो वह कोई अन्याय नहीं है। मैं उसे उधार मान कर भी...

जेउती : हृदय के विचार में युक्ति-तर्क से मुक्ति नहीं मिलती अंजन! तुम्हें तो प्रकाश के बारे में सब कुछ अच्छी तरह पता है।

अंजन : हां, हां, पता है, सब कुछ पता है।
(अचानक ठहर कर मानो हताश-सा होकर धीरे-धीरे कहता है)--हूं, पता होने पर भी क्या होता है? समाज नीति-कथाएं रचता जरूर है पर उन्हें मान कर चलने का कोई उपाय कहां देता है। बताओ तो, मेरे लिए इतनी दौड़-धूप करने के बावजूद तुम्हें कोई "सीट" क्यों नहीं मिल सकी? तुम्हारी शिक्षा और काम करने की सामर्थ्य के बावजूद, क्यों तुम्हें दो जून भरपेट भोजन नहीं मिल पाता? अधिक परिश्रम और आवश्यकता के अनुसार आहार न मिल पाने के कारण मुझे बीमारी हो गयी—बता सकती हो क्यों?
(फिर आवेश में आ जाता है।)
मगर जिंदा रहने के लिए भी तो अन्यायपूर्ण "बैकिंग" की जरूरत होती है? नीति-कथा क्या उसके बाद भी सही है?

जेउती : तुममें बदलाव आ गया है। अनीति को रोकने के लिए भी तो नीति की जरूरत होती है। जिंदा रहने के मोह में पड़कर तुम उस सत्य को भूल चुके हो!

अंजन : हां, हां मुझमें बदलाव आ गया है। यह दुनिया ही बदलने वाली है।

जेउती : मगर मेरा आज का यह विश्वास तो तुम्हारी ही देन है अंजन!

अंजन : उस बात को याद करने की आज कोई जरूरत नहीं।

जेउती : यह तो मेरी ही बदकिस्मती है।

अंजन : (जेउती के पास जाकर क्षण भर उसके चेहरे की ओर देखता हुआ कहता है–) जेउती, क्या तुम्हीं मेरी ब्याहता पत्नी नहीं हो? फिर भी तुम आज मेरी मौत की कामना करती हो?

जेउती : अंजन! अंजन! तुम! तो यही सही! (थकी हुई-सी कहती है)--ठीक है, अंजन, मुझसे अपराध हो गया है। मैं माफी चाहती हूं। तुम–हां, तुम जो भी अच्छा समझो, करो–मैं और किसी बात में रुकावट नहीं डालूंगी! परंतु अंजन, मेरा अनुरोध है, अगर प्रकाश आये, तो मुझे सामने न बुलाना!

अंजन : क्यों भला उसके सामने आने पर क्या होगा? सुंदर ढंग से हंस-बोल कर बातें करना; और दूरी भी बनाये रखना। हमारा तो काम भर हो जाना चाहिए। बस!

जेउती : ओ, ऐसी बात? अंजन, जिसे जिंदगी से प्यार होता है, क्या उसकी भावना का रूप ऐसा हो सकता है? यह तुम्हारी जिंदगी से प्यार की भावना है या उससे बिलकुल उलटी प्रवृत्ति है? बताओ अंजन मुझे आज तुम्हें यह बताना ही होगा। (अंजन की बांह पकड़कर आवेश से झकझोर देती है। अंजन झटका देकर अपने को छुड़ा लेता है।)

अंजन : छोड़ो - छोड़ो, मुझे तुम्हारी यह सब "हाई फिलासफी" पसंद नहीं। (झट से चला जाना चाहता है।)

जेउती : अंजन, जा कहां रहे हो?

अंजन : डाक्टर के यहां!

जेउती : तुम! क्या पैदल जाओगे?

अंजन : मेरे पास पैसे नहीं, मैं दरिद्र हूं, क्या यह बात फिर नये सिरे से बतानी पड़ेगी?

जेउती : (अंजन बातों से जो चोट करना चाहता है उसे वह सामान्य रूप से ही पचा जाना चाहती है। अंजन की राह रोक कर विनय के स्वर में कहती है) भला तुम्हें जाने की क्या जरूरत है! हर बार की तरह मैं ही चली जाऊंगी!

अंजन : हटो-हटो। यह सब अच्छा नहीं लगता। जब दुनिया में मैं अकेला हूं तो अपने काम खुद ही करने पड़ेंगे। (लगभग जबरदस्ती निकल जाता है। यह कहता जाता है--)हां, जो चंद दिनो जिंदा हूं, अपने काम खुद को ही करने पड़ेंगे।

(जेउती कुछ क्षण स्तब्ध-सी रह जाती है। ''हूंह'' कहकर अनजाने ही एक लंबी सांस लेती है। उसके बाद अचानक कोई बात याद आ जाने पर परेशान हो जाती है। पुकारती है)--

जेउती : दीप! दीप! (दीप आता है)

दीप : क्या है मां?

जेउती : दीप, मेरे बेटे, जा, जल्दी दौड़कर जा! राह में तेरे पिताजी मिलेंगे। यह रुपया देकर उनसे कहना--मा ने आपको रिक्शे से जाने को कहा है। सौगंध दी है। जा, जल्दी जा, बेटे!

(आंचल से रुपया निकाल कर दीप के हाथ में देकर अर्धांग्ना से उसे आगे बढ़ा देती है। दीप के जाने के बाद लौट कर क्षण भर निश्चल-सी बिस्तर के पास खड़ी रह जाती है। अपने को जहां तक हो सके संयमित करने का प्रयास करती है। लेकिन कर नहीं पाती। बिस्तर पर सिर रखकर फूट-फूट कर रोने लगती है। उसकी रुलाई मानों रुकने वाली नहीं। कुछ समय यूं ही निकल जाता है। सिसकी की आवाज सुनायी पड़ती है। उसका समूचा शरीर कांप रहा है।)

दीप : (बाहर से पुकारता हुआ धीरे-धीरे आता है) मा... मा...!

(जेउती दीप की आवाज सुनकर तुरंत उठ पड़ती है। दीप कहीं देख न ले, इस विचार से उसकी ओर से मुंह मोड़कर अपने आंसू पोंछती है। तभी दीप आ जाता है।)

जेउती : (संयत होने का प्रयास करती हुई) आं, तूने उन्हें दे दिया है न दीप! रुपया दे दिया है न?

दीप : दिया था मां, लेकिन पिताजी ने लिया नहीं।

जेउती : लिया नहीं?

दीप : मुझे डांट कर वहां से भगा दिया। यह है .

(वह रुपया लौटा देता है। जेउती ले लेती है। जेउती फिर अनमनी सी हो जाती है। दीप अंदर जाने के लिए दुविधा में आगे बढ़ता है, पर तुरंत लौट कर डरता-सा कहता है)--

दीप : मा!

जेउती : (मानो सोते से जग पड़ी हो)-- हूं? क्या है?

दीप : छह पैसे दोगी क्या? बाहर दरवाजे के पास वह गन्ने का रस बेच रहा है। लाऊंगा!

जेउती : हूं-- यह ले। (वही रुपया दे देती है। दीप खुश होकर गिलास लाने के लिए अंदर दौड़ जाता है। जेउती मौन खड़ी रह जाती है। दीप अंदर से गिलास लाकर मां की बगल से बाहर निकल जाता है। अचानक कोई बात जेउती के ध्यान में

आ जाती है। वह अधीर होकर दरवाजे के पास जाकर पुकारती है)—दीप! दीप!' (दीप आ जाता है। जेउती उसके हाथ से झपट कर गिलास ले लेती है।)—यह तेरे पिताजी का गिलास है। तू कोई दूसरा ले ले।

(कह कर जेउती खुद अंदर जाकर दूसरा गिलास दीप को ला देती है। गिलास लेकर दीप फिर चल पडता है। अचानक कुछ सोचकर रुक-सा जाता है। क्षण भर सोच कर मा के पास आकर धीरे-धीरे कहता है)

दीप : मा, भला पिताजी को कौन-सी बीमारी हुई है? क्या पिताजी के गिलास में पीने पर मुझे भी बीमारी हो जावेगी?

जेउती : (तुरन्त दीप के मुंह पर हथेली रखती हुई प्यार से कहती है) -- छिः, ऐसा नहीं कहना चाहिए दीप! भला तुझे क्यों होगी बीमारी?

दीप : मा, क्या पिताजी अब चंगे नही होंगे?

जेउती : दीप!

दीप : कल पिताजी मुझसे क्या कह रहे थे, जानती हो मां? कह रहे थे, मैं अगर मर जाऊं तो तू मा को और ज्यादा प्यार करना! और कहा है कि तू खूब मन लगाकर पढना, पढकर बडा आदमी, डाक्टर बनकर बीमार लोगो पर दया रखना!

जेउती : (किसी तरह से रुलाई रोक कर दीप को प्यार करती हुई कहती है) दीप, मेरे बेटे, जाओ खरीद लो, अगर देर हो गयी तो शायद वह बेचने वाला चला जावेगा।

दीप : जाने दो, तुम ठहरो न! मां, बताओ तो तुम राजा के यहा क्यों नहीं जाती?

जेउती : (अचरज से) राजा?

दीप : मा, हम तो बहुत ही गरीब है न!

जेउती : हा, बेटे, हम गरीब हैं।

जेउती : तब तो अच्छा ही होगा। हमे भी देगा!

जेउती : (अचरज से) क्या देगा?

दीप : धन देगा। रुपया-पैसा देगा! जानती हो मा, हमारी किताब मे लिखा है, राजा अशोक वेश बदल कर एक गरीब आदमी के यहा गया था और उसका दुख देखकर उसने बहुत धन दिया था। मां, तुम भी जाकर हमारे राजा से पिताजी की बीमारी के बारे मे क्यो नहीं बताती?

जेउती : (उदास हंसी हंसकर) राजा से?

दीप : मा, तुम विश्वास करो। मै कोई झूठ नहीं कह रहा हूं। अभी अभी किताब लाकर मै तुम्हे ..

जेउती : (बीच में रोककर) दीप, किताब लाने की जरूरत नही। आजकल तो वैसे राजा नही है न। आजकल के राजा कुछ दूसरी ही तरह के होते हैं। उस तरह का एक राजा शायद आज ही हमारे यहां आनेवाला है।

दीप : आयेगा? राजा आयेगा? तब तो बढ़िया होगा। (खुशी के मारे चीख-सा पड़ता है।) मां, क्या तुमने बुलवाया उस राजा को? राजा से तुम क्या कहोगी मां! (जेउती क्षणभर दीप के चेहरे की ओर बड़े दुख से देखती रहती है। क्रमशः अनमनी-सी होकर मानो अपने-आपसे कहती है–)

जेउती : कहूंगी, हमने अपने कर्तव्य की अवहेलना नहीं की। किसी का कोई बुरा भी नहीं किया।

दीप : मां, क्या उससे रुपया-पैसा नहीं मांगोगी? हां, मेरे लिए भी मांग लेना जरूर! जानती हो मां, रमेन के पिताजी ने उसे कल एक नयी कमीज खरीद दी है। कितनी खूबसूरत है!

जेउती : (दीप की बातों से फिर स्वाभाविक स्थित में आ जाती है। गंभीर भाव से कहती है)–दीप, तू जा अब। जा, मैं मागूंगी!

दीप : ठहरो न, जा रहा हूं, उस राजा के बारे में बताओ न मां!

जेउती : दीप! जा, देख शायद वह बेचने वाला चला गया होगा!

(दीप एक बार बाहर नजर डालता है। फिर कहता है--)

दीप : ऊंह! जाने दो; शायद वह चला ही गया है। मां, भला वह राजा देखने में कैसा है? उसका नाम क्या है? क्या वह तुम्हें पहचानता है? (दीप के सवालों से जेउती परेशान-सी हो उठती है। अपने भाव को छिपाने के लिए किसी काम के बहाने चेहरा मोड़कर दूसरी ओर देखती है। मां के मुड़ जाने पर दीप पास जाकर उसका आंचल पकड़ कर मोड़ देता है और कहता है)--बताओ न मां, और क्या देगा वह?

जेउती : उफ्, और देगा मेरा सिर! कहती हूं, तू यहां से जा अब! चला जा! (परेशान-सी होकर वह दीप को चांटा लगा देती है। अचानक बिना कारण मार खाने पर दीप मुह से कुछ कहे बगैर मां के चेहरे की ओर देखता रहता है। फिर कुछ क्षण बाद फूट-फूट कर रोने लगता है।)

जेउती : दीप! दीप!

(विकल होकर उसे छाती से लगा लेती है। प्यार का स्पर्श पाकर दीप का अंतर मानो अभिमान से भर उठता है। मां की छाती से जबरन अपने को हटा कर उसी तरह से सिसक-सिसक कर कहता जाता है)–

दीप : मुझे प्यार करने की कोई जरूरत नहीं तुम्हें! हटो!

(निकल जाता है।)

जेउती : दीप!

(दीप के जाने की दिशा में क्षण भर तन्मय-सी देखती रहती है। उसका दिल

कचोटने लगता है। आंखों से आंसुओं की धारा बह कर बाहर आना चाहती है। उसे लगता है कि छाती पीट-पीट कर रोने लगे। फिर भी अपने को जबरन संयत बनाये रखती है। मगर वैसा करने पर उसका मुह ही विकृत-सा हो जाता है। उसकी जबान से बड़बड़ाने-जैसी ये बातें निकल आती हैं।)

जेउती : अभिमान हुआ है! अभागे, मगर किसके लिए? (फिर असयत-सी हो जाती है) राजा! रा-जा अशोक और रा-जा प्र-का-श, रा-जा!.... (तभी बाहर से अजन, प्रकाश और नेओग आते हैं। अंजन ये बातें कहता हुआ अदर आता है--)

अजन : जेउती! प्रकाश आया है। जेउती प्र..

जेउती : एं! रा-जा आया है! दीप - दीप - राजा –

(अंजन अचानक डर-सा जाता है।)

अंजन : जेउती! जेउती! भला तुम कह क्या रही हो?

जेउती : (अजन की आवाज सुनकर प्रकृतिस्थ-सी हो जाती है।) ओ, तुम लोग आये हो! बैठो, मै अभी-अभी आ रही हूं। (तेजी से निकल जाती है।)

प्रकाश : अजन! जेउती को...

अंजन : हां प्रकाश! दिन-रात अभाव, अनिद्रा, चिंता, सब कुछ ने मिलकर मानो जेउती को उद्भ्रात-सा कर दिया है। शायद वह उन सबके बारे में ही सोच रही था। (लंबी सास लेकर) हो सकता है कि उसी कारण अपने को सयत कर लेने के लिए क्षण भर को यहा से चली गयी है।

प्रकाश : हां, अभाव इसान का स्वभाव नष्ट कर डालता है।

(जेउती आती है। बिलकुल स्वाभाविक-सी! नेओग की ओर हाथ उठाकर नमस्कार करती है। नेओग के साथ-साथ प्रकाश भी अपना हाथ उठा देता है।)

जेउती : बैठिये!

नेओग : जी हा, हम तो बैठेंगे ही, आप परेशान न हों!

(प्रकाश और नेओग बैठ जाते हैं। अभिनय की सुविधा के लिए बीच-बीच में खड़े भी हो जाते हैं। अजन को जेउती के सामने बेचैनी-सी होने लगती है। वह ऐसे कहता है, मानो स्पष्टीकरण दे रहा हो--)

अंजन : जेउती, ये लोग मुझे रास्ते में ही मिल गये! ये, यानी नेओग और प्रकाश।

नेओग : हां, रास्ते में ही मिल गये हम। हालाकि हम तो आप लोगों के यहां ही आ रहे थे। यहा आने के सिवा हम लोगों का तो कोई और उद्देश्य भी नहीं था।

प्रकाश : (नेओग की ओर तिरछी निगाह डालकर)--हां, जेउती! नेओग ने ठीक ही कहा है। अंजन की बीमारी की खबर पाते ही और ठहर नहीं सका।

जेउती : धन्यवाद!

नेओग : इसमें भला धन्यवाद देने को क्या है? यह तो इंसान के प्रति इंसान का कर्तव्य ठहरा! तिस पर अंजन तो प्रकाश का जिगरी दोस्त रहा है। किस्मत के फेर से भले ही आप दोनों के बीच–

जेउती : वह सब रहने दें! मुझे पता है। अच्छा, आप लोग बैठिये। मैं चाय का इंतजाम...

(जेउती अंदर जाने के लिए आगे बढ़ जाती है।)

प्रकाश : जेउती, रहने दो। चाय लाने के बहाने तुम्हें यहां से जाना नहीं चाहिए। और हम तो रास्ते में ही रेस्तोरां में चाय पीकर आ रहे हैं। जेउती, अंजन को बड़ी खतरनाक बीमारी हुई है। ऐसे संकट-काल में हमें तरह-तरह की बहानेबाजी से दूर न रहकर शत्रु हों या मित्र, एकजुट हो, मिलकर ही रहना चाहिए। (जेउती कुछ जवाब नहीं देती। प्रकाश खुद ही हंसने की कोशिश कर फिर अपने आप ही कहता है) जेउती, हमें अब खुल जाना चाहिए। मुझे यह विश्वास है कि अतीत की सारी कटुता को बिलकुल भूलकर हम फिर से आपस में मिलजुल कर रह सकते हें-- और रहना उचित भी है। और वैसी ही आशा लेकर मैं आज यहां आया भी हूं। इस संकट के समय में मैं जो अधिकार पाना चाहता हूं, मुझे विश्वास है कि तुम उसमें रुकावट नहीं डालोगी। हालांकि तुम अगर वह अधिकार मुझे न भी दो, तो भी मैं बीते दिनों की मित्रता की खातिर वह अधिकार जबरन ले लूंगा। क्योंकि अधिकार की मांग कैसे करनी चाहिए, इसका तरीका जानने पर भी बहुत कुछ निर्भर हुआ करता है। (जेउती अब तक संयत थी और संयमित रहने की कोशिश भी कर रही थी। पर प्रकाश की जबान से ज्यादा बे-तकल्लुफी की बात सुनकर अचानक बेचैनी सी महसूस करती है। उसकी बातों में क्रोध प्रकट होता है।)

जेउती : जो कहना चाहते हो, जरा और साफ-साफ कहो। मीठे शब्दों में बड़ी अस्पष्टता होती है।

(अंजन को जेउती की इस बात पर मानो बड़ी चोट लगती है। वह लंबी आह भरकर वहा से हट कर बैठ जाता है। प्रकाश वड़ी विनम्रता से कहता है--)

प्रकाश : हु। अगर कोई जानबूझ कर अनजान वने, तो फिर चारा ही क्या है? मगर मैंने तो सीधे-सरल भाव से ही–

अंजन : मतलव–मतलव जेउती क्या तुम कुछ समझती नहीं हो? मतलब है, प्रकाश मुझे चंगा करने का पूरा दायित्व खुद लेना चाहता है।

जेउती : भला हमारे लिए उससे बढ़कर अच्छी बात और क्या हो सकती है, अंजन? और फिर खुद बुलाकर रुकावट डालने का भी तो अर्थ नहीं होता।

प्रकाश : (बैठे-बैठे ही सिर झुकाये, लबी सांस भरकर ऐसे कहता है, मानो अपने आपसे कह रहा हो) हूं। अतीत को तुम भूल नहीं पायी? इतना कुछ समझाने पर भी अतीत की उस कड़वाहट को ही ज्यादा बड़ा बनाना चाहती हो?

जेउती : क्या अतीत को भूल न सकना बहुत बड़ा अपराध है?

अंजन : जेउती, तुम, तुम!

जेउती : हां, ठीक है, मै माफी मांग लेती हूं।

(प्रकाश उठकर जेउती के पास जाता है)

प्रकाश : जेउती, क्या तुम अपने पति की लंबी आयु की कामना नहीं करती?

जेउती : (अचानक मानो मार खाकर चौंक-सी पड़ी हो) – प्रकाश, तुम्हें सीमाओं का ज्ञान.. (अचानक कुछ सोचकर रुक जाती है। कुछ शांत भाव से कहती है) दुर्बलता से, मर कर जिंदा रहने से, मैं नफरत करती हू। (प्रकाश जल-सा उठता है। फिर भी सयमित रहकर कहता है--)

प्रकाश : भला दुर्बलता कैसी? अजन के मुझे बुला लाने की? जेउती, दुर्बल हो तुम! किसी भी बात पर हद-से ज्यादा लगे रहना ही तो दुर्बलता है। तुम्हारा यह आदर्श का अहंकार ही तुम्हारी दुर्बलता का दूसरा नाम है। तुम बिलकुल स्वार्थी व्यक्ति की भांति बातें कर रही हो!

जेउती : स्वार्थी? हूंह! नारी के स्वार्थ का उद्गम कहा से होता है, पुरुष–कम से कम तुम समझ नहीं सकते! (जेउती की बात पूरी होने के पहले ही <u>अजन</u> वहां से चला जाना चाहता है। यह देखकर जेउती अधीर होकर कहती है) -- ठहरो, अंजन! तुम न जाओ। (आगे बढ़कर सामने खड़ी हो जाती है। जाने के पहले यह बताते जाओ कि क्या मैं सचमुच स्वार्थी हू? कह दो कि जेउती स्वार्थी है।

अजन : जेउती। मुझे जाने दो। मेरी तबियत अच्छी नही लग रही है।

जेउती : (बड़ी चोट खायी-सी) ओ, अच्छा, तो जाओ - जाओ! (अंजन चला जाता है। जेउती उसके जाने की ओर क्षणभर मौन देखती रहती है। फिर पहले जैसे कहती है)-- प्रकाश! मुझे माफ कर दो। मैं बहस सिर्फ बहस के लिए ही कर रही थी!

प्रकाश : जेउती!

जेउती : मेरा यह परम सौभाग्य है कि हमारे संकट के समय में तुम लोग आये हो। जरा बैठो, मै अभी-अभी आ रही हूं।

(अपने को संयमित करने के लिए निकल जाती है।)

नेओग : (अब तक अनमने भाव से सब कुछ देख रहा था) – माफी मांगी–लेकिन यहां से चली भी गयी।

प्रकाश : यह सभ्य लोगों की मौत का ही एक रूप है।

(प्रकाश की बात पर नेओग चौंक-सा उठता है। उसके मुंह से सिर्फ यही निकल पड़ता है--)

नेओग : हूं? ओ, ठीक है, ठीक ही है।

प्रकाश : क्या हो गया, तुम ऐसे चौंक क्यो पड़े?

नेओग : (जोर से हंसने की कोशिश करता है।)
कुछ भी नहीं हुआ है मीत! सिर्फ क्षण भर के लिए इस जेउती-अंजन के जरिये अपनी मौत की तस्वीर मानो अचानक आंखों के सामने तैर गयी थी।

प्रकाश : गलती सुधार देने की क्षमता जिस तरह से प्रकाश की है, उसी तरह से गलती के बीच से खींच लाने की क्षमता भी इस प्रकाश की है।

नेओग : जानता हूं, मेरे अन्नदाता!
(प्रकाश हंसता है)

प्रकाश : नेओग, तुम होशियार हो। तुम बात के मर्म को जानते हो। शाबाश!
(अंजन आता है। उसे आते देख प्रकाश कह उठता है)–

प्रकाश : ओ, अंजन, आओ, आओ। मगर तुम तो आराम करने गये थे! फिर उठ क्यों आये?

अंजन : हा, यानी–

प्रकाश : सुनो, अजन! मैं तुम्हें चंगा कर सकूंगा, ऐसी आशा लेकर, पहले के सारे दुर्व्यवहारों की बात भूलकर मैं यहां आया था। मगर जेउती अब तक खुले दिल से इस बात को स्वीकार नहीं सकी है।

अंजन : जेउती को अपनी गलती का पता चल गया है। अंदर जाकर उसने यह बात मुझसे बतायी है। अब तुम लोग उसे गलत समझ कर चले न जाना! प्रकाश सच बताओ, क्या मै चंगा हो जाऊंगा? मुझे तो चगा जरूर होना है। मुझ पर कितने सारे दागित्व हैं। भला मैं कैसे मर जाऊं?

प्रकाश : छिः, अंजन! भला तुम मरोगे किसलिए? हम सब मिलकर तुम्हें चंगा करेंगे। आजकल तो यह टी.बी. पहले जैसे असाध्य बीमारी नहीं रही है। कितनी सारी नयी-नयी दवाएं निकली हैं, कितने सारे लोग चंगे होकर कामकाज करते हुए दुनियादारी निभा रहे हैं। सिर्फ अच्छे इलाज की जरूरत है। मतलब, रुपये की जरूरत होती है।

अंजन : हां - हां, रुपये की जरूरत है।

प्रकाश : वह सब अब रहने दो! तुम्हें उसके बारे में सोचने की जरूरत नहीं। तिस पर अब जबकि जेउती मान गयी है तब तो चिता की कोई बात ही नहीं है। अब हो सके तो तुम एक बार अपने डाक्टर के यहां से हो आओ। क्योंकि समय बिलकुल कम है। रात होने ही वाली है। कल सुबह ही हमें शिलांग रवाना होना

है। तुम्हारी चिट्ठी मिलते ही मैं सैनिटोरियम में एक सीट का इंतजाम कर आया हूं। इसलिए जिस डाक्टर ने इतने दिन तुम्हारा इलाज किया है जाने के पहले उससे एक बार सलाह कर लेना आवश्यक है, और उसकी रिपोर्टे भी तो शिलांग में दिखलानी पड़ेंगी।

अंजन : (प्रकाश के इंतजाम से, खास कर सैनिटोरियम में सीट पाने के समाचार से अभिभूत हो जाता है।) प्रकाश!

नेओग : जबकि प्रकाश ने एक बार दायित्व लेने की बात कह दी है, तब तो तुम्हें किसी भी बात की चिंता करने की जरूरत ही नहीं है। अंजन, सैनिटोरियम में रहते समय शिलांग में जेउती भी अच्छी तरह से रह सके उसकी व्यवस्था भी यह कर आये हैं। शिलांग के हैपीवेली स्थित इनके सुंदर बंगले मे वह रहेगी। और दीप को भी कान्वेंट होस्टल मे रखकर पढ़ाने की बात ये सोच रहे हैं। क्योंकि दीप अब बड़ा हो रहा है, और उसे भी उपयुक्त शिक्षा मिलनी चाहिए। तिस पर वह अगर मा के साथ रहे, तो यह सब बीमारी-तिमारी रुपये-पैसे आदि की बात सुन-सुनकर बचपन से ही उसका मन मुरझा जायेगा। तुम्हें तो मालूम ही है कि प्रकाश की योजना में किसी तरह का कोई नुक्स नहीं रहता।

अंजन : इतने दिन तक सैनिटोरियम में इसी सीट के लिए मुझे कितनी परेशानी झलनी पड़ी है। जेउती तो खुद ही सीट की खोज में वहां गयी थी। और तुम तुरंत....प्रकाश, मैं भला तुम्हें धन्यवाद कैसे दूं?

प्रकाश : छिः, वह सब भला तुम क्या सोच रहे हो अंजन! तुम्हें भला मैं किस तरह से समझाऊं कि मुझे आज कितनी शांति मिली है! रुपये का सदुपयोग करने का मौका मिलने पर कैसी शांति मिलती है, शायद तुम इसका अंदाजा नहीं लगा सकते। इसके लिए तो बल्कि मै ही तुम दोनो पति-पत्नी के प्रति आभारी हूं। ठीक है, नेओग, तुम अंजन के साथ जाओ। डाक्टर के यहा–

अंजन : और तुम?

प्रकाश : मैं तो पूरे रास्ते गाड़ी चलाता आया हूं। पिछली रात को भी कई कारणों से अच्छी तरह सो नहीं सका। मुझे काफी थकावट लग रही है। (एक कुर्सी पर बैठ जाता है) तुम लोग जरा वहां से हो आओ। मैं हाथ-मुंह धो लूं।

(अंजन कुछ आना-कानी करता है)

अंजन : ओ, लेकिन, – ठीक है मैं, जेउती और दीप को तुम्हें अंगोछा-पानी देने के लिए जरा कह दूं।

(अंदर जाना चाहता है। प्रकाश जोर देकर रोक देता है।)

प्रकाश : उसकी जरूरत नहीं अंजन। तुम भला इतना ज्यादा सोच क्यों रहे हो? यह घर क्या मेरे लिए पराया है? तुम जल्दी चले जाओ। रात हो जायेगी तो सर्दी लग

जायेगी। नेओग, तुम जाओ। ओ, एक और बात है, किराया तो जरूर बकाया पड़ा है?

अंजन : तुम्हारा अनुमान गलत नहीं है।

प्रकाश : नेओग, आते समय, घर के मालिक के यहां जाकर सारा बकाया किराया चुका देना। यह भी कह आना कि अगले महीने की पहली तारीख से इस मकान की और जरूरत नहीं होगी। क्योंकि अंजन को इलाज के लिए कितने दिन शिलाग रहना पड़े, पता नहीं। हां, यह लो– (नेओग के हाथ गाड़ी की चाबी थमा देता है। चाबी और अंजन को साथ ले, नेओग चला जाता है। जाते समय अंजन के चेहरे पर एक बेबसी का भाव दिखता है।

प्रकाश काफी देर तक मौन रहता है। मंच पर एक तरह से वेदना-सी होती है। एक भयावह वातावरण बन जाता है। इस वातावरण को बनाने में प्रकाश-नियंत्रण और नेपथ्य पृष्ठभूमि का संगीत मदद करता है। अंजन जिस ओर गया है, प्रकाश मौन उसी ओर देखता रहता है। प्रकाश का मन शायद बहुत दूर चला जाता है। अपने-आप वह इस तरह से कहता है जैसे कि वह व्यंग्य कर रहा है या वेदनापूर्ण सचाई को स्वीकार कर रहा है, समझना मुश्किल है। आंशिक रूप से लगता है कि दोनों ही भावनाए प्रकट हो रही हैं।)

प्रकाश : जिंदा रहने का सवाल ही सब से बड़ा है। महापुण्य है।
(एक सिगरेट जलाता है।)
(प्रकाश धीरे-धीरे मंच के दूसरे सिरे पर जाता है। खड़े होकर अंदर देखता है। उसके चेहरे पर एक अर्थपूर्ण मौन मुस्कान खिल उठती है। मंच पर अंधेरा हो जाता है।)

–विराम–

(दूसरा दृश्य)

(दृश्य-सज्जा पहले जैसी। प्रकाश पहले की भांति ही खड़ा सोच रहा है। जेउती अंदर से आकर चौंक-सी उठती है। कहती है--)

जेउती : कौन? तुम! गये नहीं?

(प्रकाश कोई जवाब दिये बगैर चुपचाप जेउती की ओर देखता रहता है। मगर गाड़ी की आवाज...)

प्रकाश : अंजन और नेआग सलाह लेने डाक्टर के यहां गये हैं। कल सुबह ही शिलांग जाने की बात है सैनिटोरियम मे।

जेउती : ओ!

(जेउती अंदर जाना चाहती है।)

प्रकाश : जेउती!

जेउती : क्या है?

प्रकाश : तुम उस तरह से भला चौंक क्यों उठी थी? अतीत को भूल जाने की बात इतना कहने पर भी--खैर--जाने दो। उसे दुहरा कर कोई फायदा नहीं। लेकिन क्या सचमुच सहज ढंग से मुझे तुम ले नहीं सकती?

जेउती : नहीं, ले नहीं सकी। क्योंकि तुम भी सहज ढंग से तो आये नहीं हो।

प्रकाश : इसका प्रमाण!

जेउती : नारी की यह विचार-शक्ति प्रकृति की देन है। जबान खोलकर कहने की जरूरत नहीं होती!

प्रकाश : ठीक है। तब तो तुमसे खुलकर कह देना ही अच्छा है।

जेउती : जरूर! क्योंकि तुम्हारा यह "भलमानस का नाटक" और भी ज्यादा भयावह है। (प्रकाश गुस्से से कहता है--)

प्रकाश : जेउती!

(उसी तरह जेउती गुस्से से जवाब देती है।)

जेउती : तुम किस इरादे से अंजन की मदद करने आये हो, साफ-साफ कह दो।

प्रकाश : भला इतनी उतावली क्यों हो रही हो? हुंह, तुम अगर इतना ज्यादा...मगर उसके पहले अगर मैं फिर दुहरा दूं, कि बीमारी की बात सुनकर सचमुच अच्छे उद्देश्य से ही आया था। (क्षणभर रुक कर) उस तरह से क्यों देख रही हो? क्या विश्वास नहीं हो रहा? क्या है, बताओ? (व्यंग्यात्मक लहजे से हंसता है) अच्छी बात! हां, तो तुमने साफ-साफ बताने को कहा था न? अच्छा कहो, तुम्हे संसार -धर्म कैसा लग रहा है? (जवाब के लिए क्षण भर रुक कर फिर खुद ही कहता है) मतलब तुम्हारी यह शादीशुदा जिंदगी?

जेउती : (विरक्ति से) मधुर!

प्रकाश : ये अभाव, बीमारी, अशांति आदि? (जेउती मौन रहती है। उसके जवाब के लिए रुके बगैर फिर खुद ही कहता है) जिंदा रहने के मोह में अंधा होकर अंजन ने तुम्हारे प्यार-मुहब्बत का जानबूझ कर अपमान--

जेउती : प्रकाश!

(प्रकाश जेउती की ओर तिरछी निगाह से देखकर कहता है)--

प्रकाश : अफसोस है! अप्रिय सत्य को लोग हमेशा--

जेउती : यह अशांति सदैव नहीं रहेगी!

प्रकाश : यह भविष्यवाणी है या सांत्वना भर?

जेउती : दोनों ही! षड्यंत्र कभी स्थायी नहीं होता।

प्रकाश : कैसा षड्यंत्र? मेरा यहां आना, या अंजन का बुलाना? षड्यंत्र किसका? मेरा या अंजन का? (कुछ कहे बगैर जेउती प्रकाश की ओर देखती रहती है।) जेउती! तुम बिलकुल इकतरफा बातें सोच रही हो। ऐसे अंजनों के जिंदा रहने का मोह, तुम लोगों की उस तथाकथित सभ्यता का विकासक्रम, अगर इसी तरह से सारी दुनिया को ढंक ले तो? षड्यंत्र का मूल स्रोत अगर कटु सत्य में ही निहित रहे तो? अगर प्रकृति की अवमानना करने हेतु प्रकृति ही बदला ले तो?

जेउती : उजाला है जरूर। आगे बढ़ने पर दिखाई पड़ेगा।

प्रकाश : जैसे?

जेउती : तुम लोगों की प्रवृत्तियों का गला घोंट कर!

प्रकाश : मगर प्रवृत्तियां तो अनुभूतियों की ही देन है। क्या तुम्हारा ऐसा विश्वास है कि इंसान आज की जटिलताओं को अस्वीकार कर फिर उस पहले दिन की सहजता की ओर मुड़ सकेगा।

जेउती : नहीं, ऐसा विश्वास नहीं करती! मगर उन्हें अस्वीकार कर नहीं--जटिलताओं द्वारा ही जटिलताओं को जीत कर इंसान फिर सरलता-सहजता की ओर अवश्य लौटेगा।

प्रकाश : तुम्हारी राय मैं मानता हूं। मगर दूसरे तरीके से!

जेउती : मुझे पता है। तुम तो इस बात पर गर्व करते हो कि तुम उस प्रथम दिन की मानवता की खोज कर रहे हो। हालांकि तुम्हें खुद ही इस बात का पता नहीं कि उस आदिम मानवता के साथ आदिम हिंसा की भावना घुली-मिली है और उस हिंसावृत्ति पर वर्तमान सभ्यता का लेप लगाने से तुम लोग विकृत हो उठे हो। परंतु ऐसा दिन भी आने वाला है, जबकि इस आदिम हिंसावृत्ति शब्द का

अर्थ मिटा कर दुनिया के उन्नत लोग सिर्फ मानवता का विजय गान ही गाया करेंगे। उस सूर्योदय में और ज्यादा दिन की देर नहीं है।

प्रकाश : उद्देश्य एक ही है; इसमें संदेह नहीं। मगर राह अलग है।

जेउती : हां, जानती हूं। तुम्हारे लिए जटिलता आवेश का ही दूसरा नाम है। तुम्हारे यहां निर्मलता का अर्थ भी विकृत है। तुम निर्मलता चाहते हो आवेश-उत्तेजना के माध्यम से। और मैं, मै आवेश-उत्तेजना निर्मलता के विकासक्रम के जरिये पाना चाहती हूं। तुममें, मुझमे अंतर बहुत है। और इसी लिए अजन जीता था। (अंजन का नाम आते ही प्रकाश जल-सा उठता है।)

प्रकाश : और अगर मैं फिर शक्ति-परीक्षण में उतर पड़ूं तो? ऐसी परिस्थिति का सृजन करूं--जो तुम्हारी ही बात का अलग मतलब हो--

जेउती : दुनिया में किसी भी तरीके से समता की रक्षा होती है--मेरा यह विश्वास है।

प्रकाश : झूठ है जेउती, यह झूठ है। समता रक्षा का मापदंड तुम्हारे मन के अनुकूल नहीं भी हो सकता। तुम यहीं गलती पर हो। और नियम? हां, तुम तो हो ईसाई और अंजन है हिंदू! तुम्हारे बाल-बच्चे किस धर्म को अपनायेगे?

जेउती : उनका अपना अलग कोई धर्म नहीं रहेगा। सत्य-सुंदर ही उनका धर्म होगा। यही महान शिक्षा उन्हें दी जायेगी।

प्रकाश : अंजन शायद उम्र में तुम से छोटा है। इस बारे में तुम्हारा क्या विचार है?

जेउती : उस पर मुझे गर्व है। जिनकी मन की सीमाएं विशाल हैं, उनके लिए उम्र का सवाल मिलन में दीवार नहीं होता। मनीषियों की जीवन गाथाएं इस बात को प्रमाणित करती है।

प्रकाश : (हंसकर) इस बारे मे तुम्हारा-मेरा विचार एक-सा है। मैं भी अपने मन की सीमाओं के अनुसार ही वृत्त बनाता हूं। तुम अपने मन के अनुकूल राय दे रही हो--मैं भी वही कहता हूं कि नियम का कोई स्थायी मूल्य होता नही। मनीषियों के जीवन के जो महान अपवाद हैं, यदि उन्हें सहज-सरल भाव से स्वीकार कर लिया जा सके तो वे भी समाज के हर व्यक्ति के जीवन में सच हो सकते हैं। दुनिया में दस आदमियों को साथ रहने दो, तो हर आदमी को अपना-अपना कुछ स्वार्थ तो त्यागना ही पड़ेगा। तुम्हारे और अजन के बीच ही तुम लोगों की सारी अनुभूतियो को सीमित कर देना गलत है। तुम्हारे हृदयों में और दसियों लोगो की न्यायपूर्ण अनुभूतियां भी समा सकती हैं-- यह बात भी सोचनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं सोचतीं, तो विकसित मानव में कैसे शामिल हो सकती हो?

जेउती : प्रकाश! (चीख पड़ना चाहती है, पर चीख नहीं पाती, कांपती है। प्रकाश पास आकर जेउती पर गहराई से नजर डालता है। फिर कहता है--)

प्रकाश : यह सब कुसंस्कार है -- कुसंसकार है जेउती! जो अकेले ही भोग करना चाहती है, ऐसी पंगु प्रवृत्ति से समाज में जो अन्यायपूर्ण नियम बने हैं, समाज द्वारा लादे गये उन निरर्थक कुसंस्कारों में फस कर तुम खुद आज बलि पर चढ रही हो। अंजन को बलि का बकरा बनने को छोड़ दिया। मैं तुम्हें इसके हजारों प्रमाण दिखा सकता हूं। मगर आंखें खोल कर देखना जानतीं, तो तुम्हें आस-पास यह सब खुद ही दिखाई पड़ता। मेरी विचारधारा ने जिसके तन-मन में कभी रोमांच न जगाया हो, दुनिया में ऐसा कौन है? लेकिन वे स्वीकार नहीं करते. . डरते हैं। (क्रमशः आवेश में आ जाता है) मगर हमें लोगों को निडर बनना सिखाना होगा। नहीं तो समाज, दुनिया और ज्यादा पंगु हो जायेंगे। जो स्वाभाविक है उसे स्वाभाविक रूप में स्वीकार न करने के फलस्वरूप, भगवान, यानी प्रकृति को अस्वीकार करने के अपराध से ऐसा होगा! जेउती, गलत राह से कदापि समाज की उन्नति नहीं हो सकती!

जेउती : प्रकाश! प्रकाश तुम -- तुम आखिर कहना क्या चाहते हो?

(प्रकाश जेउती के नजदीक जाकर बड़े प्यार और गंभीर भाव से कहता है--)

प्रकाश : जेउती, दुनिया में एक दिन ऐसा भी था जबकि सतीत्व का कोई सवाल नहीं था। स्वार्थी लोगों ने सतीत्व का दुर्वह बोझ लादकर मनुष्य के मन को पंगु नहीं बनाया था।

जेउती : प्रकाश!

प्रकाश : मैं तुमसे प्यार करता हूं। अंजन भी प्यार करता है। तुम तो शिक्षा का गर्व रखती हो। फिर तुम भला दोनों की क्यों नहीं हो सकतीं? क्यों समान रूप से स्वीकार नहीं कर सकतीं?

(जेउती की भावना को न जाने कौन-सी अचिंतनीय परिवर्तन की लहर चोट करती है। वह कोमल स्वर में कहती है)--

जेउती : प्रकाश!

(प्रकाश मानो किसी अतींद्रिय भावना में अपने को डुबो देता है।)

प्रकाश : जाति, धर्म, नीति-नियम आदि का सवाल समाज के लोग उठाया करते हैं। परन्तु मन-देवता के चिरंतन प्रभाव के स्पर्श से वे सब भी युग-युग में विभिन्न रूपों में अपने को भले ही सहज भाव से स्वीकार न करें, मनुष्य की प्रवृत्ति धर्म का मुखौटा लगाकर भी अपने को प्रकट करने की राह खोज ही लेती है। ऐसा भी जमाना था जब कि पांच सौ सिक्के प्रणामी देकर, धर्म के नाम पर, बौद्ध पुरोहित द्वारा, बौद्ध मंदिर में, कौमार्य हरण करवाये बगैर समाज की लड़की को अपने

समाज मे ही नहीं लेता था । उसका विवाह नहीं होता था । एक प्रख्यात पुरातत्वज्ञ का कहना है--

जेउती : प्रकाश!

प्रकाश : अभी सन् 1920 मे एक और विद्वान मद्रास के बहुत-से स्थानो का भ्रमण कर यह बता गया है--पचम नाम की जाति के--

जेउती : प्रकाश!

प्रकाश : (अपने आपसे कहता है) देवालयों की दीवारो पर मैंने देखा है, शिल्पी की कल्पना द्वारा मनुष्य की चिरन्तन भावनाओ का प्रकटीकरण। पत्थर पर खुदी पहली तस्वीर मे यह दिखाया गया है -- मुनिवर से पूछ रहा है -- खुद के रोपे पौधे का फल खाना चाहिए या नही । दूसरी तस्वीर में यह दिखाया गया है कि -- "हा, चाहिए" कहने पर अपनी संतान के अनुसार सृष्टि की पूजा कर रहा है । परन्तु समाज रूपी दैत्य के सामने शिल्पी को भी हार माननी पड़ी । तीसरी तस्वीर मे दिखाया गया है कि यह पाप है । समाज के शासन में शिल्पी की अनुभूतियो को भी हार माननी पड़ी । ईश्वर की और साथ ही प्रकृति की भी अवमानना हुई । (प्रकाश अभिभूत-सा हो जाता है) जेउती! इसान को नियमो के इस मोह ने पगु कर डाला है । मै एक महामिलन के जरिये उस आदिम प्रथम दिवस की निर्मलता की खोज कर रहा हू । आज का समाज यह गर्व करता है कि उन्नत मनुष्य उसने बनाया है । मगर मान लो कि मेरा मन तुम्हे पसद करता है, पाना चाहता है, तो फिर अध-विश्वास के नाम पर त्याग का मुखौटा पहन भला इस खूबसूरत दुनिया मे नुकसान क्यो उठाता जाऊ? तिब्बत के परिवारों में--रहने दो, उतनी दूर भला क्यों जाये--द्रौपदी को लेकर पाच-पाडव किस तरह से सुखी रहे? जेउती, नियम अपरिवर्तनीय नही होते । अगर ऐसा हो, तो मनुष्य का जीवन-देवता अपमानित होकर भयंकर बदला लेता है । जेउती! इसान ने इसान को जो व्यक्तिगत सपत्ति बना लिया है, वह नियम, वह महापाप हम बिलकुल पोछ कर मिटा देंगे । हम तो नये युग के उन्नत मानव ठहरे । इसे ध्वस्त कर हम नवीन निर्मल वातावरण का सृजन करेंगे । कहो, कहो जेउती, क्या तुम कर सकोगी? (प्रकाश के प्रश्न मे निष्ठा का भाव जाग उठा है ।)

जटिलता को जटिलता द्वारा वशीभूत कर आदिम हिंसक-भावना तज कर मानवता की माधुरी हम खोज निकालेगे; समभाव के अभूतपूर्व आदर्श की हम प्रतिष्ठा करेंगे । तुम कर सकोगी? कहो, कर सकोगी जेउती?

(जेउती अब तक आखें मूदे प्रकाश की बाते सुन रही थी । उसके मन मे भी भावनाओ का उफान पैदा हो गया था । शायद बातों के जरिये मायाजाल की

संरचना करने वाली प्रकाश की शक्ति ने उसे भी तन्मय कर रखा था। संभवतः जेउती प्रकाश के दृष्टिकोण से विचार कर, प्रकाश ने जिस सत्य का अनुभव किया था, वह खुद भी उसी सत्य को समझने का प्रयास कर रही थी, या कोई उसे प्यार करता है, पता चलने पर मन में जैसी स्वाभाविक आत्मतृप्ति की भावना जगती है, जेउती के मन को भी वैसी ही भावना छू गयी थी। इन सभी भावनाओं के मेल से शायद वह सोचने लगी थी कि प्रकाश के चरित्र में भी कोई महत् गुण है · ऐसा अनुभव होने पर प्रकाश के प्रति जो उपेक्षा की भावना थी, वह कुछ घट रही थी। इसी कारण सभवतः आंखें मूंदे ही जेउती प्यार से कहती है--)

जेउती : प्रकाश!

प्रकाश : (गहरे आवेग से) जेउती!

जेउती : तुम थके हो! बैठो!
(प्यार से प्रकाश को बिठा देती है। कुर्सी के पीछे खड़ी होकर उसके सिर को सहलाती है।)

प्रकाश : (उत्तेजना के बाद स्वयं निस्तेज हो जाता है। जेउती द्वारा उसके सिर पर हाथ रखते ही, जैसे और ज्यादा निस्तेज बनकर, थकान के स्वर में कहता है)— तुम्हे घिन तो नहीं हो रही है न?

जेउती : इस क्षण तो नहीं। आज पहले-पहल मुझे सदेह हो रहा है, --हो सकता है कि तुम महान हो, पर हो पथ-भ्रष्ट! (लबी सांस लेकर) प्रकाश, संस्कार, नीति-नियम का भी पर्याप्त मूल्य है। ये मनुष्य की पूर्णता-प्राप्ति में सहायक है। आज के मनुष्य को उसके लिए काफी कीमत चुकानी पडी है। बडी साधना के बाद उसे ये मिल सका है। तुम भूल रहे हो, शरीर और मन एक साथ भले ही रहे, पर हैं अलग-अलग। इन दोनो के स्वाभाविक मिलन में ही मनुष्य की पूर्णता होती है।

प्रकाश : (लंबी सांस लेकर) दुर्भाग्य है।
(अचानक उसका भाव बदल जाता है। वह सख्त हो जाता है--मानो पहले का ही इंसान प्रकट हो जाता है) -- क्या कहा, स्वाभाविक मिलन? (कुछ हटकर) -- इन्हें जबरन एक करना होगा!

जेउती : प्रकृति तुम्हारा मगल करे!.. . मगर प्रकाश, यहा जोर-जबरदस्ती नहीं चलती। यह सामर्थ्य के परे है। मनुष्य की शक्ति विशाल है, पर यह न भूलो कि वह विशाल शक्ति भी सीमित है। सबको जबरन एक करते जाना गलत है। दूर से जो दिखाई पड़ता है, पास आने पर ज्यादातर वह दिखाई नहीं देता। और

"बहुतों" के बीच "नवीन" की खोज करना पुरुष का स्वाभाविक धर्म हो सकता है। पर "एक" के अंदर "नित्य-नवीन" की उपभोग कामना नारी का ही स्वभाव-धर्म है। जिन दिनों संसार में सतीत्व का सवाल न था--तब भी धरती पर सती पैदा हुई थी।

प्रकाश : तुम्हारी यह सीख निरर्थक है। ठीक है, तुम अपने धर्म का पालन करो--मैं अब चला।

(जेउती धीरे-धीरे फिर प्रकाश के प्रति सख्त और अंजन के प्रति सहानुभूतिपूर्ण हो उठती है।)

जेउती : प्रकाश, तो क्या तुम अंजन की मदद नहीं करोगे?

प्रकाश : मदद करने के इरादे से ही आया था। मगर तुम रुकावट डाल रही हो। शायद तुम भूली न होगी--एक दिन मैंने तुम्हारी भी मदद की थी--तुम्हें भी मौत के चंगुल से छुड़ाया था।

जेउती : क्या उसी के बदले में अब मेरी हत्या करना चाहते हो? जीवन देना मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है, पर जीवन लेने का अधिकार किसी को नहीं है।

प्रकाश : है जेउती, है। मैं जीवन देना भी जानता हूं, और लेना भी। जानने पर ही सब कुछ निर्भर करता है। हां, सिर्फ जानने के ऊपर ही! (हंसता है) जा-न-ने- के ऊ-प-र ही!

जेउती : प्रकाश, तुम जाओ! मेरा सतीत्व अटूट रहे!

प्रकाश : अपनी विचारधारा पर मेरी भी आस्था है।

(प्रकाश जाने के लिए कदम बढ़ाता है।)

जेउती : प्रकाश! (जेउती प्रकाश को इस ढंग से पुकारती है, मानो वह जेउती की अंतरात्मा का ही आकुल आह्वान हो। प्रकाश रुक जाता है--कुछ क्षण सन्नाटे में निकल जाता है।) नहीं - नहीं - तुम न जाओ। अगर तुम रुपया न दोगे तो अंजन..

(प्रकाश चुपचाप जेब से काफी रुपये निकाल कर जेउती की ओर बढ़ा देता है।)

जेउती : रुपया! रुपया! अंजन का इलाज होगा! अंजन चंगा होगा!

(शोक के मारे टूट-सी जाती है।) अंजन चंगा होगा!

(अचानक मौन होकर प्रकाश की ओर देखती रहती है। उसका भाव बदल जाता है। क्रमश: चेहरे पर बड़ी सख्ती आ जाती है। फिर संयत होकर गंभीर स्वर में कहती है।) प्रकाश! तुम चले जाओ! नारीत्व मेरी जन्मगत सत्ता है। सतीत्व मेरा आभूषण है। परंतु प्रकाश, बताओ तो, बदले के बगैर क्या दान की कोई सार्थकता नहीं है?

प्रकाश : तुम तो अपने स्वार्थ के लिए ही मुझे महान बनाना चाहती हो। तुम्हारा सतीत्व का अहंकार अंजन को बचा नहीं सकता। नहीं तो अब तक समाज तुम्हारी मदद करता! भले ही जबान से लोग न कहें, पर परोक्ष रूप से आज का यह समाज मेरी विचारधारा के अनुसार ही चल रहा है। और उसी विचारधारा के आधार पर अदृश्य रूप से नया समाज निर्मित हो रहा है। तुम्हारे जैसे जो लोग सचाई को स्वीकार करने से डरते हैं यह समाज उन्हें सजा देना नहीं भूलता। और उसी के फलस्वरूप तुम विधवा हो जाओगी!

जेउती : प्रकाश! तुम चले जाओ! जाओ! नही तो हो सकता है कि इंसान पर से, मेरे अपने ऊपर से ही मेरा विश्वास खो जाये! जाओ! मैं विनती करती हू, तुम चले जाओ।

प्रकाश : (लबी सांस लेकर गहरी वेदना से कहता है) ठीक है मै तुम्हें और ज्यादा परेशान करने की कोशिश नही करूगा। ईश्वर से प्रार्थना है कि यदि हजारो सकटो का सामना करना पडे तब भी, तुम्हारे मानस में अंतर्द्वन्द्व उत्पन्न न हो। तुम्हारा विश्वास अटूट रहे। मेरे लिए भी तुम वही प्रार्थना करो। (तेजी से निकल जाता है।)

जेउती : हां, जाओ! मांग का सिंदूर पोंछ डालना ही आज के समाज मे मेरा प्रतिशोध लेना होगा!

(जेउती हालाकि ईसाई है, पर माग में सिंदूर लगाती है, क्योंकि सिंदूर लगाने की कला उसे पसंद है। नियमो के बीच भी सुंदर के प्रति आकर्षण के ये अपवाद ही जेउती के चरित्र की विशेषता है।)

(स्वगत कहती है।) जिस समाज में इसान को बराबर न्याय नही मिलता, बीमार के सही इलाज की व्यवस्था नहीं है, वह समाज-व्यवस्था....ओ, वह चला गया! तो फिर अंजन? हां, चला जाय, अजन खत्म हो जाय! हूं, अंजन खत्म हो जायेगा? अंजन! नहीं, नहीं, मै भला यह क्या कह रही हू। (चीखती-सी पुकारती है) दीप! दीप! (दीप के बदले बाहर से अजन घुस आता है। अजन को देखते ही जेउती विह्वल होकर पूछती है--) तुम आ गये? डाक्टर क्या कह रहा था?

अजन : भला प्रकाश को तुमने घर से किसलिए निकाल दिया?

जेउती : (मार खाये लोग की तरह अचानक सख्त हो जाती है। कुछ हट कर कहती है) यह बात तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी।

अंजन : क्या कहा, मेरी समझ में नहीं आयेगी? हां, दिन-ब-दिन तुम्हें समझ पाना मेरे लिए कठिन ही होता जा रहा है। जेउती, मैं फिर कहता हूं। इंसान को माफ न कर पाना पाप है, कमजोरी है।

जेउती : (उसके चेहरे पर एक अजीब तरह की दुख की मौन हंसी खिल उठती है। क्षण भर अंजन की ओर देखकर कहती है--)
--मुझे समझ पाना कठिन लग रहा है? सचमुच अंजन, मैं आज चाहती हूं कि तुम्हारी मौत हो जाये।

अंजन : जेउती!

जेउती : हां, तुम्हारे अनुमान का जवाब दे रही हूं।

अंजन : जेउती, तुम मुझे गलत समझ रही हो। खैर जाने दो, तुम्हें अब और परेशान नहीं करूंगा! मैं चाहता था कि जिंदा रहूं। मगर जबकि सबका. .

जेउती : हां, सबका यह षड्यंत्र है।

अंजन : सोचा था, प्रकाश से मदद मिलेगी। सोचा था, चंगा होकर कर्तव्य का अधिकार मुझे मिलेगा। अपने बाल-बच्चों के प्रति अपना कर्तव्य निभा पाऊंगा--

जेउती : और पत्नी होकर भी मैंने वह करने नहीं दिया, यही न?

अंजन : (लंबी सांस लेकर) अब दोष किसे दूं? मेरी ही बदकिस्मती है। जेउती, संस्कारों का मुझे कोई मोह नहीं है। मगर आज किस्मत की बात मानने का जी हो रहा है। (मुरझाई-सी हंसी हंसकर कहता है) हां, यह कमजोरी है। खैर जाने दो, कुछ और मिले या न मिले, तुमसे स्पष्टवादिता जरूर मिली है। (जाना चाहता है। जेउती आगे बढ़कर राह रोक लेती है।)

जेउती : स्पष्टवादिता के सिवा तुम्हें मुझसे और कुछ भी नहीं मिला है?

अंजन : उस एक में ही सब कुछ है!

जेउती : अंजन!

अंजन : हां, देखूं। राह छोड़ दो जेउती। मुझे अच्छा नहीं लग रहा। (अंजन के जवाब से चोट खाकर जेउती अनमनी-सी हो जाती है। राह छोड़ देती है। कुछ सोचने लगती है। उसी तल्लीनता में कहती है) --

जेउती : ठीक है, जाओ। नेओग कहां है? प्रकाश से कहां भेंट हुई?

अंजन : (जाते हुए) बाहरी दरवाजे के पास। उससे मैं ठहरने को कह आया था। अब दीप को भेजकर उसे विदा कर दो। (चला जाता है।)
(जेउती कुछ देर तन्मय होकर ठहरी रहती है। मानो परिवेश की बात वह भूल-सी गयी हो। अंजन के जाने के बारे में भी मानो उसे कोई पता नहीं। बाद में अचानक पुकार उठती है।)

जेउती : दीप - दीप --
(दीप आता है।)

दीप, बाहरी दरवाजे के पास से उस राजा को बुला ला बेटे! कहना—मैं - मैं बुला रही हूं।
(दीप जाता है)
(जेउती मानो धीरे-धीरे असंयत हो जाती है। अपने आप कहती है--)
प्यार, मुहब्बत। स-ती-त्व! ष-ड्-यं-त्र! समाज-व्यवस्था!
(उदास, मुरझाई हंसी हंसती है। बाहर से दीप और प्रकाश आते हैं।)

दीप : मां!

जेउती : (क्षण भर मानो अचरज से दीप की ओर देखती हुई कहती है) – दीप, तू अंदर जा। शाम हो आयी है। अपना पाठ पढ़।
(दीप चला जाता है। पर जाने से पहले एक बार संशय की दृष्टि से मां और प्रकाश की ओर देखता है। मां के व्यवहार के इस परिवर्तन से दीप के खोजी बाल-मन में मानो एक तरह के अनजान प्रश्न की लहर जग उठती है। फिर भी क्षण भर दुविधा में पड़े रहकर मां का कहना मान लेता है। जेउती दीप के जाने की ओर एकटक देखती रहती है।)

प्रकाश : जेउती! तुम...

जेउती : हां, मैं ही—मैंने ही—मै-ने ही तुम्हें बुलवा भेजा है।
(पास आकर धीमी आवाज में कहती है)
कितने रुपये दोगे?

प्रकाश : तुम्हे जितने की जरूरत होगी।
(प्रकाश की बात पर जेउती अचानक बावली-सी हंस पड़ती है।)

जेउती : हाः हाः हाः – जि-त-ने की जरूरत हो-गी? ठीक है, रात होने दो! (धीमी आवाज में) अंधेरा हो जाय, कोई किसी को देख न पाय। हां--अंधेरा होने दो।

प्रकाश : (कुछ उपेक्षा से) हूं-ठीक है। वैसा ही होने दो, हम रात को मिलेंगे! (चला जाता है।)

जेउती : चला गया? रात को मिलेंगे – रात को। हाः - हाः - हाः! (जेउती की हसी में रुलाई का स्वर स्पष्ट हो उठता है। दीप फिर दुविधा में पड़ा चला आ रहा था, मां की वैसी हालत देख, विकल-सा होकर पूछता है)–

दीप : मां - मां - भला तुम्हें क्या हो गया है, मां? मां... (मां को रोते देख दीप खुद भी रो पड़ता है।)

जेउती : दीप, हमें बहुत सारे रुपये मिलेंगे! जितनी जरूरत होगी उतने। हमें और कोई चिंता नहीं। तेरे पिताजी अच्छे हो जायेंगे। समाज को धोखा दूंगी। समाज के लोग तो एड़ी चोटी का पसीना बहाकर, देह को चूर-चूर कर मेहनत करने पर

भी जिंदा रहने का अधिकार देते नहीं। इस बार - इस बार मैं उन्हें हरा दूंगी। हाः - हाः - हाः –(बावली-सी हंसती हैं। डर कर दीप मां - मां -पुकार उठता है। अंजन अंदर से बेतहाशा – जेउती-जेउती पुकारता दौड़ा आता है।)

दीप : मां - मां –

(जेउती की हंसी के बीच में ही दीप और अंजन पुकारते हैं)–

अंजन : जेउती - जेउती –

जेउती : नहीं - नहीं – कुछ भी नही हुआ है। प्रकाश सचमुच बड़ा भला है। यह देखो– रुपये दे गया है। आं - नहीं-नहीं, वह अभी आयेगा। रुपया देने के लिए आयेगा। अंजन, मैंने उसे बुलाया है। प्रकाश को मैंने फिर बुलाया है। (आवेश में रो पड़ती है। रुक-रुक कर कहती है) गलती, अपनी गलती मैं स्वीकार करती हूं। स्वीकार करती हूं मैं! (अचानक फिर हंस पड़ती है।)–गलती! हाः - हाः - हाः - गलती! (अंजन अब तक जेउती को पुकार- पुकारकर शांत करने की कोशिश कर रहा था। दीप भी पहले पुकारता था। मगर अब मानो डर कर उसकी भी जबान बंद-सी हो गयी थी। जेउती एक बार रोती है, फिर हसती है। आखिरी बार उसके फिर हंसने पर दीप डरकर अद्भुत भाव से 'मां-मां' पुकार कर जेउती को ही बांहें फैलाकर पकड़ लेता है। धीरे-धीरे जेउती के चेहरे पर अनेक भावों का सम्मिश्रण पड़ता है। वह धीरे-धीरे मानो कुछ करने का दृढ़ संकल्प लेती है। मानो मृत्यु के बीच से कह उठती है) –

जेउती : दीप! चल!

(दीप और जेउती अंदर जाते हैं। उसके बाद अंजन भी धीरे-धीरे निकल जाता है।)

(सूना मंच! धीरे-धीरे शाम का अंधेरा घिर आता है। इसी प्रकार कुछ क्षण निकल जाते हैं। दीप आता है। उसकी नजर और कदमों में संशय का भाव है। इधर-उधर नजर डालकर दरवाजा बंद कर फिर भीतर चला जाता है। मंच पुनः कुछ समय सूना-सा हो जाता है। पृष्ठभूमि का धारा-संगीत परिस्थिति को अभिव्यक्त करने में मदद देता है। प्रकाश-नियत्रण द्वारा यह सूचित किया जाता है कि रात ज्यादा हो आयी है।

रात का दस बजा है। खिड़की से बाहर जुगनुओ के झुंड दिखाई पड़ते हैं। दीप फिर धीरे-धीरे प्रवेश करता है। उसके पैरों में खड़ाऊं है। सोने के लिए वह पैर धोकर आ रहा है। मंच के बीच आकर नींद हटाने के लिए वह अंगड़ाइयां लेता है और बत्ती जला देता है। अंधेरा मंच प्रकाशित हो उठता है। दरवाजा बंद है या नहीं, वह अच्छी तरह से जांचता है। इसके बाद खिड़की भी बंद करता

है। पिछवाड़े के कमरे में जाकर उस कमरे की भी बत्ती जलाता है। अपनी कमीज खोलकर खूंटी पर टांग देता है। इसके बाद सोने के लिए बिस्तर के पास जाकर कुछ सोचकर फिर सामने के कमरे में आता है। कमरे की बस्ती बुझाकर सो जाता है। बीच का दरवाजा खुला होने के कारण सब कुछ दिखाई पड़ता है। क्षण भर बाद धीरे-धीरे जेउती प्रवेश करती है। अंधेरे-से कमरे में कुछ देर टहलती है। पिछवाड़े के कमरे का धीमा-सा उजाला इस कमरे में आ रहा है। अचानक एक बार रुक कर जेउती कुछ सोचकर बत्ती जला देती है। मौन रहकर बत्ती के बल्ब की ओर देखती रहती है। दीप को नींद आ रही थी, पर टूट जाती है। वह सहमा-सा मां की ओर देखता रहता है : इसके बाद उठकर धीरे-धीरे मां के पास आकर डरता हुआ कहता है--)

दीप : मां–

जेउती : अंयं, अरे दीप! तू अब तक सोया नहीं। (प्यार से) जा बेटे, जाकर सो जा। मुझे सोने में ज्यादा देर होगी न! पिताजी बीमार हैं, उनकी देखभाल करते रहना पड़ता है न!

दीप : मां–

जेउती : जा, इतना नामसझ न बन बेटे! पिताजी की नींद खुल जाने पर उनके हाथ-पैर दबा कर फिर नीद लाने की कोशिश करनी पड़ती है न! पिताजी को जो बीमारी है–अगर उन्हें नींद न आये तो वह बीमारी और ज्यादा बढ़ सकती है न! समझा न बेटे! जा, अब तू सो जा। मैं बाद मे जाकर तेरे साथ सोऊंगी। जा अब--

दीप : तुम तो सिर्फ कहती ही हो। एक दिन भी सोती नहीं। रात भर पिताजी के पास ही बैठी रहती हो। इस तरह हमेशा जागते रहने पर तुम्हें भी बीमारी हो जायेगी मां!

जेउती : (उदास हंसी हंसकर) पागल! मुझे बीमारी नहीं होगी।

दीप : (दुविधा में) मां–

जेउती : क्या है?

दीप : तुम्हें क्या हुआ है मां?

जेउती : मुझे क्या हुआ है? कुछ भी तो नहीं हुआ। (दीप को अपनी छाती से लगाकर गंभीरता से कहती है) –आज कितनी खुशी का दिन है हमारा! पिताजी चंगे होंगे। वह राजा आदमी बहुत-सा रुपया देगा। अगर एक बार किसी तरह से बहुत-सा रुपया मिल जाये तो शिलांग जाकर किसी और के यहा रहने की जरूरत नहीं होगी। तेरी मां को बहुत दिनो के कष्ट से छुटकारा मिल जायेगा। हम तीनों यहीं रहकर पिताजी को चंगा कर सकेंगे। परंतु दीप, उसके पहले... दी-प!

(मानो दीप को सहारा बनाकर और ज्यादा सटा लेती है। उसकी छाती से हट कर दीप कहता है--)

दीप : उस राजा को मैं पसंद नहीं करता।

जेउती : ऐसा नहीं करना चाहिए दीप! वे कितने दयावान हैं, पिताजी को चंगा करने के लिए रुपये देगा। यह कितनी खुशी की बात है!

दीप : तो फिर रो क्यों रही थी? आज तो तुमने बाल भी नहीं संवारे। शाम को कपड़े भी नहीं बदले!

जेउती : ओ, क्या ऐसी बात है? (दीप को प्यार से छाती से लगाकर कहती है--) अच्छा, अब चल! अब जाकर कपड़े बदल लूं तो ठीक हो जायेगा न?

दीप : अब... अब इस रात को?

जेउती : रात को। (रात शब्द जबान पर आते ही जेउती चौंक-सी पड़ती है। दूसरे ही क्षण अपने को संयमित कर हंसने की कोशिश करती हुई कहती है--) रात हो गयी, तो क्या हुआ? आज हमारे लिए कितनी खुशी का दिन है। तू ठीक ही कह रहा है बेटे; मैं अगर आज न सजी तो भला और कब सजूंगी? तूने बिलकुल सही याद दिलाया।

दीप : मुझे अब नींद आ रही है।

जेउती : ठीक है, तू सोये-सोये देखते रहना। मैं अपने वे बढ़िया कपड़े पहन कर तेरे साथ सोऊंगी।

(दीप को ले जाकर बिस्तर पर सुला देती है। खुद पेटी से एक चादर निकाल कर ओढ़ लेती है। मेज के पास बैठकर बालों में कंघी करते हुए अपने को तरह-तरह से सजाने लगती है। दीप सो जाता है। जेउती मच्छरदानी लगा देती है। फिर अपने को सजाने लगती है। ऐसा लगता है, वह अपने को जहां तक हो सके, सजायेगी, मानो प्रसाधन उन्माद ने उसे ग्रस लिया है। अचानक दूर से माइक में किसी रिकार्ड के गीत की आवाज आती है। शायद वह किसी सिनेमा-हाल मे फिल्म के खत्म होने पर बजने वाला गीत है, या किसी के विवाह के अवसर पर माइक मे बजाया जाने वाला गीत है। गीत के बोल श्रीराधा के अभिसार के विषय मे हैं। वेदना के नहीं, आनंद के! राधा के अभिसार का वर्णन--कृष्ण से मिलने की उत्कंठा। उस गीत के आनंद भरे शब्द, अभिसार की आकांक्षा, मानों जेउती को मुंह चिढ़ा रहे है। जेउती धीरे-धीरे उठ जाती है। उसकी सजावट आधी हुई है, दीप के कमरे की बत्ती बुझाकर दरवाजा खोल वह खड़ी हो जाती है। बाहर अंधेरे मे जुगनुओं के झुडों पर नजर पड़ती है। दरवाजा खोल देने पर गीत की आवाज और साफ सुनायी देती है। जेउती चुपचाप गीत सुनती है।

गीत समाप्त होने पर अंधेरे कमरे में टहलती है और जबान से गीत की पहली कड़ी को कविता की तरह गुनगुनाकर, धीरे-धीरे दीप के कमरे मे जाती है। दीप गहरी नींद में सोया है। चुपचाप वह कमरे से निकल जाती है। बीच का दरवाजा बंद कर ऊपर की कुंडी चढ़ा देती है। धीरे-धीरे बाहर निकल जाती है। फिर वापस आकर दरवाजा बंद कर देती है। अचानक किसी की आहट पाकर चौंक कर अंदर जाती है – अंजन के कमरे में।

समय निकल जाता है। रात का ग्यारह बज रहा है। जेउती फिर आती है। अंजन के कमरे का दरवाजा भी बंद कर देती है। आंखों में अद्भुत-सी दृष्टि! दरवाजा खोल अंधेरे की ओर चुपचाप खड़ी रहती है। अंजन और दीप के कमरों से "रोशनदान" से आता हुआ झीना उजाला मंच पर पड़ता है।

जेउती : ग्यारह बज गया। ऐसा अंधेरा! दुनिया भर का काला अंधेरा आकर इकट्ठा हो गया है। अंजन को नींद आ गयी है। सोया रह! दयालु मीत प्रकाश अच्छा है। कहता है कि प्रकाश की गलतफहमी मिट गयी है। मेरे अंजन ने इस बात पर विश्वास कर लिया है। रात–अंधेरी रात। ठीक है, तुम सोये रहो। तुम अपने कल्पित आनंद के बीच रहकर ही खुश रहो। जो कुछ दान करना है, मैं खुद दान कर दूगी। मेरा अपना श्रेष्ठ दान! मेरे प्यार का दान! तुम्हे प्यार करने का दान! अंजन, मेरी यह शिकायत तुम से जितनी है, उससे कहीं ज्यादा समाज से है। यह मेरे विरोध की आवाज है, प्रचंड विरोध की आवाज। और कोई जिसके खिलाफ आवाज नहीं उठाता। नही–बहुतों ने आवाज उठायी है, पर जिसे कोई स्वीकार नही करता–उसके खिलाफ आवाज!

(यहा तक आते-आते जेउती विकल हो उठती है। जेउती की ये बातें उसकी अपनी जबान से कहलवाये बगैर–यह आवाज जेउती की अंतरात्मा से प्रतिफलित होकर आ रही है–अगर टेपरिकार्डर के सहारे इसे नेपथ्य से कहलवाया जाय तो अच्छा हो। अचानक बाहरी गेट पर किसी को देखकर जेउती चौंक उठती है।)

जेउती : कौन है!

(दौड़कर भाग जाना चाहती है। अचानक लौटकर जल्दी से दरवाजा बंद कर सिटकनी लगा देती है। मानो कांप कर हांफने लगती है। तेजी से आकर अंजन और दीप के कमरों में कान लगाकर सुनती है। उसके चलने-फिरने में मर्मातक के साथ-साथ भयावह रूप उभर आता है। उस तरह कान लगाकर सुनने की स्थिति में बाहरी दरवाजे पर किसी की दस्तक की आवाज सुनायी देती है। आवाज सुनकर जेउती का चेहरा क्षण भर में पीला पड़ जाता है। वह तुरंत दीप

का कमरा खोल अंदर जाना चाहती है। पर दूसरे ही क्षण कुछ सोच कर रुक जाती है। मत्र-मुग्धा की भांति धीरे-धीरे कदम बढ़ाती वह बाहरी दरवाजे की ओर बढ़ जाती है। देखकर ऐसा लगता है मानो कोई मरा आदमी कदम बढ़ाता जा रहा है। वह अस्वाभाविक स्थिति में है।

दरवाजे की सिटकनी खोल, वह दीवार के पास खड़ी हो जाती है। हाथ में टार्च लिये प्रकाश अंदर आता है। उसके चेहरे पर एक निःशब्द हंसी खिल उठती है। मानो उसकी वह निःशब्द हंसी और लहजा यह जताना चाहते हों कि—"दरवाजा खोल दिया न? मैं जानता हूं आखिरकार जीत तो मेरी ही होगी।" टार्च की रोशनी जेउती के चेहरे पर डालकर वह पास आता है, और फुसफुसाती आवाज में कहता है--)

प्रकाश : जेउती!

जेउती : चुप, बात नहीं! हां, दो—
(प्रकाश की ओर हाथ बढ़ा देती है)

प्रकाश : हां, यह लो— (बहुत सारे रुपये निकालता है)

जेउती : रुपये, हां, दो-दो, तुम बड़े अच्छे हो।
(रुपये लेकर अद्भुत-सी तृप्ति से उलट-पुलट कर देखती है। चेहरे पर अजीब-सी हंसी खिल उठती है।)
रुपये - रुपये —

प्रकाश : हां, रुपये। तुम्हारे हाथों में वे रुपये हैं। इलाज होगा, अंजन चंगा होगा।

जेउती : रुपये! (परम तृप्ति से) आह, मेरे हाथों में ये तो सचमुच रुपये हैं। तुम लोगों को एक साथ इतने सारे रुपये कहां से मिलते हैं? मेरे हाथों की मुट्ठियों में आज दुनिया भर के रुपये हैं। ओह, रुपये इतने सुंदर - इतने सुंदर--
(आखिरी शब्द वह रुलाई के लहजे में कहती है -- पर नोटों को अपने गाल-मुंह से लगाती है -- मानो रुपये का स्पर्श उसके तन-मन में गहरा आनंद ला रहा है। वह बात ऐसे ढंग से खींच-खींच कर करती है—मानो पागल हो गयी हो। बार-बार रुपयों को चूमती है।)

प्रकाश : जेउती! (हाथ पकड़ता है।)

जेउती : हां तो, तुमने तो यों ही नहीं दिया है। तुम्हे तो बदला मिलना चाहिए! बदला!

प्रकाश : जेउती! तुम्हें मैं जिस रूप में भी क्यों न चाहूं, जैसे भी जो कुछ भी क्यों न कहूं, असल में मुझे तुम बड़ी अच्छी लगती हो। हां, बड़ी अच्छी--बड़ी अच्छी!

ज़ेउती : (कुछ क्षण अस्वाभाविक रूप से लंबी सांस लेकर कहती है—)

--हा - हां -- कहते जाओ। रुक क्यों गये? सुंदर ढंग से शब्दों को सजाकर कहना, ताकि उनका मतलब साफ न हो जो मोह के जाल में फंसा ले।

प्रकाश : जेउती!

जेउती : कहते जाओ - रुकते क्यों हो? उस दिन जो कहा था, वे बातें, हूं! कहते जाओ, "किस देश के राजकुमार ने अपनी मां से शादी की थी?" – कहो। (कुछ नाराजगी से--) कहते क्यों नहीं? दुनिया में कहीं-कोई अनहोनी घटना हो गयी हो तो उसे ही अपने युक्ति-तर्क से चिरंतन रूप दे दो!

प्रकाश : जेउती! तुम्हारी तबीयत शायद अच्छी नहीं है।

जेउती : उहूं–झूठ है! तुम भी न जाने ये सब क्या-क्या झूठ बकते हो। मैं तो बिलकुल अच्छी हूं। और नही तो क्या इस ढंग से कर्तव्य किये जा सकती थी? और कर्तव्य? "योग्यता" की तुम्हारी जो परिभाषा है, उसी तरह "कर्तव्य" की मेरी परिभाषा कहीं विकृत रूप में तो प्रकट नहीं हुई है न? प्रयोजन–हां, इसे ही कहा जाता है–समयोपयोगी होना! ठहर क्यों गये? इतिहास की व्याख्या करो, कहते जाओ।

प्रकाश : जेउती! मैंने कोई धोखेबाजी नहीं की है? मैं जो विश्वास करता हू...

जेउती : मगर मैं अब किसी पर विश्वास नहीं करती। तुम्हें सिर्फ इसलिए कहने को कह रही हूं, ताकि वह आहुति के पहले रण-वाद्य का काम करे! आवेश में ला दे–उत्तेजना ला दे–क्योकि मै "देह और मन" दोनों को साथ-साथ स्वीकारती हूं।

प्रकाश : तो फिर तुम....

जेउती : उहूं–नहीं-नहीं। आज मैं तुम्हारी राय ही मान लूंगी। बदला-बदला, इसान से बदला। मुझे पता नहीं, मेरी तरह पूरी अनुभूतियों से इस तरह से किसी ने बदला लिया है या नहीं। पर मैं इस तरह से जो आत्माहुति दे रही हू, क्या उसके लिए कोई नही रोयेगा? इसका निराकरण नहीं चाहेगा? (जेउती क्षणभर रुकती है। दूसरे ही क्षण मानो सोचती है "सब झूठ है। कोई भी निराकरण नहीं चाहता।" चुपचाप सिर हिलाकर लंबी सांस ले कर कहती है--)

प्रकाश! मैं - तै...या...र...हू।

प्रकाश : जेउती! मुझे मालूम है, आखिरकार मेरा विचार ही जीतेगा।

(प्रकाश जेउती के पास आता है। अचानक जेउती पीछे हटकर कहती है)–

जेउती : नहीं - नहीं - नहीं। मुझे रुपये की जरूरत नहीं, मैं ऐसा नहीं कर सकती। मेरा मन...प्रकाश, ये रहे तुम्हारे रुपये! तुम चले जाओ।

(रुपये उस पर फेंककर जेउती उन्मादिनी-सी दौड़ कर दरवाजा खोल अंजन के

कमरे में घुस जाती है। प्रकाश धीरे-धीरे रुपये बटोर कर ले जाना चाहता है। पुनः जेउती अचानक प्रकाश के पैर पर गिर कर रो उठती है। अंजन के कमरे का दरवाजा खुला रहता है।)

नहीं-नहीं, तुम न जाओ! मुझे रुपये चाहिए। अंजन को चंगा होना है। रुपया—आज मुझे रुपया चाहिए। (अंदर किसी तरह की आवाज होती है। अजन जग उठा है। अजन अंदर से ही ''जेउती-जेउती'' पुकारता है।)

अजन : (अंदर से ही) जेउती-जेउती! (खासता है)

(जेउती चौंक उठती है। मंच की झीनी रोशनी भी अंधकार के बीच कापते रहकर, जैसे एक भयावह परिस्थिति की सूचना दे रही हो।)

जेउती : प्रकाश, अंजन जग गया है। तुम चले जाओ! नहीं-नहीं, तुम न जाओ। न जाओ। जा नहीं सकते। तुम—तुम छिप जाओ।

(प्रकाश को बाहर के बरामदे के अंधेरे में छिपने के लिए धकेल देती है। अंजन आता है।)

अजन : जेउती?

जेउती : तुम - भला उठकर चले क्यों आये?

अंजन : अचानक आंख खुल जाने पर देखा, कि तुम नहीं हो!....

जेउती : हां, मैं तो नहीं रही। —अंजन, मैं अब नहीं रही! मुझे - मुझे मतलब कि मुझे नींद नहीं आयी, इसी कारण—

(जेउती जाकर बिजली के स्विच पर हाथ रखती है। बत्ती जल उठी। साथ ही अंजन उसे रोककर फिर अंधेरा करता है।)

अंजन : रहने दो जेउती! उसकी जरूरत नहीं।

(स्विच पर रखे जेउती के हाथ पर अंजन का हाथ! अंजन प्यार से जेउती को पास खींच लेता है।) जेउती! भला तुम इतनी बेचैन क्यो हो रही हो? अगर मरना ही है तो फिर मुझे खुशी-खुशी चला जाने दो जेउती। बेकार आंसू बहाकर तुम भी ''सामान्य'' न बनो जेउती!

जेउती : क्या कहा? सामान्य? ऊहूं, तुम्हारी जेउती सामान्य नहीं है। तुम्हें तो पता नहीं अंजन, कि तुम्हारी जेउती है क्या? तुम्हारी जेउती हजार कोशिश करे तो भी वह सामान्य नही हो सकती। तुम्हारी जेउती के लिए आज 'सामान्य' होना ही असामान्य हो गया है। मगर जेउती 'सामान्य' को बहुत पसंद करती है। शायद इसी कारण वह सामान्य नही बन पायी है।

अंजन : भला तुम ऐसी बातें क्यों कह रही हो जेउती?

जेउती : चलो, अंदर चलें! इस तरह जगे रहने पर तुम्हारी तबीयत बिगड़ जायेगी।

अंजन : तुम मेरे सवाल का जवाब नहीं दे रही हो जेउती!

जेउती : (मानो खुद पर व्यंग्य करती हुई) शांति की पुजारिन हूं मैं! इसी कारण तुम्हारे वास्तविक प्रश्न को शायद भूल जाना चाहती हूं। (क्षणभर अंजन के चेहरे की ओर देखती रहती है। फिर धीरे-धीरे उसके मुंह-आंखों पर उत्तेजना, विकलता दिखायी देती है। कहती है--)

जेउती : अंजन, तुम्हीं ने तो मेरी जिंदगी में विलास के छंदों को रूपायित किया था। (उदास हंसी हंसती है। अपने को संयमित कर कहती है)--चलो अंदर चलें।
(दरवाजा बंद कर देती है। मगर अंजन आगे बढ़कर फिर खोल देता है और खुले दरवाजे के पास खड़ा हो अंधेरे आकाश की ओर नजर डालता है। जेउती डरी-सी अंजन को देखती है।)

अंजन : दरवाजा बंद करने की जरूरत नहीं है जेउती। अंधेरी रात की यह हवा बड़ी अच्छी लग रही है। (खांसता है)
(हवा पहले से ही चल रही थी।)
अंदर, बिस्तर, अंदर – ओह असहनीय है! छुटकारा चाहिए।
बाहर – सिर्फ छुटकारा, मुक्ति!

जेउती : अंजन, भला जिंदगी में किसी को कभी छुटकारा मिलता है! मुक्ति मिलती है? मिलता है सिर्फ मुक्ति के लिए संग्राम–
(जेउती मंच के लगभग बीचोबीच आ जाती है। जेउती की बातो का जवाब देने के लिए अंजन भी पास आता है। विकलता से सांत्वना देने की कोशिश करता है--परंतु मानो अपने को ही सांत्वना दे रहा हो।)

अंजन : जेउती, अधीर न होओ। अंधेरे के बाद जरूर उजाला होता है। हमारी रात भी बीतेगी जरूर। (मानो क्रमशः आवेग-प्रवण हो उठता है।) दुख होगा हमारे जीवन का अलंकार–विषाद जड़ित आनंद, हंसी-जैसा पवित्र!

जेउती : जानती हूं, संग्राम को दुख नहीं कहते अंजन! मगर जब देखती हूं कि संग्राम को षड्यंत्र ढंक रहा है तब–

अंजन : षड्यंत्र?

जेउती : हां, मानवता के चारों ओर बुद्धिजीवी का तांडव-नर्तन! पर– पर इस जाल को समाप्त करना ही होगा। उफ्...
(उफ् धीमे से कहती है। सामान्य रूप से थक जाने पर लोग जैसे कहते हैं, वैसे ही कहती है। अपने चेहरे को हाथ से सहलाती है। मानो यंत्रणा घटाने का प्रयास कर रही हो।)

अंजन : (पास आकर प्यार से कहता है) जेउती, क्या तुम्हारी तबीयत अच्छी नहीं है?

जेउती : नहीं, तबीयत अच्छी है। (कुछ हटकर) मैं पूरी तरह स्वस्थ हूं। वर्तमान युग की मांगों को स्वीकार कर इस क्षण में मेरे "देह और मन" एक साथ काम करने को समर्थ हो गये हैं। (अंजन के पास जाकर) अजन, जानते हो, वह काम कौन-सा है?

अंजन : जेउती!

जेउती : कोई नहीं जानता, पर आज जैसे उसी की जरूरत हो गयी है।

अंजन : जेउती, ऐसा लगता है कि मेरी जिंदा रहने की अभिलाषा ही तुम्हें बीच-बीच में परेशान कर रही है। तो मुझे भी अफसोस होगा। क्योंकि मैं जिंदा रहने के लिए चाहे जितनी ही कोशिश क्यों न करूं--तुम्हें तो यह बात मालूम ही है कि "जरूरत हमेशा खूबसूरत नहीं होती।"

जेउती : (हसकर, वेदना से कहती है) और जिस जरूरत के पीछे निस्वार्थ त्याग रहे वह? जिस जरूरत के पीछे सकरुण मंगल-अभिलाषा हो, वह?

अंजन : जेउती, तुम जब बेचैन होती हो, तो मुझे भी चैन नहीं रहता। मगर उत्तेजना मैं सहन नहीं कर पाता। मुझे बड़ी थकान लग रही है।

(थका-सा अजन एक कुर्सी पर बैठ जाता है। जेउती झट उसके पास जाकर बालों को सहलाती, आवेश से कहती है)

जेउती : तुम चंगे हो जाओगे -- जरूर होओगे। यह दुनिया बड़ी खूबसूरत है! मानव-जीवन सुंदर और अर्थपूर्ण है। हालांकि उन सबने इसे विषमय बना डाला है, फिर भी यह खूबसूरत है। (अजन बीच-बीच मे खांसता है)

अंजन : जेउती, मुझे अपनी जिंदगी से प्यार है।

जेउती : प्यार मुझे भी है जिंदगी से! इसी कारण तो मैं वह काम कर सकूंगी। लोग हो सकता है कि कहे, मेरा यह त्याग तुमसे प्यार के कारण है। लेकिन नहीं, चूंकि मुझे अपने से प्यार है, इसी कारण मैंने यह राह अपनायी है। तुम्हारे बीच ही मेरा अपना रूप प्रकाशित है--तुम्हीं तो मेरा सहारा हो।

अंजन : जेउती! (विस्मय से)

जेउती : (आवेग में) अजन!

अंजन : जेउती, आज मै पंगु हूं। लेकिन मेरी भी कितनी सारी कल्पनाएं हैं।

जेउती : हा, कल्पना एक-दूसरे के स्वर में स्वर मिलाकर एक हो जाना, यह तो हम दोनों की ही कल्पना है। जिस कल्पना का परिणाम किसी दूसरे को जरा भी परेशान

करना नहीं है, जो कल्पना मुक्ति का, छुटकारे का संदेश ले आती है, वही हमारी कल्पना है... जिसमें कर्ममय जीवन उदय के पथ के परिणति-स्वरूप अपनी एक दुनिया हो। (शांत भाव से हंसती है, मानो खुद पर ही व्यंग्य कर रही हो।) पर ये कल्पनाएं बड़ी रंगीन हैं।

अंजन : जेउती, हमें अपनी कल्पना को सफल बनाना ही होगा।

जेउती : मगर वे तो ऐसा होने नहीं देंगे।

अंजन : (उत्तेजना में खड़ा हो जाता है) कौन हैं वे?

जेउती : वे, जिन लोगों ने इस दुनिया की हवा को विषैला बना रखा है। (अचानक बाहर बरामदे में किसी की आवाज होती है। छिपे हुए प्रकाश के हाथ से टार्च के गिरने की आवाज।)

अंजन : कौन! किसकी आवाज है? (बाहर जाना चाहता है। दरवाजे के पास पहुचता है।)

जेउती : न जाओ, न जाओ!
(जेउती बावली-सी जाकर राह रोकती है)
—यह कुछ नहीं है।
(जेउती फिर अस्वाभाविक हो उठती है)
—सुनो, मैं तुम्हें धोखा दूंगी। मैं चली जाऊंगी।
तुम तपेदिक के मरीज हो – तुम...
(अंधेरे के बीच का रात का झीना-सा उजाला भी मानो कांप उठता है।)

अंजन : जेउती। (चीख उठता है)

जेउती : तुम पंगु हो! मेरी तो जवानी है। अभिलाषाएं हैं। प्रवृत्तिया हैं!

अंजन : (बावली-सी जेउती की बांहें पकड़कर) और तुम्हारा मन?

जेउती : हुंह, मन? मन का कोई मूल्य नहीं। मन को छोड़कर जिंदा रहना सीखूगी।

अजन : (जेउती के पास से हटकर) जेउती, तुम्हारी इस तरह की बातों से मै दंग रह गया हूं। यह तो मानो विजयदशमी के समारोह का मेला है—जिसमे विदा की करुण रागिनी होती है, यह विदाई-सभा का प्रारभ-गीत है। मुझे मालूम है, मेरी ही वजह से तुम्हारी ऐसी स्थिति हुई है। मैंने तुम्हारी आंखों की नींद भी छीन ली है।

जेउती : अं-ज-न-

अंजन : मैं ठहरा पंगु! मृत्यु-पथ-यात्री! फिर भी तुम्हें पकडे हुए हू। ऐसे किसी गतिशील इंसान को बांधे रखने का मेरा कोई अधिकार नहीं है। हां, कोई अधिकार नहीं—कोई—

(खांसी आ जाती है। वह बात नहीं कर पाता। खासते-खासते थक-सा जाता है। उसकी खांसी के बीच ही जेउती विकलता से कहती है)—

जेउती : अंजन! अंजन! तुम्हारा इलाज मैं कराऊंगी। तुम चगे हो जाओगे। अजन, तुम जरूर चंगे हो जाओगे।

अंजन : जेउती!

जेउती : अंजन, तुम अंदर जाओ। भला, तुम चंगे क्यों नहीं होओगे? मैं तुम्हें चंगा करने का इंतजाम करूंगी। जाओ, तुम चले जाओ।

अंजन : रहने दो जेउती। यहीं अच्छा लग रहा है। उस घने अंधेरे के अदर देखकर ऐसा लग रहा है—

जेउती : नहीं - नहीं, तुम्हें अंदर जाना ही होगा अजन!

(अजन एक बार जेउती की ओर नजर डालकर, अदर जाने को कदम बढ़ाता है। कहता है--)

अंजन : अच्छा ठीक है! चलो....

जेउती : नहीं - तुम्ही चले जाओ।

अजन : और तुम?

जेउती : मुझे अच्छा नही लग रहा। मैं तुमसे अनुरोध करती हूं, कुछ समय मुझे अकेले रहने दो। तुम जाओ, कुछ देर बाद में आ रही हूं। जाओ - अंजन - तुम चले जाओ।

अजन : (मान और वेदना से) ठीक है, अब तुम्हें परेशान नहीं करूगा। अगर तुम्हें अकेले रहकर शांति मिलती हो तो मैं अब रुकावट नहीं डालूगा, जेउती। (जाता है)

जेउती : (अजन को जाते हुए देखती हुई) चले गये। मुंह फुला लिया। मगर मैं मुंह फुलाऊं तो किससे? ओ, शायद प्रकाश फिर आयेगा। हा, प्रकाश! -- बढ़िया अंधेरा है। (प्रकाश फिर आता है)

प्रकाश : जेउती!

जेउती : तुम - अभी गये नही? नहीं - नहीं। दो, रुपया दो -- रुपया।

प्रकाश : हां, यह है रुपया। इस रुपये से अजन चगा हो जायेगा। (रुपया देता है।) (जेउती रुपया लेती है।)

जेउती : हा, अंजन चगा होगा। जरूर होगा। (बड़े विश्वास से) ओह, रुपया! बढ़िया अंधेरा हुआ है। अजन कहता है — गर्तों मे कुछ ऐसा गहरा सौंदर्य सुसुप्त होता है, जो सब कुछ को एकाकार बना देता है।

(जेउती की बातों के बीच में ही प्रकाश कहता है--)

प्रकाश : जेउती!

(जेउती किसी बात की परवाह नहीं करती। लगातार कहे जाती है--)

जेउति : हां-हां, रातें बड़ी अच्छी होती हैं। रात के अंधेरे में पाप करना भी अच्छा रहता है। चलो--

(अचानक जेउती प्रकाश को बांहों में भर लेती है। उसकी छाती के बीच उन्मादिनी-सी घुसकर लगभग आत्म-समर्पण कर देती है। बाहर अंधेरे की ओर दोनों कुछ कदम आगे बढ़ते हैं। मंच का झीना-सा प्रकाश भी कापने लगता है। मानो एक भयंकर क्षण आ गया है।)

(अचानक दिमाग सही न रख सकने के कारण जेउती प्रकाश को उसी तरह पकड़े रखकर पागल की भांति खिलखिलाकर हंसने लगती है।)

हाः - हाः - हाः - हा. --

प्रकाश : जेउती!

जेउती : हाः - हाः - हाः - हाः

(भयंकर रूप से ठहाके लगाकर हंसती है। अंजन चौंक कर दौड़ा आता है।)

अंजन : जेउती! जेउती! (चीख पड़ता है।)

(साथ ही जेउती ''अंजन'' पुकार कर चीखती हुई अंजन के पास दौड़ जाती है।)

जेउती : अजन! रुपया! तुम्हारे दोस्त ने दिया है बहुत-सा!

(अजन के सामने हाथों की मुट्ठियां खोल देने पर रुपये बिखर जाते हैं। अजन बत्ती जला देता है। मंच पर रोशनी हो जाती है। प्रकाश पर नजर पड़ते ही अंजन सिहर उठता है। ''प्रकाश'' कहता हुआ प्रकाश की ओर गुस्से में भरकर आगे बढ़ जाता है। प्रकाश मौन खड़ा रहता है।)

अंजन : प्रकाश!

जेउती : अंजन! (दोनो के बीच में आ जाती है।)

छिः - छिः - छिः! तुम प्रकाश को मार नहीं सकते। एक प्रकाश को मारकर मैं तुम्हें सामान्य बनने नहीं दूंगी। छि· - छिः - छिः सामान्य, छिः - छिः - छिः ...

(जेउती की बाहें पकड़ कर अंजन जोर से झकझोर देता है।)

अंजन : जेउती - जेउती!

(जेउती हंसना बंद कर एक बार अंजन की ओर देखती है। दूसरे ही क्षण हसी हंसने के बदले विकल हो रो पड़ती है।)

जेउती : अंजन! (रोती है।)

अंजन : (जेउती को बाहों में भरकर) ठीक ही कहती हो जेउती! सिर्फ एक प्रकाश को मारकर कोई फायदा नही। प्रकाश की सर्जना जिसने की है, उस विराट के विरुद्ध जी-जान से खड़ा होना पड़ेगा। जेउती! (आवेग से)

जेउती : अंजन!

अंजन : चलो जेउती।

(जेउती को लेकर अंजन चला जाता है। रुपये मंच पर बिखरे पड़े रहते हैं। अब तक प्रकाश एक ही जगह मूर्ति-सा खड़ा था। क्षण भर बाद डर के मारे इधर-उधर देखता हुआ अचानक उसे अनुभव होता है, 'इस दुनिया में मैं अकेला हूं!')

प्रकाश : (क्षण भर बाद मानो खुद से ही पूछ रहा हो।) हूं, मैं अकेला हूं? (अपने सिर के बाल खींच कर देखता है। पीछे की ओर से नेओग आकर प्रकाश के कंधे पर हाथ रखता है। प्रकाश चौंक-सा उठता है। —कौन? (डर के मारे पीछे हट जाता है।) —तुम? नेओग?

नेओग : अन्नदाता! भला मैं क्या यहां आये बगैर रह सकता था? तुम्हारी पराजय, तुम्हारा परिवर्तन, तुम्हारा आत्म-द्वद्व इस जिंदगी में अगर देख न सका, तो मेरी अतृप्त आत्मा को भला शांति मिल सकती है?

(सतोष की भावना से आंखें मुंद जाती हैं।)

प्रकाश : नेओग!

नेओग : (प्रकाश के कंधे पर हाथ रखकर) चलो मीत! (प्रकाश नेओग की ओर एक बार अचरज से देखता है। दूसरे ही क्षण मे अंजन के कमरे की ओर कदम बढ़ाता है।)

नेओग : (अचरज से) प्रकाश, उधर कहां चले?

प्रकाश : अंजन के यहां!

नेओग : प्रकाश!

प्रकाश : अंजन को बता देना होगा कि भले ही जेउती शुद्ध हो, पर अजन शुद्ध नहीं है। जेउती के सामने अंजन ने बडे अच्छे इंसान का अभिनय किया, जैसे वह कितना महत् हो। परंतु अंजन को यह समझा देना होगा कि वह कितना नीच है। इंसान के हिसाब से मुझसे भी कितना हीन है। मै जो कुछ स्वीकार करता हू, या विश्वास करता हूं, वही करता हूं—और किया था। परंतु अजन को खुद जिस पर विश्वास नही, वही उसने किया था। सब कुछ जान-बूझकर भी मुझे बुलाकर, जेउती के

सामने ऐसा अभिनय कर रहा है मानो उसे कुछ भी पता नहीं। मगर जेउती न मिली तो मैं उसकी मदद नहीं करूंगा, भला यह बात अंजन की अपेक्षा और कौन ज्यादा जानता है?

नेओग : प्रकाश!

(प्रकाश की बातों के बीच ही नेओग ''प्रकाश'' कहकर पुकारता है। पर प्रकाश उस पर ध्यान नहीं देता।)

प्रकाश : अंजन का यह मुखौटा उतार ही देना चाहिए।

(तेजी से अंदर चला जाता है।)

(मंच पर अंधेरा उतरने के साथ नाटक की यवनिका भी उतर आती है।)

(पटाक्षेप)

उलझन

भोला कटकी

पात्र

गायन बरा

बुआ

कण बापू

रंगीली

गांव का मुखिया

यज्ञ

ठगी

(गायन बरा का मकान। समय—सवेरे लगभग आठ बजे। बैठक के कमरे में एक टूटी कुर्सी और दो मोढ़े रखे हुए हैं।)

(गायन बरा पसीने-पसीने होकर प्रवेश करता है।)

गायन बरा : (मोढ़े पर बैठकर) अरे ओ, कौन, कहां हो, रे?
(अंदर झांक कर) रंगीली, ओ रंगीली! अरे कण बापू!

नेपथ्य में बुआ : अब फिर क्या हो गया?

गायन : हां, जरा तंबाकू ले आ सजाकर। (हाथ मे हुक्का लिये बुआ आती है।) हां, दे इधर। (दो-तीन कश लगाता है) अरी, ये सब-के-सब भला कहां मर गये है?

बुआ : हां, मुझी से पूछो। मैं क्या उनके पीछे-पीछे फिरती हूं?
(चली जाती है।)

गायन बरा : (अचानक झटका-सा खाकर) अरी, वे कौन कुत्ते के बेटे-बेटिया क्या-क्या कहते हैं, सुना नहीं! बैठकर खा-पी सके जरा, इतनी-सी भी शांति नहीं। (तंबाकू पीता है) और कितना क्या सोचे! आज कहना है कोई कि तुम्हारे बेटे की ऐसी करतूत है! कल सुनोगे कि नहीं, तुम्हारी लड़की ही निकल गयी। ओह, हे प्रभु! इस संसार से ही मुझे उठा क्यों नहीं ले जाते? ओ-- (कण बापू आता है।)

कण बापू : बप्पा, बप्पा, एक बात हो गयी है, जानते हो न।

गायन : अरे, फिर तू कहीं कुछ लगा-भिड़ाकर आ गया क्या? अरे, तुम सब मुझे मार क्यों नहीं डालते!

कण बापू : देख रहा हूं कि गुस्सा तो हमेशा तुम्हारी नाक पर रहता है और उधर भले ही तुम जो कुछ कहो-सुनो! अरे बप्पा, बड़े जीजाजी ने कहला भेजा है, रंगीली दीदी को छोटे जीजाजी आज आकर ले जाने वाले हैं। तुम्हें घर में ही रहने को कहा है। (जाना चाहता है)

गायन : अरे, तुझसे तेरे जीजा की मुलाकात कहां हुई?

कण बापू : क्यों, मैं कल उनके यहां गया था न!

गायन : अरे, क्या मैंने तुझे तेरे जीजा के यहा भेजा था, आ! आज तीन दिन से काली गाय नहीं आयी है। तुम लोगों को भी तो जरा सोचना चाहिए। अरे, तुम सब मेरा दिमाग क्यों चाटते रहते हो!

कण बापू : मैं गाय को ढूंढ़ने भी तो गया था।

गायन : अरे, तू किस दुनिया में ढूढ़ने गया था, अ? जब गाय के आने का

समय होता है, तू भाग निकलता है। खेल, इसका तो है सिर्फ खेल, और खेल। अरे, इस तरह से चक्कर लगाने पर भला काम कैसे चलेगा? अरे, तेरे कलेजे में अगर इतना ही जोर है तो घर का एक तिनका भी क्यों इधर से उधर नहीं कर सकता?

कण बापू : तुम सबको तो सिर्फ गेंद खेलना ही दिखाई पड़ता है। तुम लोग भला फुटबाल के खेल का मोल क्या समझो?

गायन : (गायन खदेड़ते हुए) क्या कहा, हंसी उड़ा रहा है कम्बख्त! एक ही घूंसे से दिमाग ठिकाने लगा दूंगा। मुझे पहचाना नहीं? देख रहे हैं न, दिन-रात गेंद खेल कर हमारे घर को कप-मैडल आदि से भर दिया है। ओह (फिर बैठकर) यह बुड्ढा अगर हाथ भर कपड़ा न दे, तो चलता नहीं उसके चूतड़ में—उसका इतना घमंड। आज से—अगर कभी तेरे गेंद खेलने का नाम सुना तो (कण बापू डरता-सा चला जाता है) ओ रंगीली, जरा तांबूल का बटा[1] इधर ले आना। (तांबूल का बटा लिये रंगीली आती है।)

रंगीली : बप्पा, तांबूल[2] तुम्हीं काट लो जरा। मैं चूल्हे पर थोड़ा-सा पानी चढ़ा आऊं।

गायन : कोई जरूरत नहीं री, पानी-वानी की। तू तांबूल ही काट दे जरा। (कुछ रुककर) अरी, तुम सब घर में न रहकर कहां मरने निकल जाते हो? अंय!

रंगीली : मैं उन काका के यहां से जरा-सी चाय-पत्ती लाने गयी थी।

गायन : क्या कहा? चाय-पत्ती मांगने गयी थी, अरी, मैंने तो परसों ही छटांक भर चाय-पत्ती ला दी थी, क्या सब कुछ खत्म हो गया? अरी—यह सब तो मुझे बिलकुल नंगा फकीर बनाकर ही रहेंगे।

रंगीली : कल कई मेहमान आये थे न! और बप्पा, कण बापू को कहीं गाय की खबर मिली या नहीं?

गायन : एह-हे - तू भी है एक। क्या वह गाय ढूंढता फिरा है? मैं समझता हूं सब (लंबी सांस लेकर)। इस लड़के से भी मुझे कोई सुख मिलने वाला है—नहीं। उसके लिए तो सिर्फ खेल है, सिर्फ खेल।

रंगीली : यह लो बप्पा। तांबूल खाओ। मैं दो-चार कपड़े धो-पटक आऊं!

गायन : बेटी, जरा ठहर, एक बात सुन जा। यह क्या कहते हैं, तेरे उस कण

---

1. असमिया क पान-दान
2. सुपारी

		बापू से तुम लोगों के बड़े जीजा ने कहला भेजा है, अरे वह – वह खुद आकर तुझे ले जाने वाला है। मेरी बेटी। तू और ज्यादा झमेला न बढ़ाना... क्योंकि तू तो आखिर देख ही रही है, मैं... अकेला आदमी और कितना सोचूं--हां–
रंगीली	:	बप्पा, मुझसे यह सब न होगा। मैं भले ही दूसरों के यहां कताई-बुनाई कर गुजारा कर लूगी, पर वहां–
गायन	:	रंगीली बेटी। भला तू ऐसा क्यों कह रही है? बेटी, आदमी का मन हमेशा एक ही जैसा नहीं रहता। ओह! यह हो सकता कि...
		(बाहर गांव के मुखिया की आवाज)
नेपथ्य में मुखिया	:	बरा, ओ गायन बरा, घर में हो या नहीं?
रंगीली	:	अब आ पहुंचा यह कुटिल। (हुक्का ले कर चली जाती है।)
गायन	:	ओ हो, गांव बूढ़ा[1]। मैं आवाज से समझ ही नहीं पा रहा था। कृष्ण-कृष्ण (दोनों एक-दूसरे को नमस्कार करते हैं) –बैठो।
मुखिया	:	नहीं, नहीं, बैठना-वैठना बिल्कुल नहीं। मुझे बहुत जल्दी जाना है–तुम्हारे उधर के, उस देंगरी के यहां जाना है। (कुछ रुककर) मैं तो सिर्फ यहां उस बैठक की बात की याद दिलाने आ गया–मुझे लगा कि कहीं शायद तुम भूल न जाओ।
गायन	:	किस बैठक की बात कह रहे हो तुम।
मुखिया	:	अरे - हेंह - वही गुनाई की लड़की की।
गायन	:	ओ - मगर किस लड़की की, कहा तुमने?
मुखिया	:	ओह् - ओ, वह क्या कहते हैं तुम्हारा... अरे वही... वही, फे... फे... फेचेंग की। वह जो पोखरे के किनारे का, यानी–अरे वही जिसे चेनाइ टेकेला ले गया था। देखो, शाम को उस बड़े "नाम घर" का भी एक चक्कर लगा लेना। (कुछ ठहर कर, लौट आता है) गायन बरा, जरा ठहरो। अचानक एक बात याद आ गयी। बात यह है कि अब तुम बताओ कि भला तुम सोचते क्या हो?
गायन	:	हां, इसका तो कोई अता-पता ही नहीं।
मुखिया	:	हां, एक बात। क्या अपनी उस लड़की को पहुंचा आये या नहीं?
गायन	:	अरे अब इसके बारे में कुछ पूछो मत। मैं तो उसी बारे में गुस्सा

1. मुखिया

हो रहा था। वह तो जाती भी नहीं, कुछ करती भी नहीं। मैं तो बड़ी परेशानी में फंस गया हूं, गांव बूढ़ा!

मुखिया : वही तो—अरे—(पास आकर) अरे तुम उसे जल्दी से जल्दी छोड़ आने का इंतजाम करो। समझे न! नहीं तो आगे चलकर बुरी तरह फंसना पड़ेगा। (गंभीर होकर) गायन बरा, मैं कल अपने मौजादार के यहां से पोथी पढ़ना खत्म करने के बाद जब लौट रहा था, उस सतिनी पोखरी के किनारे केंदू पेड़ के तले देखा कि दो जने बैठे हुए थे—खैर अभी मैं उनके नाम नहीं बता रहा—हे राम! तुम्हारी सातों-आठों जबानों से वह बात निकल रही है। समझे!

गायन : क्या हुआ - क्या हुआ? किसके बारे में कह रहे हो तुम?

मुखिया : ओहो, तुम भी कैसे हो? अरे, कहते हैं न कि कओंतेइ कला, योंतरते शला.... कहने को कह दिया, चरखे में शलाख दिया। अरे तुम्हारी बिटिया के बारे में ही कह रहा हू। तुमने वह क्या कहा—ओहो तुम अगर रहते वहा तो बिलकुल ''रडनमाटी-गुवाहाटी'' हो जाता। मुझे तो रात भर नींद ही नहीं आयी। अरे, इसका इस पार या उस पार किनारा कर दो। मैं तो भई आंख से जो देख आया, जबान से उगल दिया। आगे अब मुझ पर कोई इलजाम न लगाना हां! (जाना चाहता है)

(तंबाकू लिये रगीली का प्रवेश)

रंगीली : हां, यह लो बप्पा!

मुखिया : (मुड़कर) ठीक है, दे तो, दो कश लगाता जाऊं। (तंबाकू पीता है) और हां, तो रंगीली, भला यह हठ तूने क्यों ठान रखा है? कह तो। यह सब तो बुरी बात है न आखिर!

रंगीली : तुम्हीं सबने तो मुझे नोच खाया है। तुम लोग हमेशा दूसरों के फटे में टांग अड़ाते हो, खोजते फिरते हो, मगर जब अपनी बात आती है तो...

मुखिया : यह हुआ न! अरे, इसीलिए तो आजकल हमने बात करना ही छोड़ दिया है। अच्छा कहता हूं, तो बुरा सुनते हो! अरी तू तो बाप का खा रही है, रह रही है बाप के यहां? मेरा थोड़े ही खलिहान लूट रही है? मगर समाज का भी एक बंधन तो है न?

गायन : मुखिया, मैं तो उसे हमेशा समझाता रहा हूं। कहता हूं, ओ बिटिया,

रंगीली : हां, वह तो मैं ही समझती हूं–

मुखिया : मगर जो भी हो, इस बात पर फिर तू जरा सोच-विचार कर लेना। तेरे इस बाप को लोग अब कैसी-कैसी बात सुना रहे हैं, कुल मिलाकर अब लगता है कि मुझे ही जाकर पहुंचा आना होगा।

गायन : मुखिया, सच कहता हूं, अब मेरा कुछ भी रह नहीं गया इस घर में।

मुखिया : मैं भी असल में कुल मिलाकर कुछ भी नहीं कहता। मगर तुम्हारे भी हाथ-पैर तो आखिर बंधे ही हैं, न पूछने पर भी बताना ही पड़ता है! मैं इधर ठहरा सरकार का पदाधिकारी मुखिया, और दूसरी ओर हूं पंचायत का मेंबर! तुम्हें तो पता है कि किसी की चुगली-चुगली लगाने का मेरा स्वभाव ही नहीं है। इधर तुम हो गायन बरा, उधर वे सब हैं; ठगी तो दारोगा-पुलिस लाने की बात बनाकर तुम्हें डरा रहा है। जरा सोचकर देखो तो, तुम्हारे चौदह-पुश्तों में भी जो घटना नहीं हुई, वैसी कोई घटना हो जाय, अगर तुम्हारे घर के चबूतरे पर कुल मिलाकर दरोगा-पुलिस को कदम रखना पड़े तो भला बताओ कुल मिलाकर तुम्ही कल समाज में मुंह कैसे दिखाओगे? (बैठकर) सोचो–जरा सोच-विचार कर देखो। मैं तो चूंकि तुम सबको बिल्कुल अपना ही समझ रहा हूं, इसलिए समझा रहा हूं। सोचो–और ज्यादा सोचो, तुम्हे मैं बिल्कुल अपना मान कर यह बात समझा रहा हूं। अच्छा–अब मैं - (जाने लगता है। फिर मुड़कर) कृष्ण-कृष्ण - रंगीली, बिटिया! तू भी इन बातों पर विचार कर देखना। हां–अब मैं–अब मैं चला। (प्रस्थान)

गायन : रंगीली, देख रही है न बेटी! किस तरह तिल का ताड़ बनाया जा रहा है?

रंगीली : बप्पा, न जाने तुम लोग बगैर समझे-बूझे ऊपर-ही-ऊपर बातें क्यों करते हो? (रोती है)

गायन : अरी तू भला रो क्यों रही है, हां? वह अगर लेने आयेगा तो मैं उसे कुछ फैसला करके ही भेजूंगा न। ऐसे ही थोड़े जाने दूंगा तुझे! (अदंर से ठगी और यज्ञ पुकारते हैं)

नेपथ्य मे यज्ञ : काका!... ओ काका!

गायन : हां–(बाहर की ओर देखकर) बिटिया, वे तो आ ही पहुंचे। तू जाकर जरा पानी-वानी चढ़ा दे–

रंगीली : मैं पानी-वानी नहीं चढ़ा सकती, जाओ। (चली जाती है)

गायन : उफ् राम, ठीक है, देखता हूं....
(यज्ञ और ठगी का प्रवेश)

यज्ञ : काका, क्या कर रहे हो?

गायन : ओ मुन्ना, तुम हो? अरे यों खड़े क्यों हो? बैठो, मुन्ने, दोनों बैठो, उधर ही।
(ठगी और यज्ञ बैठते हैं)

यज्ञ : काका, आज मैं खुद साद्रू को अपने साथ ले आया। अब और कुछ एक...

गायन : ठीक है, मुन्ने। यह तांबूल खाओ दोनों।(तांबूल देता है–दोनों लेकर खाते हैं) अच्छा तो यज्ञ, तुम जरा बातों पर ध्यान देना मुन्ने! तुम तो बचपन से ही देखते आये हो कि वह मेरी कितनी प्यारी बिटिया है। और शादी-ब्याह भी कितना जमकर किया था। उसमें तो तुम्हीं लोग थे न! असल में मुझे बड़ा दुख पहुंचा है मुन्ने! क्योंकि बेचारी लड़की की पीठ पर कोड़े मार कर नील डाले जायेंगे, अगर ऐसा पता होता तो मुन्ने, मैं कभी. .

यज्ञ : अच्छा काका, अब वह सब छोड़ो, मैं साद्रू को अपने यहां ही सब कुछ समझा-बुझा कर ले आया हूं। और फिर तुम्हें मुझसे अपने घर के बारे में क्या बताना है? क्या मुझे तुम लोगों के बारे में पता नहीं है?

गायन : मुन्ने, मैं पीठ पीछे कहने वाला आदमी नहीं हूं। कहा है न, कुटुंबी के सामने कहना, हाथी के सिर पर खोंचना[1]। लडकी को कहीं इस तरह से घर में बिठाये रखना न पड़े, इसीलिए तो बचपन में ही शादी-ब्याह का झमेला खत्म कर दिया है। इसी कारण तो उसे मारने-पीटने पर मेरा कलेजा सह नहीं सकता मुन्ने।

ठगी : ठीक है, अब मैं भी बता दूं, क्योंकि आमने-सामने ही सब कुछ बता देना अच्छा होगा। तुम भी सुना भैया, मैं कैसा आदमी हूं, यह तो तुम्हें पता ही है। मैं किसी की परवाह करने वाला आदमी नहीं हूं, समझे न! क्योंकि यह तो मेरा स्वभाव ही है। मेरे बचपन में चेचक निकलने के कारण एक छोटी-सी निशानी रह गयी, मगर उसी के लिए जैसी-तैसी बात कोई कहे तो मुझे सहन नहीं होता भैया।

1. मित्र को जो कुछ कहना हो, उसके मुंह पर कहो।

यज्ञ : अरे जरा ठहरो न भाई! मुझे भी तो कुछ कहने दो।

ठगी : कहो - कहो, क्या आपकी जबान को कोई..

यज्ञ : ओह - हो – ऐसी बातें मुझे बड़ी बुरी लगती हैं। आज ही दोनों पक्ष कुछ तय कर लीजिये। बात खत्म हो! काका, वह रंगीली है या नहीं?

गायन : है मुन्ने! भला रहेगी नहीं तो जायेगी कहां?

ठगी : भाई साहब, जानते हो न, मैं बहुत धीरज रखने वाला, सहने वाला आदमी हूं। गांव के सभी लोगों से पूछ लीजिये। मुझे बुरा कहें, ऐसी ताकत है किसी में? मेरे डर से भी सभी थरथर कांपते हैं, जानते हो या नहीं भैया!

यज्ञ : ए हे! जरा ठहरो न भाई। मुझे क्या वह सब मालूम नहीं? रंगीली, ओ रंगीली! –

रंगीली : (नेपथ्य में) क्या हुआ, वहीं से कहो।

यज्ञ : अरे जरा इधर निकल आ न!

गायन : अरे तेरा बड़ा भैया ही बुला रहा है, जरा निकल आ न बिटिया। तुझे कोई डर नहीं। मैं अभी मरा नहीं हू न! (रुककर) बिटिया, वह पानी-वानी भी साथ ही लेती आना।

(एक थाली में तीनकटोरी चाय लेकर रंगीली आती है। एक कटोरी बाप के सामने रखती है, दूसरी कटोरी यज्ञ को देती है और तीसरी थाली में ही रखती है)

यज्ञ : उस कटोरी को वहीं क्यों रखा, दे, आगे बढ़ा दे।

गायन : बिटिया री, तू भला यह सब क्या खड़ा करना चाहती है? आ! दे, उसे आगे बढ़ा दे बिटिया!

रंगीली : बप्पा, मैं... (रोती है)

ठगी : (उठकर) भैया, मैं यह चाय-वाय नहीं पीऊंगा। मैं चला, समझे न! जहां-तहां मुझे ही अपमान! साढू भाई ने ही मुझे इस जाल में फंसा दिया। मुझ कुत्ते को अगर यह पता होता कि ऐसा होगा तो यहां कहां...

गायन : अरे बेटे ठगी, बैठो न, बैठो! नारी जाति ठहरी न! स्वभाव से ही अबला है।

ठगी : ए हे! नारी जाति।

यज्ञ : अरे भाई, तुम इतने नाराज क्यों हो रहे हो?

ठगी : नहीं भैया, मैं बहुत सह चुका हूं, मगर एक बात है न भैया!

गायन : रंगीली, मेरे यहां अगर तू इस तरह से झमेला खड़ा करती रहेगी, तो मुझसे फिर मिल नहीं सकेगी! समझी!
(चाय की कटोरी को जोर से रखता है। उसकी करतूत देखकर रंगीली "दूं या नहीं" उधेड़बुन में पड़ जाती है और कुछ क्षण बाद ठगी की ओर कटोरी बढ़ा देती है)

यज्ञ : भाई, अब चाय पीओ! (ठगी को पकड़ कर बिठा देता है)

गायन : अरे बेटे, शायद ठंडी ही हो गयी चाय, पी बेटे, पी...
(तीनों चाय पीते हैं)

यज्ञ : काका, अब संक्षेप में बातें कर ली जाये! और तुम्हारी क्या राय है भाई? पहले जो हुआ सो हुआ, अब उन्हें सब लोग छोड़ दे। क्यों?

गायन बरा : यज्ञ, अगर मैं पहले की बातों को लेकर अड़ा रहता, तो अब तक जेल की हवा खानी पड़ती। मैं बिलकुल अनजान थोड़े हूं। मुन्ने, मैं रंगीली को खाते-पीते-बैठते समय हमेशा यही बात समझाता रहा हूं। लेकिन ठगी बप्पा, तुम्हें तो आज मेरे सामने साफ-साफ कह जाना होगा। क्योंकि तू अगर लड़की को ले जाकर फिर पहले की तरह ही मारता-पीटता रहेगा—तो उसे अपने यहां रखना ही अच्छा होगा।

ठगी : बाबू जी, मुझे, यह सब बातें सिखाने की जरूरत नहीं। आप पूछिये तो भला, मैंने आपकी बेटी को क्या नहीं दिया है! आप सुन रहे हैं न, भाई साहब! बीच में अगर कभी उसने कहा कि मैं जिले के सदर में जाना चाहती हूं तो मैं खुद उसे अपने साथ ले गया हूं और पांच-छः रुपये खर्च करके उसे घुमा-फिरा लाया हूं। अगर उसने कभी बायस्कोप देखने की इच्छा की तो वह भी दिखलाया। और जिस क्षण उसने जो कुछ चाहा, मर-खपकर भी मैंने उसे वह ला दिया। ऐसी हालत में फिर—

यज्ञ : हां, हां, वह सब तो है ही। भला क्या ये सब दुहराने की कोई जरूरत है?

ठगी : भाई साहब आप तो जानते ही हैं, गुस्सा चांडाल होता है। कभी गुस्सा चढ़ गया तो लगा दी दो-एक चपत। पर क्या उसी से—घर से निकल कर चले आना चाहिए था? अगर अच्छी जाति की औरत हो, तो वह कभी नहीं आती। मैं तो अब उसे छोड़ भी सकता हूं। धन-

धान ही मिलना चाहिए–भला औरत की क्या कमी?

गायन : अरे ठगी! यह सब क्या कहने की बात है? इस तरह आग-बबूला होकर सच्ची-झूठी, लंबी-चौड़ी बाते करने से तुम्हारी अपनी करतूत कहां ढंक सकती है? अगर अभी-अभी और दो-चार लोगों को मैं यहां इकट्ठा कर लूं तो वे लोग तुम्हे दोषी कहेंगे या मुझे?

यज्ञ : ओफ्-फो – अरे भाई, यही तो बुरी बात है न! मुंह में जो आये वही बात जैसै-तैसे कहना ठीक नहीं। आजकल वैसे कानून के मुताबिक लड़की की देह पर हाथ लगाना भी गुनाह है न! आज अगर, भगवान न करे, इस न्याय का दायित्व सरकार पर पड़े तो तुम भी जड-मूल से तबाह ही हो जाओगे न!

ठगी : अरे छोड़ो भी भाई साहब! दूसरे की औरत को किसी और के घर में रखने का विधान बताओ तो भला किस कानून में है? अगर लोग इस तरह से करेंगे तो मैं भी नजारा दिखा दूंगा! अभी तो देख रहे हो कि सहे ही जा रहा हू!

गायन : ओहो–भला तुम ऐसी बात किसलिए कहते हो? तुम्हारी औरत को लाकर हमने यहा घर में बंद करके नहीं रखा है। बाप के यहां क्या बेटी नहीं आती? और, बात यह है कि तुम भी अगर उसे मारते-पीटते नहीं, तो फिर भला वह आती ही किसलिए यहां?

(रंगीली का प्रवेश)

रंगीली : हां, मैं, जब सामने नहीं रहती तो मुझी पर दोष मढ़ते रहते हो। भला, ऐसा कौन-सा काम है, जिसे छोड़कर मैं तुम्हे खिलाया-पिलाया नही करती थी? मैं अब चली।

ठगी : क्या कहा? (थूक गटकता है) ओहो--देखते नहीं कैसा काम-धाम कर मुझे मानो बिल्कुल राजपाट पर बिठा रखा है।

यज्ञ : अरी रंगीली यह क्या हो गया है तेरे दिमाग में? तुझे तो यहां रहने की कोई जरूरत नहीं है न, तू जा–

रंगीली : नहीं नहीं, भैया जी, मैं तो--

गायन : रंगीली, तू इस तरह सामने जवाब न दे। भला क्या चाहिए तुझे यहा? (रंगीली जाती है) अरे बप्पा, तुम जरा शांत हो जाओ, शांत। इन सब बातो को अब ज्यादा तूल न दो बप्पा!

यज्ञ : अरे भाई, यह सब छोड़ो भी। भला यह सब क्या धरे रखने की बात है? अबला औरत ठहरी!

ठगी : नहीं, नहीं, भाई! अब मुझसे और कुछ नहीं होगा। जो जहां चाहे जाये, जहां चाहे मरे!

गायन : नहीं बेटे! यह सब छोड़ दो। मगर, एक बात का ध्यान रखना; तुम बेचारी उस लड़की के साथ वही सब न करना। क्योंकि वह प्यार में पली लड़की ठहरी। कभी-कभी भूल-चूक तो होगी ही। उसे जरा समझा-बुझा देना।

यज्ञ : जी हां, काका तो ठीक ही कह रहे हैं।

ठगी : ठीक ही कहें या बे-ठीक कहें। मगर भाई, एक बात है न! उधर मेरा घर भी तो अब घर नहीं रहा, बंसवाड़-तली हो गया है।

यज्ञ : सो तो होगा ही भाई! इसीलिए तो मैं सब-कुछ सीधा करके ला रहा हू।

गायन : मगर बेटा ठगी, तुम्हे तो अभी मेरे सामने धर्म को साक्षी मान कर शपथ खानी ही होगी।

ठगी : ऊंह! क्या मैं कभी धर्म से पीछे हटने वाला इंसान हूं? बताओ तो भाई, किसे छूकर मुझे शपथ खानी है?

गायन : ठीक है, तब तो सब कुछ ठीक ही है। तुम अब जाओ। मैं भी दिन-वार-तिथि आदि देखकर उसे पहुंचा आऊंगा। और...

ठगी : अब भला दिन-वार-तिथि और क्या देखना है? अगर जाना हो तो आज ही ले जाना है। नहीं—तो भला, इतनी दूर से आने की जरूरत ही क्या थी मेरी?

गायन : ठीक है। तब तो बेटे, आज ही उसे लेकर जायेंगे, और तुम जाओ।

यज्ञ : तो भाई, अब तो उठने का समय हो गया।

ठगी : ठीक है, चलो, मैं तो उठा हुआ ही हूं। आप ही तो... (दोनों उठ पड़ते हैं)

गायन : हां, तुम लोग अब जाओ बेटो। सूरज भी तो बिल्कुल लाल बनकर निकला आ रहा है? यह सब सांसारिक और... (ठगी और यज्ञ चले जाते हैं। गायन बरा भी मुड़कर अंदर जाता है)

(रंगीली का प्रवेश। थाली, कटोरी आदि एक जगह जमा कर अपने खयालों में डूबी रंगीली बड़ी उदास-सी बैठी रहती है।)

नेपथ्य में बुआ : रंगीली, ओ रंगीली! (प्रवेश) भला तू यहां यों पत्थर-सी बनी क्यों बैठी है! क्या कहूं बिटिया, तू खुद क्या सोच रही है, यह तो बस

तू ही जाने। गांव-गली मे, हाट-बाट में तेरे कारण कहीं भी निकलने की हालत ही नहीं रही।

रंगीली : बुआ, भला तुम मुझे ऐसे क्यों भेजना चाहती हो?

बुआ : क्यों, क्या तुझे कोई पता नहीं है? इसी घर से न जाने कितनी लड़किया ब्याह कर गयी हैं। हम भी आकर अब बूढ़ी हो चली। यह तो तुम्हीं लोगों के जमाने में देख रही है। उधर सोचते-सोचते उस बुड्ढे की जान सांसत में पडी है। फिर भी तुम सब.. नही बच्चियो जैसे...

रंगीली : हां, मैं ही तो सब लोगो को परेशान कर रही हू, उस आदमी के साथ...

बुआ : अरी, तू भी भला यह सब क्या कहती है? इस तरह मे रो-धोकर अपने शरीर को क्यो मुसीबत में डाल रही है? ठीक है, जो जी मे आये, वही कर। हम तो जो कुछ देख-सुन रही है, वही कह रही है। तू क्या हमारा कुछ खा-पी रही है? खुद खट रही है, खुद खाना जुटा रही है। अरे, हम जैसे लोगों को तो तुम्हें ही समझाना चाहिए था।

रंगीली : जी बुआ, मै तो जरूर समझाती। अपनी छाती चीर कर दिखा देती तो सभी समझ जाते।

बुआ : चल, चल। क्या झूठ-मूठ एक ही बात को दुहराती रहती है। यह सब तो देखने में अच्छा नहीं लगता है न। भला, राह चलते लोग यह सब देखेगे तो क्या कहेंगे? उधर उस बुड्ढे को खाने-पीने मे भी जरा-सी शांति नहीं मिल रही। उसे कोई उपाय नहीं सूझ रहा। (रंगीली थाली-कटोरी लेकर अंदर चली जाती है। बुआ कुर्सी-मोढ़ा को सही ढंग से लगा देती है। तभी अंदर रंगीली के हाथ से एक कटोरी के गिरने की आवाज सुनकर बुआ गुस्से से कहती है) -- खा गयी, खा गयी, कुलक्षणी, चुड़ैल, घर उजाड़न, इस घर को भी बिलकुल उजाड़ डाला। (जाती है। गायन बरा हुक्का पीता हुआ आता है।)

गायन : (अचानक सूरज पर नजर डालकर) हुंह! वक्त भी काफी हो गया। यह भी अब तक न जाने क्या कर रही है। हे प्रभु, देख रहा हूं कि मुझे अब इस जन्म में शांति नहीं ही मिलेगी। उधर वह भी मन में न जाने क्या सोच रहा है -- क्या हो रहा है (अंदर देखकर) अरी रंगीली! ओ कण बापू रंगीली से कह दे कि मैं बुला रहा हूं।

(रंगीली बड़े दुख भरे मन से आती है।)

रंगीली : बप्पा, मुझे बुलाया है, तुमने?

गायन : हां, क्या तूने कपड़े आदि ठीक तरह से सहेज-वहेज लिये हैं?

रंगीली : बप्पा, क्या तुम्हें कहीं जाना है?

गाधन : नहीं री, उसे उस समय कह भेजा है न, कि मैं आज तुझे लेकर वहां पहुंचा आऊंगा। (कुछ रुक कर) बिटिया मेरी, तू अब और ज्यादा जंजाल न बढ़ाना।

रंगीली : मुझे तुम लोग बिलकुल मार ही क्यों नहीं डालते बप्पा!

गायन : यह सब कहने की बजाय तू मुझे काटकर टुकड़े कर दे बिटिया। सिर्फ तेरे मुंह की ओर देखकर योग्य घर में सबध बनाकर आज मेरी ऐसी हालत हो गयी है।

रंगीली : बप्पा, तुम सबने तो सिर्फ धन-धान ही देखा था। मुझे लेकिन मेरे साथ की लड़कियां--ओ अम्मा! (बैठ जाती है)

गायन : (सिर पर हाथ रखकर) उफ् - उफ् - उफ्! भला तू इस तरह से दूसरों की बात क्यों छेड़ती है? जिसकी किस्मत जैसी होती है, उसकी गाठ भी वहीं जुड़ती है।

(यज्ञ का प्रवेश)

यज्ञ : काका, तुम लोगों का खाना-पीना हो चुका या नहीं?

गायन : बेटे, जरा बैठ! अब और खाना-पीना क्या होगा। इन सबसे पेट भर चुका है। पता नहीं, अधा विधाता और कौन-सा खेल दिखाना चाहता है।

यज्ञ : क्या अब तक वह सब बना ही हुआ है? रंगीली, तू रो क्यों रही है भला?

गायन : देखो तो, उस समय तो तुम्ही थे न सामने? ऐसी हालत में इसका अभिमान देखते हो! यज्ञ बेटा, मुझे अब यह घर ही छोड़ना पड़ेगा।

यज्ञ : अरी, यह सब तो बुरा हो रहा है।

रंगीली : तुम लोग भला ऊपर ही ऊपर यह सब क्या देखोगे? मेरे कलेजे में जो कुछ हो रहा है, वह तो मैं ही समझ रही हूं। मुझे उस आदमी के हाथ सौंप कर...

यज्ञ : उह, भला, अब गड़े मुर्दे को क्यों उखाड़ रही है? अरी, तेरी किस्मत में जो है, उसे भला कौन बदल सकता है?

गायन : यज्ञ बेटे, मुझे इन सबके मारे कहीं जाकर मर-खप जाना पड़ेगा।

यज्ञ : तुम इतने परेशान क्यों हो रहे हो बप्पा? मैं तो इसे समझा रहा हूं न! रंगीली, तू जा, जल्दी तैयार हो जा!
(जाये या न जाये, इस भाव से रंगीली का प्रस्थान।)

गायन : (रंगीली के जाने की दिशा में नजर डालकर) मुझे अपने इन लड़के-लड़कियों से कभी शांति नहीं मिल पायी, यज्ञ!

यज्ञ : मिलेगी कैसे! एक बात है न काका। लड़की को जन्म देकर पाला-पोसा है, तो उसे गले की हड्डी मानकर खदेड़ना क्या अच्छा है? काम समय के अनुसार करना चाहिए। अपने समाज को पकड़े रखकर, लड़की का मन बगैर समझे, जहां-तहां देकर अपना उत्तरदायित्व खत्म करना चाहो, तो इस तरह की अशांति-परेशानी तो मिलती ही रहेगी।

गायन : हां, बेटे! मैंने काफी सीखा है। और लड़की के साथ तो काफी सीखा, काफी देखा! (बाहर देखकर) उफ्, सूरज भी किस लंका में जा पहुंचा। (अंदर झांक कर) अरे ओ कण बापू, ओ कण बापू! अरे अपने बडे भैया के लिए कुछ जलपान आदि ला दे!

यज्ञ : छोड़ो भी काका! उस सब के बगैर भी काम चल जाता है।

गायन : बेटा, तुम जरा बैठो, मैं भी जरा उधर से तैयार होकर निकल आऊं, उन्हें भी निकाल लाऊं—तभी अगर— (प्रस्थान) (लंगड़ाते हुए कण बापू आता है। हाथ मे एक लोटा और एक कटोरे में जलपान)

कण बापू : भैया, हां, जरा हाथ धो लो।

यज्ञ : ठीक है, दे! (जलपान करते हुए) अरे, देखता हूं कि तू तो लंगड़ा रहा है। तेरे पैर में क्या हो गया?

कण बापू : क्या कहूं भैया! उस दिन हमारे स्कूल के साथ गेरेलुवा चुक का एक मैच था। उसी में खेलते समय न जाने कहा का एक जबरजग आया और मुझ पर जम कर चोट कर दी। ओह्—

यज्ञ : हां, (मुंह धोता है)

कण बापू : अब तो अच्छा ही हूं।

यज्ञ : अरे, क्या काका को यह बात मालूम है?

कण बापू : ऊंह, तुम भी क्या कहते हो भैया? अगर बप्पा को यह मालूम होता तो क्या इस घर में वे मुझे घुसने देते? (लंबी सांस लेकर) रंगीली दीदी के चले जाने पर तो मुझ पर और ज्यादा मुसीबत आ गयी भैया!

यज्ञ	:	हूं, तुम सबको यह गेंद का खेल ही बरबाद कर देगा, समझे? अरे, सुबह हल चलाते हो, शाम को धान के पौधे उखाड़ने लगते हो। तब फिर यह गेंद क्यों खेलते हो? अरे, तुम सबको तो अब अपने घर-परिवार पर भी नजर रखनी चाहिए। यह बुड्ढ़ा अगर कल आंखें मूंद लेता है, तब तुम सब को आटे-दाल के भाव का पता चलेगा।
कण बापू	:	नहीं, नहीं, ऐसा तो हम नहीं कर सकते भैया!
यज्ञ	:	ऊंह, कर नहीं सकते। अरे समय-असमय बगैर समझे, यह गेंद-वेंद खेल कर शरीर को अगर अभी तोड़-ताड़ लोगे, तो फिर हमारी उम्र तक पहुंचते-पहुंचते क्या करोगे?
		(एक लाठी के एक सिरे पर एक बदरंग-सा सूटकेस, एक हांड़ी दूसरे सिरे पर कपड़े की एक गठरी, एक करीया[1] और एक जापि[2] लिये गायन बरा का प्रवेश)
गायन	:	(भार को नीचे उतार कर) अरे बेटे, तेरा खाना-पीना हो चुका या नहीं? अरे कण बापू, तेरा भैया तो बीड़ी-सिग्रेट, तंबाकू पीता नहीं, जाकर एक तांबूल-पान का इंतजाम कर! (कण बापू जाता है) उस बेचारी का मन तो अभी बड़ा भारी-भारी है यज्ञ।
यज्ञ	:	और काका, किया ही क्या जा सकता है? (रुक कर) रंगीली! अरी ओ रंगीली!
नेपथ्य में बुआ	:	अरे बेटे, उस तरह से बुलाने पर रंगीली की बोली कहां मिलेगी? अरी, सुनती नहीं, तेरा भाई बुला रहा है! जाती क्यों नहीं?
यज्ञ	:	रंगीली! जरा इधर आ तो! (रंगीली आती है) देख रहा हूं कि तू अब तक निकली नहीं। क्या अब तू मुझे भी नीचा दिखाकर ही रहेगी? मैं कितना कुछ समझा-बुझा कर...
रंगीली	:	भैया जी, आप सबने मुझे समझा नहीं। बप्पा ने मुझे... (रोती हुई बैठ जाती है)
यज्ञ	:	तू अब चाहती क्या है आखिर? देख तो सही, तेरे कारण तेरे बाप की कैसी हालत हुई है। इस बुड्ढे को आज समाज में कितना नीचा देखना पड़ रहा है, तू तो समझती नहीं। अब सिर्फ तेरे ही लिए तो इस युग-युग से चली आ रही परंपरा को छोड़ नहीं सकते न! तुम

1. नाव बांधने के लिए काम आने वाली रस्सी के सिरे पर गांठ लगाकर बनायी अंगूठी जैसी वस्तु।
2. बांस और पत्तों की बनी असमिया छतरी।

सबको तो जरा सोचना चाहिए न! (गुस्से से मुंह दूसरी ओर फिरा लेता है)

गायन : (टूटी आवाज से) यज्ञ! मैं तो अब हार चुका बेटे। मेरा... मेरा.... (बेहोश हो जाता है।)

(हाथ में एक तांबूल लिये कण बापू का प्रवेश)

कण बापू : बप्पा, बप्पा! भैया जी, क्या हो गया है बप्पा को?

यज्ञ : हां – ओ री रंगीली! बुड्ढे को –

रंगीली : बप्पा, बप्पा, भैया जी (रोना-धोना शोरगुल मच जाता है। बुआ शोर सुनकर आ जाती है)

बुआ : अरे क्या हो गया है, तुम लोगों को? भैया ओ भैया!... अरे यज्ञ, क्या हो गया भैया को?

यज्ञ : देखूं, देखूं! पंखे से हवा करो, हवा करो। पानी लाओ। पंखा करो। (कोई पानी लाता है, कोई पखे से हवा करता है।)

रंगीली : बुआ, क्या मैं मुखिया ताऊजी को बुला लाऊं?

बुआ : नहीं, नहीं! तेरी ही वजह से यह जो कुछ होना है, वह हो रहा है। इस बुड्ढे की जान तू ही लेगी आखिर!

कण बापू : (रो कर) भैया जी, बप्पा को यह क्या हो गया है?

यज्ञ : देखूं - देखूं, अब रो मत! पानी ला। (गायन के मुंह में रंगीली पानी डालती है। आंखों में छींटे मारती है। गायन आंख खोलता है।)

गायन : उफ् प्रभु!

बुआ : भैया, तुम्हें क्या हो गया है? अंय--

रंगीली : बप्पा, तुम क्यों सोचते हो इतना? मैं चली जाऊंगी बप्पा, मैं चली जाऊंगी। तुम चंगे हो जाओ। मै...

यज्ञ : रंगीली, तू जा अब, ज्यादा देर न कर।

गायन : (आंख खोलकर सबको देखता है) प्रभु! यज्ञ बेटे, मुझे क्या हो गया था?

रंगीली : बप्पा, ठहरो, मुझे जरा और पानी देने दो।

यज्ञ : अब जरूरत नहीं, तू अब जा मुन्नी। अगर इस समय बुड्ढे ने तुझे फिर यहां देख लिया तो...

गायन : यज्ञ, क्या रंगीली तैयार हुई?

यज्ञ : काका, वह जायेगी, तुम्हें अब सोचने की जरूरत नहीं।

गायन . आं – वह तैयार है, -- जा रही है -- रंगली, तू-तू–

बुआ : अरी, तू अब भी, ठहरी क्यों है? भैया के मर जाने पर ही क्या तुझे चैन आयेगा?

(जाय या न जाय, इस दुविधा में रंगीली चली जाती है।)

यज्ञ : दीदी, तुम भी जाओ, तभी वह जल्दी से तैयार हो लेगी।

गायन : रंगीली बिटिया! सूरज भी ढल चुका है।

(बुआ भी चली जाती है।)

कण बापू : भैया, मैं भी दीदी के साथ ही...

यज्ञ : हां, जाना पड़ेगा तुझे। मगर चल सकेगा क्या तू?

कण बापू : जरूर, जरूर। मैं जरूर चल सकूंगा भैया!

(प्रस्थान)

गायन : यज्ञ, वह तैयार हो चुकी है। कण बापू, रंगीली तुम दोनों--

यज्ञ : काका, तुम वह सब बातें सोचना-विचारना छोड दो। हम तो हैं ही न।

गायन : मुझे खुद उसे ले जाना चाहिए था।

यज्ञ : काका, तुम ऐसे शरीर से चलोगे? खैर, जाकर जरा लेटकर आराम कर लो, उसके बाद अगर–

गायन : लेटना क्या है बेटे! मैं अच्छी तरह से लेट जाऊगा यज्ञ बेटे, तू ही उसे ले जा! मैं तुझे भूल नहीं सकता बेटे!

यज्ञ : काका, भला यह सब क्या कहते हो? मैं उसके साथ जाऊंगा। कण बापू भी जायेगा, तुम शांति से कुछ देर सो रहो। जाओ।

गायन : शांति, शांति, इस जन्म में भला मुझे अब शांति कहां है? बेटे, मैं सोऊंगा – सिर्फ सोऊंगा ही नहीं, अच्छी तरह से सोऊगा। हे प्रभु, यही हमारी दुनिया है। यज्ञ, नहीं - नहीं, रहने दो, मैं ही रंगीली के साथ–

यज्ञ : काका, भला तुम एक ही बात को बार-बार क्यों दुहरा रहे हो? (अंदर से मूंगे का रिहा-मेखला पहने रंगीली का प्रवेश। पहले बाप को प्रणाम करती है)

रंगीली : बप्पा, मैं अब चल रही हूं। (टूटी आवाज में) भैया (यज्ञ की ओर सिर झुकाना चाहती है)

यज्ञ : अच्छा, अच्छा–अब चल मुन्नी!

गायन : (सिर को सहलाते हुए) बिटिया री, ईश्वर तुझे सिर के बालों के बराबर आयु दे। बेटी, आज से तू सबसे मिल-जुलकर अच्छी तरह से रहना। मैं जब तक जिंदा रहूंगा, वहां देखने के लिए आता रहूंगा।

यज्ञ : खैर काका, अब मैं भी तैयार हो जाऊं।

गायन : जा-जा, बेटे, देर न करना। (यज्ञ का प्रस्थान) रंगीली उठकर बुआ से विदा लेने अंदर जाती है। गायन बरा इधर-उधर करवट बदलता रहता है।)

नेपथ्य मे रंगीली : बुआ, मैं अब चल रही हूं। मेरे लिए अबसे तुम सब...

नेपथ्य मे बुआ : हां, जा बिटिया। मन मे बुरा न मानना। समय मिले तो हम भी वहां आते-जाते रहेंगे। तू अब रोती-धोती न रहना बिटिया!

गायन : (चेहरे पर विषाद और आखों में आसू भरकर) छि:, ये सब भला अंदर और कर क्या रहे हैं, हुह, इनकी रुलाई-धुलाई देखने हो न! (लडखड़ाते हुए अदर जाता है)

नेपथ्य में गायन : अरे, अच्छे दिन में अच्छे मुहूरत में जब कोई कहीं निकल रहा है, तो भला तुम सब अब यह रोना-धोना क्यो करते हो—हह! देखते हो इन्हे!

बाहर से यज्ञ : काका, ओ काका! इन सबको देखता हू कि--
(कण बापू रोता हुआ अदर से नये कपड़े पहन कर निकलता है। दूसरी ओर से यज्ञ अदर जाता है। गायन रगीली को समझाता हुआ ले आता है।)

गायन : बिटिया मेरी, जा। वह देख तेरे यज्ञ भाई साहब आकर बाट जोह रहे हैं न! बेटा यज्ञ, जरा तेजी से जाना। तभी हो सकता है कि सूरज डूबने के पहले वहां पहुंच सकोगे।
(रंगीली का जाना देखने के लिए बुआ धीरे-धीरे निकल आती है।)

यज्ञ : कण बापू! अरे इस भार में, छि:, यह तो सारा का सारा-- (भार लेकर यज्ञ आगे बढता है।) ओह, रगीली को भी तो देना है। इनको तो समय ही नहीं मिला। (यज्ञ आगे बढ़ आता है। उसके पीछ रगीली, बुआ मंच के बीच मे आ जाती हैं। कुछ आगे जाकर रंगीली मुड़कर देखती है। बापू और बुआ को देखकर पीछे मुड़कर --)

रंगीली : बप्पा ओ, बुआ ओ! मैं-- (बुआ आगे बढ़कर अचानक कसक

कर रोती हुई पीछे हट जाती है। गायन रंगीली को फिर समझाता है।)

गायन : (चादर से आंसू पोंछता हुआ) ओ बिटिया, जा जा - बिटिया मैं...

नेपथ्य में यज्ञ : रंगीली, इन सबकी करतूत मैं देख चुका हूं। मैं अब और... (रंगीली रोती हुई निकल जाती है। गायन आंसू पोंछता अंदर चला जाता है, उसके पीछे-पीछे बुआ भी जाती है।)

(पटाक्षेप)

चकरी

प्रवीण फुकन

पात्र

बसंत किरानी	प्रौढ़ उम्र का
तरु	बंसत की पत्नी, कामकाजी महिला
आरती	बसंत की बेटी
जालान	मोटा-ताजा व्यापारी
अमल	संपन्न नौजवान, आरती से विवाह करने को इच्छुक

(बसंत किरानी के मकान का आगे का बरामदा। एक मोटा-ताजा मारवाड़ी सज्जन बरामदे में पुकारता है।)

जालान : बसंत बाबू! घर में हैं या नहीं? ओ बसंत बाबू!

(बसंत किरानी की पत्नी तरुलता जल्दी-जल्दी निकल आती है।)

तरु : ओ जालान साहब, आप हैं? बैठिये, बैठिये!

जालान : बसंत बाबू घर में हैं या नहीं?

तरु : जान-बूझकर भी क्या पूछते हैं भला? क्या वे इस समय घर में रहते हैं कभी?

जालान : आपकी बात भी अजीब है! हें: हें:!

(एक बेंत की कुर्सी पर बैठता है।)

तरु : आजकल क्या इधर की राह बिलकुल भूल ही चुके हैं आप?

जालान : आप तो जानती ही हैं कि मैं कलकत्ता गया हुआ था।

तरु : ओ, मुझे तो याद ही नहीं रहा!

जालान : और नहीं तो क्या इस घर में आये बगैर मैं रह सकता हूं?

तरु : आपने तो काफी दिन लगा दिये। इधर आरती मुझे परेशान कर रही है। खाते-सोते बस आप ही की बात!

जालान : आरती है या नहीं?

तरु : है - है। आरती, अरी ओ आरती!

(जोर से पुकारती है। आरती अंदर से ही)

आरती : क्या है मां?

तरु : अरी आकर देख न। कौन आये हैं!

(आरती बाहर आकर जालान को देख मान करती हुई)—

आरती : ओ जालान साहब, जाइये, आप बड़े बुरे आदमी हैं।

तरु : मैंने कहा था न जालान साहब! आपने मानो इस पर कोई जादू-मंतर ही कर डाला है। ऐसा लगता है।

जालान : जादू-मंतर! हें हें: हें --

आरती : मुझे साड़ी देने की बात कह कर आप हवा हो गये। क्यों?

जालान : नहीं, नहीं! साड़ी तो मैं लेता ही आया हूं न!

(साड़ी का पैकेट आरती को देता है। आरती पैकेट खोलकर देखती है।) पसंद आयी साड़ी!

तरु : गोल्डन बार्डर!

आरती : कीमत कितनी है?

जालान : ज्यादा नहीं, लगभग साढ़े तीन सौ होगा।

तरु : साढ़े तीन सौ ...!
(कह कर गंभीर हो जाती है और मुंह घुमाकर बैठती है)

आरती : हू, समझ गयी! मां को जलन हो रही है।

तरु : अरी, देनेवाला, तुझे दे रहा है, भला मुझे जलन क्यों होगी।

आरती : मां की बात सुन रहे हैं न, जालान साहब?

जालान : मां के लिए भी तो लाया हूं न। हैं: हैं: है: --
(कहकर जेब से एक अंगूठी निकालता है।) हां, यह अंगूठी देखिये तो, उगली में आयेगी न?
(तरु अंगूठी अपनी अंगुली में पहन कर देखती है।)

आरती : आ - हा - कितनी सुंदर अगूठी है।

तरु : चल हट! इतने दिन बाद आदमी आया है, कहां उसको खिलायेगी पिलायेगी, बात पूछेगी, वह सब कुछ नहीं। आप जरा बैठिये जालान साहब! हां, साड़ी इधर दे, रख आऊ।
(अंगूठी और साड़ी लेकर तरु अंदर जाती है।)

जालान : और तुम्हारा क्या समाचार हैं आरती? आजकल गाना-वाना गाती हो या नहीं?

आरती : आज कितने ही दिनों से गायन-मास्टर आया ही नहीं।

जालान : आया नहीं, मगर क्यों?

आरती : कहता हैं दो महीने का वेतन नहीं मिला।

जालान : कितना देना हैं?

आरती : पता तो नहीं। शायद सौ के करीब होगा।

जालान : (जेब से सौ रुपये का एक नोट निकालकर) हां, यह ले लो।
(तभी तरुलता एक प्लेट में मिठाई और एक गिलास पानी लिये आती हैं।)

तरु : यह रुपया किसलिए आरती?

आरती : जालान साहब दे रहे हैं। गायन-मास्टर को देने के लिए।
(तरु जालान के सामने की मेज पर मिठाई और पानी का गिलास रखकर, एक मोढ़ा खींच कर पास बैठ जाती है।)

तरु : देखूं तो आरती, नोट मुझे दे दे! नही तो ग्वाला दूध देना ही बंद कर देगा।

आरती : नहीं, मैं नहीं दूंगी। मुझे फिर से गाना सीखना है।

जालान : भला दूधवाले को कितना देना है?

तरु : उसका भी करीब सौ रुपया ही होगा। और भला उस दूधवाले को दोष क्यों दूं? वह भी तो आखिर अपने पेट के लिए ही व्यापार करता है।
(जालान मिठाई खाकर, पानी पीने के बाद एक डकार मार कर-)

जालान : भला सौ रुपये के लिए इतनी चिंता क्यों कर रही हैं?
(जेब से सौ रुपये का नोट निकाल कर) हां, लीजिये।

तरु : (हाथ फैलाकर नोट ले लेती है।) आरती, गिलास-प्लेट ले जा और जालान साहब के लिए जरा-सा मसाला ला दे।
(प्लेट-गिलास ले आरती अंदर जाती है।)

जालान : क्या आरती के विवाह के बारे में कुछ तय कर लिया है?

तरु : नहीं, उसके विवाह के बारे में तो अभी सोचा ही नहीं है। और अगर कभी विवाह हो भी, तो क्या आपकी सलाह के बगैर थोड़े ही होगा?

जालान : अभी वह सब सोचने की जरूरत नहीं, उसे पढ़ने दीजिये।

तरु : आप जैसा अच्छा समझें। मान लें कि उसे आपके ही हाथ सौंप दिया है मैंने! (आरती मसाला लाकर जालान को देती है।) ठीक है, जालान साहब, आप आरती से बातें करें। मुझे जरा काम है। (तरु अदर जाती है।)

जालान : इस बार कलकत्ते में बहुत-से गाने सुने। मगर तुम्हारे जैसी मीठी आवाज मैंने किसी की नहीं सुनी!

आरती : कितने हजार खर्च कर आये?

जालान : अपना तो खर्च कुछ भी नहीं हुआ। कलकत्ते में मेरे अनगिनत दोस्त हैं।

आरती : अच्छा, वे बाईजी किस हिसाब से रकम लेती हैं?

जालान : यह तो बाईजी के स्तर पर निर्भर है। ऐसी भी बाई जी हैं जो घंटे भर गाना सुनाने के एवज में पाच सौ, हजार तक लेती हैं।

आरती · मगर मुझे तो आप एक बार भी कलकत्ता नहीं ले गये।

जालान : क्यों नहीं ले जाऊंगा। जरूर ले चलूंगा। और कलकत्ता, बबई पूरा देश घुमाकर ले आऊंगा।

आरती : बस - बस - नन्हे बच्चों की तरह से केले दिखाकर बहलाने की जरूरत नहीं।
(कहती-कहती मुंह फुला कर एक ओर जाकर खड़ी हो जाती है।)

जालान : तुम्हारा गुस्सा भी बड़ा अच्छा लगता है आरती!

आरती : जाइये-जाइये– मुझसे बात न करें!

जालान . हैं: हैं:, तुमसे बात करने के लिए ही तो जी रहा हूं।

आरती : आपकी जबान मे सिर्फ बडी-बड़ी बातें ही हैं।

जालान : तुम्हारे चेहरे पर हंसी न देखने पर मुझे बड़ा दुख होता है, आरती!
(अमल बाहर से आता है और जालान की ओर तिरछी निगाह से देखकर आरती से पूछता है)–

अमल : मां है या नहीं आरती?

आरती : हां - है।

(अमल दनदनाता अंदर चला जाता है। अमल की ओर देखकर जालान कहता है)

जालान : यह कौन है, आरती?

आरती : नाते का भैया लगता है।

जालान : देख रहा हूं, तुम्हारे तो दादा, भैया बहुत-सारे हैं।

आरती : इसका मतलब?

जालान : मतलब, तुम लोगों का बहुत बड़ा परिवार है।

आरती : अब न कहें जी! ये सबके सब सिर्फ दुहने के लिए आते हैं। इस मुर्गावन को (अमल के जाने की ओर देख कर) देखते ही मुझे गुस्सा चढ़ आता है। न जाने कौन बुलाता है इसे!

जालान : जिस-तिस को अंदर घुसने भी नहीं देना चाहिए।

आरती : मां की बात क्या कहूं? उससे जरा भी कुछ कहती हूं तो बिलकुल आग-बबूला हो उठती है। मैं कितना समझाती रही हूं, जिस-तिस से मेरी पहचान न कराना। पर कहां, कुछ सुनती ही नहीं। ऊपर से मुझे ही दस बातें सुना देती है।

जालान : खैर, आरती! मुझे एक खास काम है। एक चक्कर लगाकर अभी आ रहा हूं। (जालान निकल जाता है। "आरती-आरती" पुकारती तरु आती है। साथ में अमल भी।)

तरु : अरी आरती! वह मुआ गया क्या?

आरती : (अमल की ओर देखकर) सचमुच मा, पिताजी के इन संगी-साथियों को देखकर तेरे तन-मन में आग लग जाती है।

तरु : ऊंह, अब क्या कहें? घर आने पर पूछ-ताछ न करने पर भी तो नहीं चलता। हजार हो, बाप का मित्र ठहरा। इधर जब बैठ जाता है तो उठने का नाम ही नहीं लेता।

आरती : एक बात कहे देती हूं मा! भले ही तुम्हारे जितने भी काम-धाम रहें, मैं उसके साथ और कभी बैठ कर गप्प नहीं मार सकती।

अमल : ऐसा न करना आरती। पता चलने पर पिताजी को बड़ा दुख होगा।

आरती : भला उसके साथ मैं बात क्या कर सकती हूं, तुम्हीं बताओ जरा।

तरु : हां, यह तो ठीक ही कह रही है। अब तुम्हारी बात तो अलग है।

आरती : इनके साथ तो मैं दिन-रात बराबर बात कर सकती हूं। फिर भी हमारी बातें खत्म ही नहीं होंगी! क्या कहते हो, है न!

अमल : तुम भी क्या बात करती हो आरती!

तरु : ऊह, इस नकचढ़ी की नाक पर लाज आ ही गयी। अच्छा, अच्छा! तुम दोनों जितनी चाहो, बातें करो। 'चोर, कब पसंद करे भोर?' (तरुलता अंदर जाती है।)

आरती : अंदर मां के साथ कौन-सी गप्प मारते रहे?

अमल : और कौन-सी होगी? यही विवाह की बात थी!

आरती : मां, कब चाहती है?

अमल : इसी फागुन में!

आरती : लेकिन विवाह के बाद भी मैं तुम्हें अमल ही कहा करूंगी!

अमल : अमल - कमल जो जी में आये कहना!

आरती : और एक बात! विवाह के दूसरे ही दिन कश्मीर जाना होगा!

अमल : बाद की बात बाद में देखेंगे! उसके लिए अभी से सिर क्यों खपा रही हो?

आरती : नहीं तो, तुम ऐसे कंजूस ठहरे कि पाई-पाई का हिसाब रखते हो।

अमल : और खुले हाथ उड़ाने की आदत शायद अच्छी है, क्यों?

आरती : सारे रुपये-पैसे मेरे नाम पर बैंक में जमा रखना होगा। पहले ही कहे देती हूं, बाद में तुम्हारी कोई शिकायत-विकायत नही चलेगी। मैं सुनूंगी नहीं।

अमल : वाह, देख रहा हूं, विवाह के पहले ही तुम घोर संसारी बन गयी हो!

आरती : तुम्हारी पुरुष जाति को पहचान पाना बड़ा कठिन है।

अमल : और जारी-जाति का चरित्र समझ पाना आसान है, क्यों?

आरती : जो भी हो, नारी-जाति अबला ठहरी।

(तरुलता आकर आरती से पूछती है--)

तरु : यह बात क्या सच है आरती, वह किराने का व्यापारी महाजन आने ही वाला है। भला मैं उसे रुपये कहां से दूगी? बप्पा भी घर में नहीं है। शायद वे रुपये का इंतजाम कर नहीं सके होंगे, इसीलिए आने में देर कर रहे हैं।

आरती : उस दिन जिस तरह कड़ी बाते सुना गया है, आज अगर उसे पैसे न मिले तो...

अमल : उसे कितना देना है...

आरती : लगभग एक सौ होगा। क्यो मां, कितना होगा?

अमल : मेरे पास एक सौ के करीब होगा।

तरु : ए, छोड़ो-छोड़ो – भला तुमसे पैसे लेने क्यों जायेंगे?

अमल : मां, क्या अब भी पराया समझती हैं मुझे?

आरती : नहीं अमल, मां भला तुमसे किस मुंह से पैसे ले सकती है, मान-सम्मान की भी तो बात है न!

अमल : मां-बेटे के बीच मान-सम्मान की कोई बात नहीं उठ सकती। हां, यह सौ रुपये लीजिये।

(दस-दस के दस नोट तरु के हाथ में थमा देता है।)

तरु : (लंबी सांस लेकर) हाय रे जली किस्मत!

आरती : गरीब बनकर जन्म लेना भी गुनाह है।

अमल : आरती, और कितने दिन रह गये हैं, जानती हो न, दो-दो चाय बागान का मालिक ठहरा मैं। घर का इकलौता बेटा हूं।

आरती : मैं तो मां और पिताजी के भविष्य के बारे में सोचती हूं।

अमल : इसका मतलब है कि तुम यह कहना चाहती हो कि मैं आगे इनकी देखभाल नहीं करूंगा। क्यों? ऐसा किसलिए? आरती, बताओ तो सही, तुम लोग आज तक मुझे अपना क्यों नहीं सकी?

आरती : अमल, तुम बड़े अभिमानी हो।

अमल : नहीं आरती, मुझे ऐसा लग रहा है, मैं तुम लोगों को जैसे अपना लेना चाहता हूं, उस तरह से मुझे अपनाने मे तुम लोगों को कठिनाई हो रही है। मानो मुझे लेकर तुम लोगों को बड़ी चिंता में पड़ना पड़ रहा है।

आरती : अमल, तुम तो बेकार ही नाराज हो रहे हो। एक बार सोचो न, किसी के सामने हाथ फैला कर किसे खुशी हुआ करती है? मैं भली-भांति जानती हूं, किस स्थिति में पडने के कारण आज मां को तुमसे यह सौ रुपया लेना पड़ रहा है! अगर तुम यह बात समझते, तो शायद तुम्हारी जबान से इतनी बातें नहीं निकलतीं। सास-ससुर का जमाई से रुपया लेना कोई गौरव की बात थोड़े ही है? यह बात तुम भी जरूर समझते हो।

अमल : आरती!

आरती : इसी कारण तो बराबर वालों में ही सबंध करना चाहिए।

अमल : किसी के सामने, कभी भी मैंने धन-सपदा का गर्व नहीं किया है। आरती, मुझे गलत न समझना।

आरती : मगर हमारे बारे में तुम्हारे मन में भला ऐसी धारणा किस कारण हुई?

अमल : अपनी गलती मैं मान लेता हूं।

आरती : (शरारती हंसी हंसकर) मगर इतनी-सी ही सजा पाने से तुम्हें रिहाई नहीं मिल सकती।

अमल : बताओ, तुम्हारी सजा मैं खुशी-खुशी गले लगा लूंगा।

आरती : शपथ लो!

अमल : शपथ खाकर कहता हूं।

आरती : मेरे काम में कोई रुकावट नहीं डाल सकोगे, या विरोध भी नहीं कर सकोगे!

अमल : ठीक है, ऐसा ही होगा। मैं तुम्हें वचन देता हूं।

आरती : और मैं जैसा कहूंगी, तुम उसे ही मानकर चलोगे।

अमल : तुम्हारी सारी मांगें मुझे मंजूर हैं।

आरती : अब चलो। दोनों जरा चाय-वाय तो पी लें।

(दोनों हंसते-हंसते अदर जाते हैं। साथ ही बसंत किरानी बाहर से आता है। बाहर पुलिस की गाड़ी से लाउड स्पीकार के जरिये एक घोषणा सुनायी पड़ती है। बसंत किरानी एक बेंत की कुर्सी पर बैठ बाहर कान लगाये घोषणा सुनता है।)

घोषणा

''जिला के उपायुक्त महोदय सभी लोगो को सूचित करते हैं कि आज से यहां वेश्यावृत्ति निषेध कानून को लागू किया जा रहा है। अगर इस बारे मे किसी को कोई जानकारी मिले तो तुरंत पुलिस-थाने में सूचित करने हेतु अनुरोध किया जाता है। धन्यवाद।''

(घोषणा सुनकर बसंत किरानी हैं: हैं: कर दिल खोलकर ठहाके लगाता है। अंदर से तरु निकल आती है।)

बसंत हैं: हैं: हैं: –

तरु : क्या हो गया?

बसंत : वह घोषणा सुन रही हो या नहीं। हैं: हैं: हे.–

तरु : राम-राम, बू के मारे पास खड़ी भी नही हो सकती। भला, इस दोपहर में ही यह सब जहर-पानी पीना क्या उचित है?

बसंत : ए, बार-बार एक ही बात को क्या दुहराती रहती हो जी!

तरु : क्यो नही दुहराऊ? लड़की विवाह के लायक हो गयी, मगर आपको होश नहीं आया।

बसत . उफ् राम! घर में क्षण भर भी शांति से रहने नही देती!

तरु : भला मैं अकेली किस-किस ओर संभालूं? देखती हूं आप तो जरा भी ध्यान नहीं देते!

बसंत : अरे अगर ध्यान ही दे सकता, तो भला बात यहां तक कैसे पहुंचती? (आरती और अमल अंदर से निकल कर आते हैं।)

आरती : मां, क्या तुम बुआ के यहां नहीं जा रही?

तरु : चल, चल! अच्छा, अमल, तुम कुछ देर पिताजी के साथ बैठो। हम अभी-अभी आ रही हैं।
(तरु और आरती निकल जाती हैं।)

बसंत : अमल!

अमल : जी, पिताजी!

बसंत : यों खड़े क्यों हो? बैठो। (अमल बैठता है) एक बात कहना चाहता हूं, क्या सुनोगे तुम?

अमल : कहिये पिताजी!

बसंत : सचमुच तुम बड़े निर्मल हो। भला इस कुटिल ससार में तुम चलोगे कैसे? (अमल मौन! बसत खड़ा हो जाता है और साथ ही अमल भी खड़ा होता है।) मैं बीच-बीच में सोचा करता हू, समय के साथ-साथ मानो तुम्हारा अस्तित्व ही मिट जायेगा।

अमल : आप...

बसंत : मुंह से बू आने के कारण शायद तुम सोच रहे हो कि मै नशे में हूं, क्यों?

अमल : जी नहीं, मैं ऐसा नहीं सोचता।

बसंत : तुम्हें तो पता नहीं अमल, मैं नशा करने को विवश हो गया हूं। नशा करके निर्लज न बन जाऊं, तो भला सज्जनों के समाज में जी कैसे सकता हूं? मुझे तो बड़ा डर लगता है। जान-पहचान का कोई आदमी दिखाई पड़ता है, तो डर के मारे मेरे हाथ-पैर कांपने लगते हैं। मुह से आवाज नही निकलती। इसीलिए मुझे नशे की बड़ी जरूरत है। अगर नशा न हो, तो मैं बिलकुल पत्थर बन जाऊंगा।

अमल : पिताजी, आप जरा लेट जाइये।

बसंत : मैंने कहा न, तुम बिलकुल भोले हो। अमल, तुम चांद की किरणों जैसे विमल हो। इस दुनिया की टेढ़ी-मेढ़ी राहें देखकर भी तुम देखते नहीं। भला, तुम संसार में निर्वाह कैसे करोगे? ऊंहूं, तुम तो अपना संसार भी बसा नहीं सकते।

अमल : यानी आरती को आप लोग मुझे देना नहीं चाहते?

बसंत : हैं: हैं: – (अमल की ठोढ़ी पकड़कर) भला, ऐसे सरल स्वभाव का लड़का इस जमाने में भी होता है कहीं?

अमल : पिताजी!

बसत : सचमुच अमल! जब तुम मुझे पिताजी कहकर पुकारते हो, तो मुझे इतना अच्छा लगता है कि क्या बताऊं। क्योंकि तुम्हारा यह 'पिताजी' कहना इतना कोमल होता है, इतना पवित्र है। अगर तुम मेरे बेटे होते अमल!

अमल : क्यों, मैं तो आपका बेटा बनने के लिए ही इतना आग्रही हूं...

बसंत : हां, हां, जानता हूं, जानता हूं अमल। पर तुम यह बात क्यो नहीं सोचते कि तब तुम्हारे साथ हमारा संबंध होगा, बिटिया के जरिये। तुम बनोगे मेरे जमाई। अपने बेटे और जमाई के बीच काफी अंतर होता है। होता है या नहीं, बताओ?

अमल : मगर जबकि आपका कोई बेटा ही नहीं है, तब तो...

बसंत : ओह, तुम फिर उसी बात को दुहराने चले हो। मेरी बात समझने की कोशिश करो अमल! मेरी बात समझने की कोशिा करो।

अमल : समझने की कोशिश कर ही रहा हूं पिताजी। मगर समझ मे तो कुछ आता ही नहीं।

बसत : भला समझ मे आयेगा कैसे? तुम तो बड़े ही सरल हो। झील में खिले कमल के फूल की ओट में भी जहरीला नाग छिपा हो सकता है, यह बात भला कितने लोग सोच पाते हैं?

अमल : मगर उसके लिए तो मैं संसार नहीं छोड़ सकता। कभी-न-कभी तो अपना घर-ससार बसाना ही पड़ेगा।

बसत : जरूर बसाना पड़ेगा। पर उसके पहले यह ससार क्या है, यह बात तुम्हें अच्छी तरह से समझ लेनी होगी। बिना सोचे-विचारे अगर तुम बाढ़ के प्रचंड पानी का प्रवाह रोकने चलोगे, तो याद रखो, वह तेज प्रवाह तुम्हीं को बहा ले जायेगा।

अमल : मैं तो समझ-बूझ कर ही विवाह करने चला हू।

बसत : अच्छा किया है। (क्षण भर सोच कर) मै यह सब क्यों कह रहा हू, जानते हो अमल? उम्र बढ़ने के साथ ही मैं कुछ धर्म-भीरू हो गया हू। अपने अतीत की बातें याद कर, मेरे मन मे बड़ा डर आ घुसा है। तुम तो अपनी आंखों से ही देख रहे हो न, आजकल मैं पूजा-पाठ जयादा करने लगा हूं। क्यों, जानते हो? नहीं, भक्ति के कारण नहीं, भक्ति के कारण नहीं। जिदगी में जो पाप मैंने अर्जित किये हैं, उनसे अपनी रक्षा करने के लिए।

(तरु और आरती प्रवेश करती हैं)

तरु : शायद बुड्ढे ने लेक्चर सुना-सुना कर तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया होगा।

आरती : अमल, आओ तो जरा! हम बाजार से हो आये! (अमल और आरती निकल जाते हैं।)

तरु : आरती की किस्मत भी कोई ऐसी-वैसी नहीं है। बड़े पुण्य-फल से ही ऐसा लड़का मिल पाता है।

बसंत : पता नहीं, इस दुनिया में पाप-पुण्य कुछ है या नहीं। कुछ भी समझ में नहीं आता।

तरु : सुनिये, वह जब रहे तो शराब पीकर आप मन में जो आये, बकते न रहें! कम से कम विवाह के पहले ये कुछ महीने!

बसंत : तरु, भला शराबी आदमी की बात की भी कोई कीमत होती है?

तरु : आप यों किसलिए कहते हैं? आप उसके ससुर बनने वाले हैं।

बसंत : वही बात तो मैं सोच रहा हूं। उसका ससुर न बनने पर ही मुझे खुशी होगी।

तरु : क्यों, उस लड़के में भला बुराई क्या है?

बसंत : वह एक जड़ बुद्धि है।

तरु : भले ही वह ऐसा हो, पर जब कि उसके पास अपार धन-संपदा है, आरती को सुख मिलेगा।

बसंत : सुनो, सुख-शांति किसी के पास खुद चलकर नहीं आते। धन-दौलत भी इन्हें ला नहीं सकती। उनके लिए और भी कई साधनों की जरूरत होती है।

तरु : आप ये बे-सिर-पैर की बातें छोड़िये। क्या ऐसा भी कोई काम है जो रुपये से न किया जा सके?

बसंत : सच कहती हो, रुपये के बल पर आदमी पाप को भले ही पाप न समझे, पर धन के बल पर कोई भी पुण्य अर्जित नहीं कर सकता।

तरु : ऊंह, सुनते हो इनकी बातें। मैं पूछती हूं आज कितनी बोतलें चढ़ायीं?

बसंत : यही अफसोस तो मुझे रह जायेगा तरु। शराब मैं पीता हूं, यह सच है, मगर शराब भी मुझे उसी तरह घोल-घोल कर पीती रही है।

तरु : अब पछता रहे हैं? कहने पर तो सुनते नहीं न। दिन-रात अगर यह सब खाते-पीते रहे, तो क्या किसी का शरीर ठीक रह सकता है?

बसंत : शरीर तो मेरा टूटा नहीं। वह तो ठीक ही है, परंतु!–

तरु : छोड़िये, छोड़िये अपना यह पागलपन...
(तेजी से अंदर चली जाती है।)

बसंत : मेरा पागलपन? हैंः हैंः हैंः ...।. तरु, तरु!
(अंदर से तरु 'क्या है' कहती हुई फिर निकल आती है।)

तरु : कहो, क्या है?

बसंत : हां, जरा बीस रुपये देना।

तरु : किसलिए?

बसंत : सवाल न करना।

तरु : उस समय जो बीस रुपये दिये थे, उनका क्या हुआ?

बसंत : सुनो, तरु! तुम्हारे साथ बहुत दिन पहले ही हमारा समझौता हो चुका है। तुम्हारे कामों में मैं कभी रुकावट नहीं डालूंगा, और तू भी मुझे किसी काम से मना नहीं कर सकोगी। यह बात भूल क्यों गयी हो?

तरु : उफ्, आपसे देखती हूं कोई चारा नहीं रहा है।
(मुंह में कुछ बड़बड़ाती अंदर जाकर बीस रुपये ला देती है) हां, लीजिये।

बसंत : वाह इसी को कहते हैं सती नारी। पति की बात इतना मानने वाली!

तरु : अब जाइये, बोतल पीकर उड़ा दीजिये।

बसंत : भला तुम भी यह क्या कहती हो तरु! अगर मैं ही न उड़ाऊं, तो और कौन उड़ाने वाला है? यहा और है कौन मेरी बराबरी करने वाला! मैं कमा रहा हूं, तुम कमा रही हो, मेरी बिटिया कमा रही है। धन ही धन! रुपया ही रुपया! चारों ओर सिर्फ धन ही धन। हेः हेंः हें --
(बसंत निकल जाता है। तरु गाल-मुंह पर हथेली रखकर कुर्सी पर बैठ जाती है। अमल और आरती बाजार से आते हैं। आरती सीधे घर के अंदर चली जाती है। अमल तरु की ओर देख कर पास आ जाता है।)

अमल : क्या हो गया मां! देख रहा हूं कि बड़ी उदास-उदास-सी बैठी हो!

तरु : और क्या होगा बेटे! (चादर के आंचल से आसू पोंछती है।)

अमल : क्या पिताजी से कुछ खटपट हुई है?

तरु : मेरी सारी जिंदगी को जला मारा है। सात दुश्मन को भी शराबी पति नहीं मिलना चाहिए।

अमल : मुझे तो लग रहा है कि पिताजी के दिमाग में कोई खराबी आ गयी है। आप लोगो के निकल जाने के बाद मेरे साथ जो बातें की, उनका कोई मतलब ही मेरी समझ में नहीं आया। उनकी बात का कोई सिर-पैर नही है! जो मुंह में आता है कह डालते हैं।

तरु : मेरी शपथ है, उनकी किसी बात का बुरा न मानना।

अमल : भला आप भी क्या कहती हैं मां! क्या पिताजी को मैं पहचानता नहीं।

तरु : शराबी आदमी का कोई ठीक-ठिकाना नही होता। हो सकता है कभी तुम्हें भी गाली-वाली दे डालें।

अमल : गाली अगर दें तो पिताजी ही देंगे न? मगर एक बात है, क्या इनका शराब पीना छुड़वा नहीं सकते?

तरु : अगर ऐसा हो सकता तो आज बीस सालों से इस तरह यम-यंत्रणा थोड़े ही भुगतती? न जाने कितनी रातें उनींदी निकल गयी है। और थप्पड़-घूंसे खाने की तो बात ही नहीं कहती।

अमल : अब तो कई तरह के आधुनिक इंजेक्शन-दवाएं आदि निकले हैं। अगर एक बार कोशिश कर देखा जाये...

तरु : तुम भी न जाने कैसी बातें करते हो। ऐसी बात की चर्चा करते ही सीधे घूंसा तानकर दौड़ आयेंगे। जो भी होना है हो! अब तो जवान बिटिया के सामने लात-घूंसे खाने की इच्छा नहीं है। इतने सालों में जो कुछ भोग चुकी हूं, बस वही काफी है।

(आरती ''अमल-अमल'' कहती हुई निकल आती है और तरु अंदर चली जाती है।)

आरती : अमल, अमल! तुम्हारी यह कार बड़ी पुरानी हो गयी है। एक नयी कार का आर्डर दे दो।

अमल : क्यो? इसको भी तो ज्यादा दिन नहीं हुए। सिर्फ दो ही साल तो हुए हैं।

आरती : तो भी इस पर बैठकर मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगता। इसके अलावा विवाह के बाद एक नयी कार न हो, तो क्या अच्छा लगेगा?

अमल : जबकि तुम कह रही हो...

आरती : इसका मतलब तुम्हें शपथ की बात याद है?

अमल : भला वह भी कभी भूला जा सकता है?

आरती : देख रही हूं, तुम सचमुच आइडियल हसबैंड हो सकोगे।

अमल : कम से कम वैसा होने का प्रयास करूंगा।

आरती : यह आरती नाम मुझे बिलकुल पसंद नहीं।

अमल : भला, इसे बुरा क्यों मानने लगीं?

आरती : ए, बड़ा असमिया-असमिया-सा है यह नाम।

अमल : ओ, तुम्हें मेम साब का नाम चाहिए, क्यों?

आरती : चाय बागान के मालिक से विवाह करने जा रही हूं, तब तो मेमसाब जरूर बनना है। क्या तब भी साधारण किरानी की बेटी ही बनी रहूंगी।

अमल : लेकिन मैं कहा का बड़ा साहब हो गया?

आरती : लेकिन विवाह के बाद इस तरीके से चलने पर काम नहीं होगा। बिलकुल चुस्त-दुरुस्त रहना होगा।

अमल : ठीक है, ठीक है। देखा जायेगा। (हाथ की घड़ी देखकर) हमारी कंपनी की एक मिटिंग है, समय लगभग हो ही चुका है। अब मैं चला।

आरती : मगर मिटिंग खत्म होते ही सीधे चले आना।

अमल : जरूर, जरूर!

(अमल निकल जाता है। आरती कुर्सी पर बैठकर पैर हिलाती हुई एक फिल्मी गीत गुनगुनाती है। कुछ क्षण बाद जालान आता है।)

जालान : वाह, मैं तो बाहर से सोच रहा था कि कोई फिल्म-स्टार ही गा रही है।

आरती : आप तो बात-बात मे मेरा मजाक उड़ाया करते हैं।

जालान : मजाक नहीं आरती। मैंने अपने दिल की बात ही कही है।

आरती : भला आपका भी कोई दिल है क्या?

जालान : तुम क्या सोचती हो?

आरती : अगर है भी तो बड़ा पत्थर है।

जालान : क्या कहा?

आरती : जरूर, मैंने कोई गलत नहीं कहा।

जालान : गलत है, बिलकुल गलत। अपनी बात वापस लो।

आरती : क्यों? मैंने कोई गलत नहीं कहा, इसे मैं प्रमाणित करूंगी।

जालान : प्रमाणित करोगी?

आरती : जरूर करूंगी प्रमाणित। अगर मुझसे इतना प्यार रहता तो मुझे साड़ी देकर मा को सोने की अगूठी...

जालान : ओ, यह बात? तो यही क्यों नहीं कहती। ठीक है, मैं तुम्हें वचन देता हूं। सप्ताह भर के अदर ही तुम्हें मैं हीरे की अंगूठी मंगवा दूंगा। अब हुआ न?

आरती : (नटखट हसी हंसकर) धन्यवाद, मैं अपनी बात लौटा लेती हूं। जरा बैठिये जालान-साहब। मैं आपके लिए बनारसी पान ला रही हू।

(आरती अंदर जाती है। कुछ समय बाद नशे मे लड़खड़ाता बसत बाहर से प्रवेश करता है।)

बसत : ओ, हमारे जालान साहब हैं।

जालान : नमस्कार बसत बाबू।

बसंत : नमस्कार - नमस्कार! हजार बार नमस्कार!

जालान : आजकल तो आपसे मुलाकात ही नहीं होती?

बसंत : आह मुलाकात होगी तो कैसे? मुझसे मुलाकात करना चाहें, तभी तो?

जालान : मैं तो आपके यहा हर दिन एक बार आता ही हूं।

बसंत : एक बार नही जालान साहब, तीन-चार बार आते है। मगर क्या करें? मैं जब बाहर निकलता हूं (घर के अंदर की ओर दिखाकर) आप तब अंदर जाते हैं।

जालान : नहीं - नहीं - मतलब..

बसंत : हैं: हैं: हैं:.. एक बात है जालान साहब!

जालान : हां, हुक्म दीजिए!

बसंत : हुक्म, मैं भला आपको हुक्म दूंगा? अन्नदाता को हुक्म देना होगा?

जालान : मैं तो आपका गुलाम ठहरा बसंत बाबू।

बसंत : छिः छिः जालान साहब! पुरुष जाति के सम्मान को आपने सीधे पानी में डाल दिया। स्वार्थ भले रहे, पर इतना नीचे गिरना ठीक नहीं।

जालान : मेरा कोई भी स्वार्थ नहीं है--बसंत बाबू! घर में मैं कितनी अशांति में रहता हूं, यह बात आप जानते ही हैं। यहां आने पर शांति मिलती है, इसीलिए आता हूं।

बसंत : शाबाश, शाबाश, जालान साहब! अभी आपने मर्द जैसी बात कही है। जहां शांति का निर्झर, अविराम, कल-कल करता बह रहा है, भला वहां न मिले तो और कहां मिलेगी शांति! फुलवारी और फूल के मधु की खोज में भौंरा बेतहाशा उड़ता रहता है – और दुनिया भर के लोग शांति की खोज में इस बसंत किरानी के यहां आते हैं!

(आरती एक प्लेट में दो बनारसी पान लाकर जालान के सामने रखती है। जालान एक बार आरती के चेहरे की ओर और एक बार बसंत के चेहरे की ओर देखता है।) हां-हां, खाइये जालान साहब। बनारसी मीठा पान, जी भरकर खाइये।

आरती : आप भला लोगों पर इस तरह से जुल्म क्यों करते हैं?

बसंत : सुना (जालान की ओर देखकर) कहती है कि मैं आप पर जुल्म कर रहा हूं।

आरती : आपके उपद्रव से लोगों का इधर कदम रखना मुश्किल हो गया है। (आरती नाराज होकर अंदर चली जाती है।)

बसंत : देखते हैं न, मेरी पत्नी, मेरी बिटिया आजकल मुझे बिलकुल आंखों की किरकिरी समझती हैं।

जालान : आपको तो पता नहीं कि आप कितने खुश-किस्मत हैं। आपकी श्रीमती साक्षात लक्ष्मी हैं--लक्ष्मी!

बसंत : हां - हां, कहिये देवी है। और अगर देवी न हो तो भला आप लोगों जैसे भक्त ही कहां मिलेंगे? वह है देवी और मैं हूं देवता! वाह कैसा अपूर्व मिलन है। इस तरह का युगल-मिलन, आम तौर पर दिखाई ही नहीं देता। आपका क्या विचार है?

जालान : मेरी बात पर आपको विश्वास नहीं हो रहा है? मगर...

बसंत : क्यों नहीं करता, क्यों नहीं करता, जालान साहब! सिर्फ आप ही नहीं, और

बहुत-से लोग भी मेरी श्रीमती को देवी मानते हैं। आपको तो शायद पता नहीं आज दो सालों से उनके अनगिनत भक्त इधर इकट्ठे हुए हैं।

जालान : (अचानक खडे होकर) क्या कहा आपने?

बसंत : आप इतने अधीर न हों। आप ठहरे भक्त! आपकी जगह कोई और ले नहीं सकता।

जालान : आप मुझे अपमानित कर रहे है बसत बाबू!

बसंत : आखिर आपने मुझे गलत समझा, जालान साहब!

जालान : आपके साथ मेरी दोस्ती तो--आज की नहीं है!

बसंत : हां, आपने सही बात की याद दिला दी। हमारी दोस्ती काफी पुरानी है। अच्छा, जालान साहब! जरा पीकर आऊं, कुछ रुपये निकालिये।

जालान : रुपया देने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन इन दिनों आप बहुत ज्यादा पीने लगे हैं।

बसंत : ओह, मैं पीता हू अपने लिए नहीं, आप लोगों के लिए। दीजिय, दीजिये, रुपये निकालिये।

(जालान दस-दस के पांच नोट निकाल कर देता है। बसंत रुपया लेकर तेजी से निकल जाता है। साथ ही अंदर से तरु आकर जालान से पूछती है)

तरु : वे गये कहां?

जालान : और कहा जायेंगे? मुझसे रुपये लेकर पीने निकल गये।

तरु : चलो, अच्छा ही हुआ। घर में रहने पर अशांति ही फैलाते रहते।

जालान : आजकल चौबीसों घंटे शराब पीते रहते हैं।

तरु : आखिर करूं क्या? शराब पीकर ही मरना है इन्हे!

जालान : एक बात मैं बाहर सुन कर आ रहा हूं ! कहते हैं कि आरती का विवाह लगभग पक्का हो गया है, क्यों?

तरु : राम-राम, भला आपसे किसने कहा?

जालान : कहिए, सच है, या झूठ।

तरु : इस घर के बारे में और भी बहुत-सारी बाते उड़ती हैं। पर क्या उन्हीं पर विश्वास कर लेंगे।

जालान : सुना है, आरती के पिताजी ने ही कहा है।

तरु : किससे कहा है?

जालान : किस महीने में विवाह होगा, उन्होने यहां तक भी बता दिया है।

तरु : शराबी आदमी की बात पर अगर विश्वास किया जाये, तब तो आदमी के लिए जिंदा रहना ही मुश्किल हो जायेगा।

जालान : नही-नहीं-- अगर सचमुच विवाह होना ही है तो–

तरु : क्या मुझ पर आप विश्वास नहीं करते?

जालान : जरूर विश्वास करता हूं। तभी तो---

तरु : आपसे बिना पूछे कौन-सा काम करते देखा है आपने मुझे?

जालान : बसंत बाबू तो मुझे आपका महाभक्त बताकर मजाक उड़ाया करते हैं?

तरु : मैं आपको होशियार कर देती हूं। दूसरों की बात पर कान न दें। आपको तो पता ही है कि इस घर के कितने सारे दुश्मन हैं।

जालान : ठीक ही कहती हैं आप! मुझे यहां आते देखकर न जाने कितने लोग मेरे पीछे लग गये हैं।.....

तरु : ईश्वर है जालान साहब! वह सब कुछ देखता रहेगा। अगर उसकी दया रहे तो लोग दुश्मनी करके क्या कर लेंगे।

जालान : ईश्वर की दया पर ही तो ससार चल रहा है।

तरु : मैंने तो लोगों से कभी धोखेबाजी नहीं की। इसी कारण मेरी यह हालत हो गयी है। हालांकि चाहती तो पक्का मकान बनवा लेती। फिर भी वे काटने से बाज नही आते। अपनी बात तो खैर छोड़ देती हूं, इस भोली बच्ची के नाम पर न जाने कितनी बातें फैलायी हैं।

जालान : मगर एक बात है। हमारे बसंत बाबू ने भी बड़ा अन्याय किया है। वे घरेलू बातें बहुत-से बाहरी लोगों से कहते फिरते हैं।

तरु : क्या करे? यह निकम्मा मर ही जाता तो अच्छा रहता।

जालान : ऐसा न कहें! वे आपके पति ठहरे।

तरु : जब से विवाह हुआ, आंसू बहाते ही दिन बीता। बुढ़ापे में मेरी क्या दुर्गति होगी, कौन जाने!

जालान : आरती के रहते फिर चिंता कैसी?

तरु : ऊंह, छोड़िये भी! बेटी की कमाई खाने के लिए विधाता ने हमारी फूटी किस्मत में लिखा ही नहीं है।

(तभी आरती आती है।)

आरती : क्या है जालान साहब, आप मेरी चर्चा क्या कर रहे हैं?

जालान : ओह, क्या तुम चोरों की भांति सुन रही थीं, सब कुछ?

आरती : आप मुझे चोर कहते हैं?

तरु : अब तुम दोनों जितना चाहो झगड़ लो। मुझे अंदर काम है।

(तरु अंदर चली जाती है।)

जालान : तुमसे एक बात कहनी है आरती, हालांकि बात तुम्हारी भलाई के लिए ही है।

आरती : कहिए! आपको कहने का पूरा अधिकार है।

जालान : तुम्हारी मां से अभी-अभी इस बारे में चर्चा की थी। हालांकि मैंने नाम नहीं बताया है। यह जो अमल नाम का लड़का तुम लोगों के यहां आया करता है, उसके साथ ही तुम्हारा विवाह होगा, बड़ी चर्चा है बाहर इसकी। इसलिए उसका आना बंद कर देना ही अच्छा रहेगा।

आरती : मैंने तो आपसे बता ही दिया है कि अमल हमारे नाते का है।

जालान : मगर तुम्हारे पिताजी ने बाहर यह बताया है कि यह बात झूठी है।

आरती : पिताजी ने कहा है ऐसा?

जालान : विश्वास करो।

आरती : और क्या-क्या सुना है आपने, बताइये तो!

जालान : इसी फागुन में ही विवाह होने वाला है।

आरती : और...

जालान : और, वे बातें शायद न कहना ही अच्छा होगा।

आरती : मैं क्या करूंगी, आपने सोचा है?

जालान : मां ने तो कहा है, सब झूठ है।

आरती : तो फिर...?

जालान : अगर सचमुच ऐसा है, तो फिर लोगों को बदनाम करने का मौका देना ही नहीं चाहिए।

आरती : यानी अमल का यहां आना बंद करना होगा?

जालान : हां, तब लोगों को कुछ कहने का मौका नहीं मिलेगा।

आरती : लेकिन लोग तो आपके बारे में भी बहुत कुछ कह रहे हैं।

जालान : मेरे साथ तुम अमल की तुलना करती हो आरती!

आरती : भला आप अमल के पीछे ऐसे क्यों पड़े हुए हैं? वह आपके पानी में जहर घोलने थोड़े ही आया है?

जालान : यह बात तुम्हें फिर नये ढंग से याद दिलानी पड़ेगी।

आरती : कोई अपराध किये बगैर अमल को यहां आने से भला मैं कैसे रोक सकती हूं?

जालान : क्योंकि मुझे वह पसंद नहीं है, इस बात पर...

आरती : आपको खुश करना भर ही मेरे जीवन का उद्देश्य नहीं हो सकता!

जालान : आरती!

आरती : भला आपके लिए मुझे अपने परिवार को भी छोड़ना पड़ेगा?

जालान : सुनो आरती, मुझे सब कुछ पता चल गया है। अमल के साथ तुम लोगों का कोई नाता नहीं। वह अपने स्वार्थ के लिए ही यहां आया करता है।

आरती : और आपने क्या बगैर स्वार्थ के इस घर से दोस्ती जोड़ी है।

जालान : उसके लिए तो मुझे काफी भरना भी पड़ता है।

आरती : अगर स्वार्थ रहे तो भरना पड़ेगा ही! यह कोई नयी बात थोड़े है।

जालान : आरती, तुम्हारा उद्देश्य क्या है!

आरती : मेरा उद्देश्य तो आप भलीभांति समझ गये हैं।

जालान : यानी अमल की बजाय मुझे ही यह राह बंद करने को कहती हो?

आरती : आप अगर खुद ही अड़चन डाल रहे हैं, तो फिर मैं भला आपको रोक कैसे सकती हूं?

जालान : मतलब तुम एक ही डोरी से सबके गले में फंदा डालना चाहती हो? मगर यह बात तुम जितनी आसान समझती हो उतनी आसान नहीं है। हो सकता है कि वही डोरी तुम्हारे गले में फंदा बन जाय। समाज के एक सम्मानित सज्जन की जबान से मैंने तुम्हारे बारे में बहुत-सी बातें सुनी हैं। अब भी मैं मौका दे रहा हूं। सारी बातें गहराई से सोच लो। और अगर मेरी इजाजत के बगैर विवाह करती हो, तो उसका नतीजा बाद में भुगतोगी।

(जालान तेजी से निकल जाता है। आरती गुस्से से 'मां' कहकर पुकार उठती है।)

आरती : मां!

(तरु अंदर से निकल आती है।)

तरु : मैं सारी बातें सुन रही थी आरती। तू जरा भी डरना मत! भला यह हमारा कर ही क्या सकता है? क्या उसे हमने कोई पट्टा लिख दिया है?

आरती : अब तो वह चारो ओर हमारी बदनामी करता फिरेगा, मां!

तरु : बदनामी सुनते-सुनते तो कान पक गये। और अब क्या बदनामी से डरकर चलना है?

आरती : वह जरूर अमल को सारी बातें बता देगा।

तरु : अगर सारी दुनिया एक तरफ हो जाय तो भी अमल हमारे पक्ष में ही रहेगा। और भला दूसरे को दोष देकर क्या होगा? घर का शत्रु ही तो सर्वनाश कर रहा है। बाप ही तो काल बन गया है। विवाह की बात चारों ओर फैलाता फिर रहा है। लोग सुनकर ईर्ष्या के मारे जल-भुन रहे हैं।

आरती : न जाने और कौन क्या बात फैलाये।

तरु : ठहर, अमल आ जाये! अगर हो सके तो इसी माह में विवाह कर दूंगी। दिन-वार, तिथि-विधि देखना सब छोड़ दूंगी।

आरती : मां, पिताजी आ रहे हैं, साथ जालान साहब भी।

(दोनों बाहर नजर डाल कर तेजी से अंदर चली जाती हैं। कुछ देर बाद जालान और बसंत का प्रवेश।)

बसंत : जालान साहब, आप तो एक नंबर के बुद्धू, यानी गधे हैं। (जालान चुप) भगवान ने आपको चाय बागान दिया है, जूट मिल दिया है, पेपर मिल दिया है। और भी कितनी तरह के व्यापार हैं। आप ठहरे करोड़पति! आप हमें रुपये देंगे, हम शराब पीयेंगे, मजा करेंगे, जिससे इच्छा शादी-विवाह करेंगे। भला आपको नाराज होकर निकल जाने का क्या अधिकार है?

जालान : मुझे काम है बसंत बाबू। (जाना चाहता है, बसंत रोकता है।)

बसंत : सुनिये, मेरे समय की भी कोई कीमत नहीं, ऐसी बात नहीं। बिना जरूरत के यह बसंत किरानी किसी के साथ समय नहीं बिताता। मुझे पेंशन मिलती है सौ रुपये, मगर मेरे घर को चाहिए महीने में एक हजार। क्या मुझे कम ब्रेन लगाना पड़ रहा है। सोचते-सोचते दिमाग को बिलकुल बरबाद कर डाला है।

जालान : आप ही बताइये, भला मेरे साथ आरती का ऐसा बर्ताव उचित है?

बसंत : सरटेनली नॉट! एकदम गलत है। मैं इस पर विचार करूगा। मेरे दोस्त का भला मेरी बेटी अपमान करे... !

जालान : आप जानते हैं बसंत बाबू, आप लोगों के कारण मुझे लोगों की कितनी बातें सुननी पड़ रही हैं। कितने ही लोग मुझे आमने-सामने ही गाली देते हैं।

बसंत : आप फिर बुद्धू जैसी ही बातें करने लगे। लोग तो अमीर को गालियां देते हैं, और गरीब पर सहानुभूति दिखाकर अपना प्रभाव फैलाते हैं। यह तो हमेशा चलता रहा है, और आगे भी चलता ही रहेगा। (तभी तरु आ जाती है।)

तरु : आरती की बात पर भला आपका इतना नाराज होना क्या उचित है? और वह आपसे उस तरह से कह सकती है, इसीलिए कह गयी। किसी पराये आदमी से तो इस तरह से कहने नहीं जाती है न!

जालान : अरे नहीं, मुझे भी झट से गुस्सा चढ़ आया। आप बुरा न मानें। आरती की बात अब मैं पकड़े नहीं रहूंगा।

बसंत : देखा न, देवी का आविर्भाव होने के साथ-साथ भक्त किस तरह से साष्टांग दंडवत् प्रणाम कर शरणागत हो गया। हैंः - हैंः - हैंः, तरु समझती हो न। हमारे सदाशिव को लोग जैसे गंजेड़ी मानते हैं, मुझे भी वैसे ही शराबी मानकर

किसी गिनती में ही नहीं रखते। मगर मैं भी एक छोटा-मोटा देवता हूं--तुम्हारा प्रभु हूं, यह बात कोई मानता नहीं।

जालान : वक्त-बेवक्त ऐसा मतवालापन अच्छा नहीं। आप जाइये अंदर।

बसंत : अच्छा, मैं जा रहा हूं। (दो कदम आगे बढ़कर, फिर मुड़कर) मगर बात यह है जालान साहब, कि अब मेरी जरूरत नहीं होगी। हैं: - हैं· - हैं:---

(बसंत अंदर जाता है और आरती " मां-मां " कहती निकल आती है।)

आरती : मां-मां !

(जालान को देख मुंह मोड़कर आरती चली जाती है।)

तरु : आपके चले जाने पर, रो-रोकर अपनी आंखें बिलकुल सुजा ली है इसने।

आरती : (मुड़कर) तुझे यह सब किसने कहने को कहा है मां?

जालान : तुम्हारा गुस्सा अभी नहीं मिटा आरती?

आरती : आपसे बात कौन करता है?

तरु : बड़ों से इस तरीके से बात करना अच्छा नहीं।

आरती : तू चुप रह!

तरु : कहती हूं न, इसे बड़ी चोट लगी है। यह सबको अपने ही जैसा उदार समझती है। फिर यह बात समझने के लिए भला इसकी उम्र ही कितनी है?

जालान : मेरी दुकान में तरह-तरह के नये-नये कपड़े आये हैं। चलो, तुम एक बार खुद देख लो, आरती!

आरती : मैं कह रही हूं न, आप मुझसे बात न करें। आपसे मेरा कोई नाता नहीं।

तरु : अरे जालान साहब ज़ब इतना कह रहे हैं, इस बार के लिए यह सब भूल जा।

आरती : तू क्या समझेगी मां। इन्होंने जो-जो बातें सुनायी हैं।

(नकली आंसू बहाती है)

जालान : मुझे सचमुच बड़ा पछतावा हो रहा है। मुझे माफ कर दो आरती।

तरु : जा - जा - आरती। नये कपड़े-वपड़े एक बार देख आ, दिल हल्का हो जायेगा।

आरती : ये सोचते हैं कि हमें बिलकुल खरीद ही लिया है!

जालान : मुझे और ज्यादा शर्मिंदा न करो आरती।

तरु : जा आरती, यों ही एक बार टहल आ। मन का बोझ हल्का हो जायेगा। कपड़े-वपड़े देंगे, तब भी न लेना।

आरती : इतना कुछ हो जाने के बावजूद क्या इनकी चीजें लेने जाऊंगी?

जालान : ऐसा न कहो आरती। तुम्हें लेकर ही तो मेरी इतनी सारी संपदा जुट रही है। धन-दौलत जो भी जहां है, मेरा नहीं है, तब कुछ तुम्हारा है।

तरु : क्या कहूं, जालान साहब। धन-दौलत पर इसका जरा भी लोभ-लालच नहीं है। इतना समझाती हूं, पर मेरी बात ही नहीं सुनती।

जालान चलो, आरती! मुझे और ज्यादा तकलीफ न दो, चलो।

तरु : जा आरती। आदर को ठुकराना नहीं चाहिए।

(आगे-आगे आरती और पीछे-पीछे जालान निकल जाता है। बसंत अंदर से आता है।)

बसंत : तरु, लोग कहते हैं कि मैंने पागल का बाना ले रखा है। शराब पीकर झूठ-मूठ नशे का नाटक करता हूं। कहते हैं कि यह सब मेरा बड़ा सुंदर अभिनय है। तुम क्या सोचती हो? क्या तुम भी उन्हीं की बातों की हामी भरती हो?

तरु : पता नहीं जी, आपके बारे में मैं कुछ कह नहीं सकती।

बसंत : अभिनय सिर्फ मैं ही नहीं कर रहा, तुम भी कर रही हो, आरती भी कर रही है, हम सभी कर रहे हैं। अपूर्व अभिनय कहो, क्या विचार है तुम्हारा?

तरु : आप मुझसे कुछ भी न पूछें।

बसंत : क्या? भला तुमसे न पूछू तो किसके पास जाऊं? मेरा और है ही कौन? और अभिनय के बारे में जानकारी है ही कितनों की? अभिनय किसे कहते है, वे भला क्या समझते हैं? सारे के सारे गधे हैं, गधे! गधों की तरह सिर्फ दूसरो का बोझ ढोने के लिए ही उनका जन्म हुआ है। उनकी बात सोचने पर नफरत के मारे मेरी नाक सिकुड़ जाती है।

तरु : लेकिन आप ऐसे ही चलते रहें तो क्या होगा? कुछ आगे के बारे में भी तो सोचना चाहिए। भविष्य के बारे में...

बसंत : क्या कहा? भविष्य! मेरा भविष्य! अपने भविष्य के बारे में मुझे पहले से ही पता है! मेरा भविष्य होगा, पापों का प्रायश्चित!

तरु : बावले की भांति आप यह सब क्या बक-बक कर रहे हैं?

बसंत : बावले की भांति? इसका मतलब लोगों का कहना ही सच है। तुम भी मुझे आखिर बावला ही समझती हो?

तरु : इतनी शराब पीने वाला आदमी बावला नहीं तो और क्या होगा?

बसंत : शराब पीने पर आदमी बावला होता है। तरु, यह तो तुम्हारी एक अद्भुत खोज है। इस दुनिया में आज कौन शराब नहीं पीता! तुम्हें पता है, प्राचीन युग में देवता भी सुरापान करते थे। और उसी शराब से तुम इतनी नफरत करती हो? शराब पीता हूं, शराबी हूं—इसीलिए तुम अपने पति को बावला मान बैठी हो!

तरु : अब तो मुझे पक्का विश्वास हो रहा है कि आप बावले ही नहीं, पूरे पागल ही हो गये हैं। आपको पागलखाने में जाने में और ज्यादा दिन नहीं हैं।

बसंत : पागल... हैं: - हैं: - हैं:! तुम तो खैः ऐसा सोचोगी ही--क्यों न सोचोगी? क्योंकि मुझे पागल कहने पर तुम्हारा फायदा है न! इसमें तुम्हारा सोलह आने स्वार्थ है। इसलिए जबरन ही क्यों न हो, मुझे पागल बनाकर ही छोड़ोगी। मगर अब तुम्हें मैं वह मौका नहीं दूंगा। अगर तुमने वैसी आशा रखी है, तो तुम्हें निराश होना पड़ेगा। सिर्फ निराश ही नहीं, उसका भयावह परिणाम भी तुम्हें भुगतना पड़ेगा।

(अमल 'मां, मां' कहता बाहर से पुकारता हुआ आता है और बसंत को देखकर ठहर जाता है।)

अमल : मां - मां...

तरु : क्या है, अमल?

अमल : नहीं... मां...

बसत : समझ गया, तुम्हारा चेहरा देखकर ही पता चल गया है कि मेरे सामने बात करने में तुम्हें कुछ संकोच हो रहा है और मुझे भी लग रहा है कि मेरा नशा धीरे-धीरे उतर रहा है। साथ ही कमजोरी भी महसूस हो रही है। इसलिए तुम दोनों दिल खोल कर बातें करो, और मैं अंदर जा कर जरा नशा लेकर कुछ सबल बन जाऊं।

(कहता हुआ अंदर जाता है।)

अमल : मां, मुझे घर से विवाह की अनुमति मिल चुकी है। यह चिट्ठी देखिये।

तरु : (चिट्ठी हाथ में लेकर) मैं एक बात सोच रही हूं। अमल, यह विवाह इसी महीने हो जाय। दिन-वार तिथि आदि नहीं देखना है। रुपया मिल जाय तो पुरोहित भी विवाह की सम्मति दे देगा।

अमल : लेकिन मैंने तो घर लिख भेजा था कि विवाह फागुन में होगा।

तरु : मगर उससे क्या होता है? आज फिर लिख दो।

अमल : लेकिन इतनी जल्दबाजी करने की जरूरत क्या हुई?

तरु : शुभ कार्य शीघ्र हो जाना ही मंगल है।

अमल : मगर मां और पिताजी क्या कहेंगे, क्या पता?

तरु : तुम्हारे विचार के खिलाफ वे कभी नहीं जायेंगे।

अमल : मैं तो मां की बात ही सोच रहा हूं। इस महीने वह विवाह होने देगी या नहीं, पता नहीं। वह यह सब बहुत ज्यादा मानती हैं।

तरु : इन चुगलखोरों के कारण ही मुझे बड़ा डर-सा लग रहा है। वे तो यह विवाह

तोड़ने के लिए जी-जान से लग गये हैं। हमारी बात छोड़ ही दो, आरती से तुम्हारे बारे में न जाने कितनी कितनी बातें लगायी हैं।

अमल : आरती है कहां?

तरु : बाजार गयी है। कपड़ा खरीदने।

अमल : ठीक है, आप चिंता न करें। मैं आज ही चिट्ठी लिखूंगा, तार भी कर दूंगा।

तरु : हां बेटे! यह विवाह जब तक न हो जाय, मेरी आंखों से नींद गायब रहेगी। अच्छा, अमल तुम जरा बैठो! आरती थोड़ी ही देर मे आनेवाली है। मैं अपने पुरोहित के यहां से अभी-अभी एक चक्कर लगा आती हू।

(तरु निकल जाती है। अमल एक कुर्सी खींचकर जैसे ही बैठना चाहता है, बसंत पुकारता है।)

बसंत : अमल!

अमल : पिताजी!

बसंत : तब तो तुमने विवाह करने की बात एक तरह से तय ही कर ली है, क्यों?

अमल : जी हां, एक तरह से विवाह हो ही चुका, समझ लीजिये।

बसंत : मगर मैं कहता हूं, तुम्हें और एक साल इंतजार करना चाहिए।

अमल : किसलिए पिताजी?

बसंत : विवाह करने की योग्यता तुम्हारी अब तक हुई नहीं। (अमल अचरज से बसंत के चेहरे की ओर देखता रहता है।) मैं क्या कह रहा हूं, समझ रहे हो या नहीं?

अमल : समझ रहा हूं।

बसंत : क्या समझ रहे हो?

अमल : मैं आरती के योग्य नहीं हूं!

बसंत : समझा है अपना सिर! पत्थर! मैने कहा न कि, कि तुम अक्ल के घोर दुश्मन हो!

अमल : अकल का दुश्मन हू मैं?

बसत : हां, हां, तुम अकल के दुश्मन हो।

अमल : मगर मेरे बारे में आपने ऐसी धारणा किसलिए बनायी!

बसंत : तुम्हारे हित के लिए।

अमल : मेरा हित...,

बसंत : जानता हूं, मैं जानता हू अमल। तुम्हारी वे निर्मल आंखें ही प्रमाणित करती हैं कि मेरी बातों से तुम्हें बड़ी चोट पहुंची है। फिर भी, फिर भी अमल! तुम्हें चोट पहुंचाने के लिए मैं विवश हू। इसमें मेरा स्वार्थ कण भर भी नहीं है। सिर्फ तुम्हारे हित के लिए ही--मै तुम पर चोट कर रहा हूं।

अमल : मैं तो कुछ भी समझ नही पा रहा पिताजी।

बसंत : समझोगे कैसे अमल? कैसे समझोगे? ऐसा भी एक जमाना था, जबकि मै भी तुम्हारी ही तरह कुछ समझ नहीं पाता था। मगर जिंदगी के कड़वे अनुभवों ने मुझे बहुत कुछ सिखला दिया है। इसके लिए मैं तुम्हें दोष नहीं दे रहा हूं अमल! तुम मुझे गलत न समझना। तुम्हारी इस कच्ची उम्र की कोमल-कोमल-सी नजरों में भला इस कुटिल संसार की छल-चातुरी कैसे आ सकती है? इसी कारण मैं कह रहा हूं अमल, मेरी बात सुनो, विवाह और एक साल पीछे कर दो।

(तरु बाहर से तेजी से आती है और बसंत की बात काट कर कहती है।)

तरु : आपके कहने भर से क्या होगा ऐसा? अब भला विवाह पीछे कैसे हटायेंगे?

बसंत : तो तुम्हारा भी विचार क्या ऐसा ही है अमल?

तरु : इनका विचार जानकर ही तो कर रही हूं।

बसंत : तुम मेरी बात पर क्यों बीच में टपक पड़ती हो? मैं तो अमल की जबान से सुनना चाहता हूं। क्योंकि तुमने जो जाल फैलाया है, उसे भेद कर अपने को छुड़ा सके, वह शक्ति अमल में नहीं है।

तरु : आप बाप होकर यह विवाह तोड़ना चाहते हैं?

बसंत : अमल, तुम भला मौन क्यों रह गये! कहो।

तरु : भला यह कहे तो क्या कहे?

बसंत : ठीक है, मगर लड़की का बाप होने के नाते–इस विवाह के लिए मुझसे तुम्हें अनुमति नहीं मिल सकती।

अमल : पिताजी।...

बसंत : साठ साल की उम्र गुजर जाने के बाद मैं और कसी नये पाप का भागी नहीं बनना चाहता।

अमल : मगर मेरी स्थिति पर तो जरा विचार कर लें।

बसंत : अमल...

अमल : मेरी जिंदगी वैसे ही बरबाद हो जायेगी।

बसंत : ऐसे उतावले न बनो।

अमल : मैं जानता हूं, आप मझे बड़ी स्नेह की नजर से देखते हैं। इसीलिए मैं आपको अषना लेना चाहता हूं।

बसंत : नहीं, मैं विवाह की अनुमति कभी नहीं दूंगा!

अमल : पिताजी, मेरी जिंदगी आप पर ही निर्भर है पिताजी!

बसंत : अमल!...

(बसंत बावले की भांति "अमल" कहकर पुकार उठता है। तभी जालान बदहवास भागा-भागा प्रवेश करता है। उसके सिर पर से खून बह रहा है। तरु, अमल, बसंत तीनों अचरज में पड़ जाते हैं।)

जालान : एक्सिडेंट, भयंकर एक्सिडेंट हो गया, बसंत बाबू!

तरु : किसका एक्सिडेंट हो गया जालान साहब?

जालान : मोटर के पहिये के नीचे पड़कर सिर बिलकुल भुरकुस हो गया है।

तरु : (उत्कंठा से) किसका सिर!

जालान : आरती का...

तरु : आरती का... आरती... आरती...

(कहकर चीख पडती है और दौड़ती हुई बाहर निकल जाती है। पीछे पीछे जालान जाता है। अमल जाना चाहता है, पर बसंत रोक लेता है। अमल ठहर जाता है।)

बसंत : सुनते जाओ अमल! आरती की मौत ने तुम्हारी नयी जिंदगी बनाने की राह खोल दी है।

(बसंत की बात सुनकर अमल सिर झुका लेता है। साथ ही परदा गिरता है।)

कठपुतली नाच

भवेन शइकिया

पात्र

कार्यालय का मैनेजर

कृष्ण चौधुरी

प्रदीप मजुमदार

सजय राय चौधुरी

संध्या देवी

(एक उद्योग-फर्म के खजांची का कमरा। दर्शकों की नजर पड़े, ऐसे स्थान पर रखी एक लोहे की आलमारी। दीवार पर एक घड़ी। चार मेजें। एक पर एक टाइपराइटर। संध्या टाइप कर रही है। तिरछे ढंग से रखी एक मेज पर एक, दस, सौ रुपये के नोटों के बंडल रखे हैं। कुछ नोट बिना बंडल बांधे मेज पर रखे हैं। प्रदीप मजुमदार रुपये गिन रहा है और कुछ लिख रहा है। बूढ़ा कृष्ण चौधुरी एक बडी-सी बही में कुछ दर्ज कर रहा है और अपनी बायीं ओर एक पर एक कागज रखता जा रहा है। संजय राय चौधुरी खड़े-खड़े काम कर रहा है। वह कभी इस सिरे पर, तो कभी उस सिरे पर आ-जा रहा है। कोई किसी की ओर देख नहीं रहा है।

दरवाजे पर दस्तक होती है—ठक्-ठक्। सभी की नजर दरवाजे की ओर उठ जाती है। क्षण भर रुक कर संजय दरवाजा खोल देता है। फर्म का जनरल मैनेजर आता है। सभी खड़े हो जाते हैं। वह सब की ओर एक बार देखता है। इसके बाद हाथ की घड़ी देखकर कहता है।)

मैनेजर : आप लोगों को और कितनी देर लगेगी? (चौधुरी की ओर देखकर) कहिये चौधुरी, कितनी देर होगी?

चौधुरी : ज्यादा देर तो होनी नहीं चाहिए सर। आधे घंटे के अंदर ही हो जायेगा!

मैनेजर : आधे घंटे के अंदर हो जाय तो ठीक है। कैश को तिजोरी में रखकर चार बजते ही चाभी मुझे दे आयें। मैं चार बजे तक कार्यालय में रहूंगा। बैठिये, आप लोग बैठ जाइये। (कोई नहीं बैठता) हां, तो राय चौधुरी (संजय की ओर देखकर) हमारा कार्यालय आपको कैसा लग रहा है?

संजय : (कोई महत्व दिये बगैर) भला कार्यालय और कैसा लगेगा? अच्छा ही लग रहा है।

मैनेजर : नहीं, मतलब कि आपके लिए तो कार्यालय नया है न! व्यवस्थाएं भी नयी-सी लग सकती हैं। समझ-बूझ लेने में कुछ समय लग सकता है।

संजय : हालांकि कार्यालय मेरे लिए नया है, मगर कैश-रूम मेरे लिए सभी एक जैसे हैं। किसी की तिजोरी में रकम ज्यादा होती है, किसी में कम। कोई कैश-रूम ज्यादा लोगों को संभालना पडता है, कोई कम लोगों को, (सबकी ओर एक नजर डालकर) मैं सब कुछ समझ-बूझ रहा हूं। कोई असुविधा तो होनी नहीं चाहिए।

मैनेजर : अच्छी बात। आपकी बातें सुनकर संतोष हुआ। आशा है, हमारा कार्यालय आपको अच्छा ही लगेगा। विश यू दि बेस्ट ऑफ लक।

संजय : थैंक यू, सर।

मैनेजर : (जाना चाहता है, पर अचानक ठहर कर) राय चौधुरी, आप देखियेगा, चार बजते ही चाभी मुझे जरूर मिल जाय। (मैनेजर चला जाता है। संजय जाकर दरवाजा बंद करता है। लौट कर गुस्से से)–

संजय : चाभी-चाभी-चाभी। भला ये लोग चाभी के लिए इतने पागल क्यों हैं? (दूसरे सभी लोग बैठे थे। संजय की नाराजी देखकर उन्हें अचरज होता है।)

मजुमदार : भला आप इतने नाराज क्यों हो रहे हैं, राय चौधुरी जा?

संजय : नाराज होने, न होने की बात नहीं है मजुमदार जी! आप लोग तो यहां अरसे से काम कर रहे हैं न! हर रोज हजारों की लेन-देन करते हैं; चाभी भी रोज समय पर जरूर जमा देते आये हैं; है या नहीं?

मजुमदार : जी हां।

संजय : आज मैनेजर को खुद कैश-रूम में आकर बार-बार चाभी की याद दिलाने की भला क्या जरूरत थी? या ये लोग यही सोचा करते हैं कि कर्मचारियों का उत्तदायित्व-बोध, कर्त्तव्य-बोध कभी-कभी अचानक खत्म हो जाता है?

मजुमदार : मतलब है–कल तो महीने की पहली तारीख है न। वेतन का दिन ठहरा। आज 'नार्मल ट्रांजेक्शन' की अपेक्षा कम से कम अस्सी हजार रुपया कैश में ज्यादा रहता है। ऐसे दिन मैनेजर खुद आकर चाभी की खबर लिया करते हैं। (संध्या फिर टाइप करने लगती है।)

संजय : मगर चाभी की खबर लेने से फायदा क्या है? मान लीजिये, आज आप ठीक चार बजे मैनेजर को चाभी दे आये। मगर उसी चाभी से कल सुबह दस बजे संदूक खोलने पर जब वे देखेंगे कि अस्सी हजार रुपये की जगह अस्सी रुपये भी नहीं है, तब क्या होगा?
(सभी चौंकर कर देखने लगते हैं।)

चौधुरी : वैसे होने को तो ज्यादा कुछ नहीं होगा। सिर्फ कल पहली तारीख को हम सभी कार्यालय के इतने सारे लोग, इतनी मेहनत के बावजूद जेलखाने में आराम कर रहे होंगे।
(संजय चौधुरी के चेहरे की ओर देखता हुआ पास आ जाता है)

संजय : हम तो जेल के सामने से आना-जाना किया ही करते हैं चौधुरी महाशय। जेल के अंदर जाना इतना आसान नहीं है। अगर यह इतना ही आसान होता, तो आज जेल के बाहर कितने लोग होते क्या आप बता सकते हैं?

मजुमदार : अभी जेल के अंदर जितने लोग हैं, उनसे भी कम।

संजय : बिल्कुल सही कहा है आपने।

चौधुरी : बात तो सही ही है। लेकिन हम जैसे लोग जिनके घर के प्राणी सिर्फ एक का ही मुंह ताकते, आशा लगाये रहते हैं, उनके लिए तो जेल जाने की सुविधा बहुत ज्यादा है। जेलखाना तो उन्हें 'आ-आ' कहकर पुकारता ही रहता है।

संजय : (कुछ नरम स्वर से) बंदूक लिये हुए पश्चिमी दरबान, लोहे की मोटी-मोटी छड़ों वाले दरवाजों के बीच नये-नये नोटों के बंडलो की लेन-देन करते हुए लगता है कि चौधुरी महाशय को जेलखाने के आतंक ने जकड़ रखा है। (क्षण भर रुक कर) आपके घर में और कौन-कौन हैं चौधुरी जी!

चौधुरी : नहीं, मेरा परिवार छोटा-सा है। एक लड़की है, एक लड़का। लड़की बड़ी है, सैकेंड ईयर में पढ़ती है। लड़का छोटा है, आठवें वर्ग में पढ़ता है और उनकी मां है। बस, परिवार यही है।

संजय : और आपकी लड़की सैकेंड ईयर में पहुंच गयी। यानी काफी बड़ी हो गयी है। और लड़की जितनी बड़ी होती जाती है, समस्याएं भी एक के बाद एक बढ़ती जाती हैं। है या नहीं।
(कहकर तेज नजर से चौधुरी की ओर देखता है)

चौधुरी : यह क्या बताने की बात है? लड़की की उम्र अब सत्रह साल की है। शायद मै और तीन-चार साल निश्चिंत होकर बैठा रह सकता हूं। लेकिन रह नही सका हूं।

संजय : क्यों नही रह सके आप? लड़की पढ़ रही है, पढ़ती रहे। आई.ए. पास करे, फिर बी.ए. पढ़े, बी.ए. पास कर ले तो एम.ए. पढ़े।

चौधुरी : उतना अगर हो सकता, तब तो कोई बात ही नहीं थी। उतने के लिए तो किस्मत भी होनी चाहिए।

संध्या : (संध्या उठकर चौधुरी के पास आती है, उसके हाथ में एक कागज है।) यह एक ही कालम में टाइप कराना होगा या हरेक के लिए अलग-अलग कालम करना होगा जी?

चौधुरी : देखूं! ओह नहीं, एक ही कालम में करना होगा।

संध्या : कितनी कापियां?

चौधुरी : तीन-तीन कापियां।

संध्या : जी, अच्छा! (संध्या अपनी जगह चली जाती है।)

संजय : चौधुरी महाशय, आप तो किस्मत की बात कह रहे हैं न। मगर सिर्फ किस्मत के भरोसे रहने से क्या होगा? लड़की परीक्षा दे, पास होती जाय। अगर

सोचने के मुताबिक काम न हो, तो कितनी सारी राहें खुली हैं। मान लें वह टाइपराइटिंग सीखे, शार्टहैंड सीखे और उसके बाद फिर इस विशाल इंडस्ट्रीयल फर्म का आफिस तो है ही।

चौधुरी : नहीं, नहीं, मैं अपनी लड़की को आफिस की नौकरी करने नहीं दे सकता। (संध्या अपनी मेज पर से मुड़कर देखती है। संजय संध्या की ओर एक बार देख लेता है।)

संजय : क्यों? आफिस की नौकरी क्या बुरी है? यहीं तो आपके सामने बैठी संध्या देवी नौकरी कर रही हैं। देखती हैं न संध्या देवी! आपके सहकर्मी की आप लोगों के बारे में कैसी धारणा है।

संध्या : (आहत स्वर से) जी नहीं, ये तो सही बात ही कह रहे हैं।

संजय : इसका मतलब? क्या इसका मतलब है कि यहां नौकरी करना आपको पसंद नहीं है?

संध्या : यह पसंद - नापसंद की बात नहीं है।

संजय : नहीं, नहीं, मैं साफ-साफ जवाब चाहता हूं। मान लें कि इनकी लड़की की, (चौधुरी से) चौधुरी महाशय, क्या नाम है आपकी लड़की का?

चौधुरी : निर्माली।

संजय : निर्माली! हां, मान लें कि कभी निर्माली की नौकरी करने की इच्छा हुई। आपको नौकरी का तो अनुभव है। इसलिए वह आकर आपसे पूछे कि वह नौकरी करे या न करे। तब आप क्या कहेंगी?

संध्या : मैं कहूंगी, अगर मेरी तरह वह भी बदकिस्मत है, और मेहनत से अपना उद्धार करना चाहती है, तब तो नौकरी करने के सिवा और कोई चारा नहीं है। मगर नौकरी करना अच्छा लगेगा या नहीं, यह मैं कह नहीं सकूंगी। क्योंकि अपने क्षेत्र में मुझे पता है, अच्छा न लगने पर भी मैं लाचार हूं। जरूरत के कारण ही मैं नौकरी कर रही हूं। (टाइप करती है)

संजय : जिंदगी में संग्राम करने का आप लोगों का आदर्श तो ठीक ही है। मगर आप लोगों की बातों का स्वर इतना निराशापूर्ण क्यों है, बताइये तो सही। इस उम्र में आपकी ऐसी कौन-सी बदकिस्मती है, प्रयोजन की कौन-सी ऐसी ताड़ना आ पड़ी है।

(संध्या से जवाब पाने की आशा से रुका रहता है। मगर संध्या जवाब न देकर चुप रहती है। संजय चोट खाया-सा लगता है)

ओ, आप वह बात कह नहीं सकतीं या कहना नहीं चाहतीं! शायद मैं बहुत ज्यादा व्यक्तिगत सवाल कर रहा हूं। 'आई एम सॉरी' (अचानक

आवेश में आ जाता है, और मजुमदार के पास आता है।) यही हमारे लिए सबसे मुश्किल है, जानते हैं न मजुमदार! एक-दूसरे को जानने के लिए हमें बहुत-सारे व्यक्तिगत सवालों को उधेड़ना होता है। आपको याद है न, अभी-अभी मैनेजर ने मुझसे पूछा था कि हमारा कार्यालय कैसा लग रहा है, सब कुछ समझ-बूझ लिया है - या नहीं। इसका मतलब है कि वे यही पूछ गये कि इस कैश-रूम में नोटों के बंडलों का हिसाब-किताब रखने की व्यवस्थाएं मुझे कैसी लग रही हैं। ये जो इधर-उधर सिलसिलेवार बांटकर फाइलें रखी हुई हैं, ये जो बहियां हैं, इनमें ईशू नंबर, चैक नंबर, बैलेंस, टोटल के अलग-अलग खाने हैं, उन्हें ठीक से समझ-बूझ लिया है या नहीं। उन्होंने मुझसे यह बात जरूर नहीं पूछी थी कि इस कमरे में जो और तीन प्राणी काम करते हैं, वे मुझे कैसे लग रहे हैं। (चौधुरी के पास आकर) चौधुरी महाशय, संध्या देवी सुबह से शाम तक एक मशीन के साथ काम करती हैं। मगर वे खुद मशीन नहीं हैं। आज उस मशीन को बीमारी हो जाय, मैनेजर साथ-साथ कंपनी के लोगों को सूचना भेजेगा। लोग आ जायेंगे। मशीन की मरम्मत हो जायेगी। मगर संध्या देवी को कोई बीमारी हो जाय, उनकी तो 'कैजुअल लीव' ही कटेगी। और अगर उस समय मैं इनके यहां खबर लेने जाऊं तो यह कहा जायेगा कि मैं बहुत ज्यादा 'पर्सनल' बातें जानना चाहता हूं।

मजुमदार : नहीं-नहीं राय चौधुरी जी। आपको गलतफहमी हुई है। आपसे अपनी व्यक्तिगत बातें कहने के संबंध में हमारी जरा भी झिझक नहीं है। आप संध्या देवी से जो व्यक्तिगत बात जानना चाह रहे हैं उससे कहीं बहुत ज्यादा व्यक्तिगत बातों की चर्चा हम किया करते हैं। संध्या देवी अपने प्रयोजन और बदकिस्मती के बारे में आपसे बताना नहीं चाहतीं—शायद शर्म के कारण। मैं ही बता देता हूं, सुनिये। वह शादी करने की बात सोच रही हैं।

संजय : (उत्फुल्लित होकर) शादी? वाह! बड़ी सुंदर बात है। कांग्रेचुलेशन संध्या देवी। विश यू गुड लक। जरूर-जरूर। शादी तो एक आवश्यकता है। एक मोहक प्रयोजन है। (चौधुरी के पास आकर धीमे स्वर में) यहां की बातों की हवा में जवानी की गर्माहट महसूस हो रही है। चौधुरी महाशय, मुझे आशा है कि आपको भी बुरा नहीं लगा है।

मजुमदार : नहीं, नहीं उन्हें बुरा क्यों लगेगा। ये तो साथ-साथ हमारे मित्र, गुरु सब

कुछ हैं। आपको तो मालूम ही है कि एक ही कमरे में लगातार दिन-पर-दिन, माह-पर-माह, काम करते रहने पर क्या हो जाता है?

संजय : हां, मुझे मालूम है। मगर कहिये तो संध्या देवी, विवाह के प्रयोजन की बात तो मैं जानता हूं पर उसके बीच यह आपकी बदकिस्मती वाली बात भला कैसे आयी?

संध्या : बात कुछ दूसरी तरह की है। मेरी बदकिस्मती के बीच ही प्रयोजन की बात आयी हैं। विवाह हो जाने के बाद परिवार से हमारा संपर्क खत्म हो जायेगा।

संजय : मगर वह तो सभी लड़कियों का होता है।

संध्या : लेकिन मैं जिससे विवाह करूंगी उसे भी अपना परिवार छोड़कर आना होगा। हम लोग घर-परिवार और समाज के खिलाफ काम कर रहे हैं। अब तो हमारे पास वापस जाने का भी समय नहीं रहा है। मेरी उम्र हो गयी है। अब मैं साधारण गलती करने वाली सत्रह साल की लड़की नहीं हूं।

(चौधुरी संध्या की ओर देखता है। संजय की उस पर नजर पड़ती है।)

संजय : अच्छी बात है! आपका मनोबल है, साहस है, मगर यहां बदकिस्मती की कौन-सी बात आयी।

संध्या : हम लोगों ने जो राह चुनी है, उस पर कदम बढ़ाने के लिए काफी संबल की जरूरत है। हम जहां भी रहें, रहने के लिए एक मकान चाहिए, रोटी चाहिए। इसलिए ही मुझे इस इंडस्ट्रियल आफिस मे नौकरी करने की जरूरत है।

संजय : क्यों? और आपके भावी पति? वे भी तो परिवार चलाने का इंतजाम कर सकते हैं?

संध्या : जी, वे अकेले नहीं कर सकते। आइ.ए. पास मास्टर ठहरे। वेतन मिलता है कुल पंचानवे रुपया।

संजय : (तुरंत) और आपको कितना मिलता है?

संध्या : एक सौ दस रुपये।

संजय : (गंभीरता से इधर-उधर चहल-कदमी कर) एक सौ दस रुपये। सुनकर कैसा लगता है चौधुरी जी। शायद इसी कारण आपने कहा था, आपकी लड़की की उम्र सत्रह साल है, आप चाहें तो और कम से कम तीन-चार साल निश्चिंत होकर रह सकते हैं। किंतु रह नहीं सकते। आप शायद

सोच रहे हैं, अचानक अगर आपकी लड़की की जिंदगी में भी संध्या देवी की भांति ही कोई बदकिस्मती उतर आये तो क्या होगा।

चौधुरी : नहीं-नहीं-नहीं, जी! मैं ऐसा नहीं सोचता। राय चौधुरी जी! उम्र ने मेरे गालों पर लकीरें खींच दी हैं, मैं बूढ़ा हो गया हूं। परंतु समय ने मुझे बहुत कुछ सिखाया भी है। निर्माली मेरी इकलौती बेटी है। अगर वह अपनी जिंदगी की राह खुद चुन लेती है, तो भला मैं उसे कैसे रोकूंगा? और रोकूंगा क्यों? अगर उसकी जिदगी की इतनी लंबी राह बना देने की ताकत मेरी होती, तब तो रोकने का सवाल भी आता। फिर भी, फिर भी, वह चाहे जहां भी जाय, इकलौती लड़की का बाप होने के नाते, एक मंडप बनाकर, शंख-उरुली[1] की आवाजों के बीच उसे विदा देने की अभिलाषा मन में है। उसके लिए एक आयोजन की जरूरत है। मैं उसी की चिंता किया करता हूं।

संजय : ओ, आप शंख-उरुली की बात, मंडप के खर्च की बात ही सोचते हैं? लेकिन वह तो कोई बड़ी समस्या है नहीं।

चौधुरी : अगर नहीं होती, तब तो अच्छा ही था राय चौधुरी! पर समस्या है। एक लड़की के विवाह का खर्च, एक लड़के को इंसान बनाने के खर्च की समस्या मेरे जैसे आदमी के लिए नहीं है, ऐसा नहीं है राय चौधुरी।

संजय : (नोटों के एक बंडल को हाथ में उठाकर खेलता हुआ-सा) कैसी अजीब चीज है यह रुपया! (मजुमदार जोर से हंस पड़ता है) क्यों, मजुमदार जी, आप तो हंस पड़े? क्या आपकी कोई ऐसी बदकिस्मती की समस्या नहीं है?

मजुमदार : मुझे देखकर आपको कैसा लगता है? (उदास हंसी से)

संजय : आपकी उम्र वाले लड़कों को मैंने इस शरद काल में एयरवेज आफिस में रंगून, तोक्यो, कश्मीर के टिकट बुक करते देखा है। वे लोग वहां हॉलीडे मनाने जाते हैं। मगर देखने से ही तो नहीं होगा न।

मजुमदार : जी हां, नहीं होगा। देखने के बाद उनसे पूछना पड़ेगा, उनके घर-बार, जमीन-जायदाद सब कुछ गिरवी पड़े हैं या नहीं। (हंसता है)

संजय : (विस्मित-सा) आपके घर-बार गिरवी रखे हैं? बात क्या है?

मजुमदार : (उत्तेजित होकर) बात बहुत-ही छोटी-सी है राय चौधुरी। मैं तो रोज इन लोगों से कहा करता हूं आप लोग सुखी हैं। आप लोगों की समस्या तो कोई समस्या ही नहीं है। सुनिये, मेरे पिताजी का लाखों का व्यापार था।

1 विवाह आदि के समय महिलाओ द्वारा मुह से किया जाने वाला शब्द, उलु ध्वनि।

व्यापार फेल हो गया। व्यापार को उबारने के लिए आखिरी उपाय के रूप में घर-जमीन गिरवी रखकर जब पिताजी नये उत्साह से काम में हाथ डालना चाहते थे, तभी उन्हें एक बीमारी हो गयी जिसका नाम है कैंसर! आपको तो शायद पता है, यह बीमारी अगर आ जाती है, तो फिर अकेले नहीं जाती। पिताजी भी चले गये। साथ ही सारे रुपये-पैसे अपने साथ लेते गये। (कुछ रुक कर) शरद् काल में एयरवेज आफिसों में आपने जिन्हें रंगून, दिल्ली, कश्मीर के टिकट बुक करते देखा है, मैं तो उनमें नहीं हूं, राय चौधुरी जी!

संजय : (सहानुभूति से) आप अब कर क्या रहे हैं?

मजुमदार : यही किरानी का काम।

संजय : और घर-बार?

मजुमदार : हमारे घर-बार की कीमत दो लाख से भी ज्यादा है। उस घर-बार की ओर देखते रहकर मां को आंसू बहाते रहने को कह दिया है। मेरी तो सिर्फ कोशिश इतनी ही है कि मां के साथ सिर छुपाने के लिए दो कट्ठा जमीन भी छुड़वा सकूं! मगर धीरे-धीरे मैं समझ गया हूं– वह मेरे द्वारा संभव नहीं होगा। कोई आशा ही नहीं है। मेरे इस एक सौ बीस रुपये के वेतन से इस जिंदगी में वह सभव ही नहीं है।

संजय : दो कट्ठा जमीन छुड़वाने के लिए कितने रुपये चाहिए मजुमदार?

मजुमदार : पांच हजार रुपये।

(संजय मेज से कुछ हजार रुपये उठाकर आगे बढ़ा देता है)

संजय : लीजिये!

मजुमदार : आप मजाक उड़ा रहे हैं, राय चौधुरी। (हंसता है)

संजय : (दृढ़ स्वर से) नहीं, मजाक नहीं। रुपया लेना हो तो इसी तरह से लेना चाहिए। इस मेज पर कम से कम अस्सी हजार रुपये पड़े हैं। जानते हैं, अगर आप चाहें तो रात भर के अंदर आप क्या बन सकते हैं?

(सभी लोग स्तब्ध हो जाते है। कुछ देर बाद चौधुरी सहज होने का प्रयास करता है।)

चौधुरी : उस तरह की परी-कथाएं हमने भी बहुत सुनायी हैं, राय चौधुरी। हजारों रुपयों का हिसाब करते-करते जबकि हाथ दुखने लगता है, आंखों में दर्द होने लगता है, तब एक ही रात के अंदर क्या बन सकते है, ऐसी चर्चाएं कर हमने भी अनेक भवन बनाये हैं, पर दूसरे ही दिन निर्विकार भाव से इन्हीं हाथों एक सौ पचासी रुपये का वेतन हाथ फैलाकर ले लिया है।

संजय : इसी कारण मैं तो परी-कथा नहीं सुना रहा चौधुरी महाशय! आप लोगों से मैं एक साफ जवाब चाहता हूं। इन अस्सी हजार रुपयों से आप लोगों में से हर-एक की समस्याओं का तुरंत हल हो सकता है या नहीं?

चौधुरी : (शंकित होकर) अगर आप परी-कथा नहीं सुना रहे, तो अब इस बारे में और कुछ न कहना ही अच्छा होगा। यह बड़ी खतरनाक जगह है। यहां दीवारों के भी आंख-कान होते हैं।

संजय : यही तो सबसे बढ़कर अफसोस की बात है चौधुरी महाशय! दीवारों के भी आंख-कान हैं, लेकिन कभी-कभी देखा जाता है कि हमारे लोगों के आंख-कान नहीं है। हालांकि हमारे जीवन को कुछ संगीन, खतरनाक क्षण हमेशा घेरे रहते हैं। किसी भी क्षण में प्रदीप मजुमदार को अपनी मां का हाथ पकड़ सड़क पर खड़ा होना पड़ सकता है। (मजुमदार से) किसी भी क्षण इकलौती बेटी निर्माली चौधुरी महाशय को निराश कर सकती है। (फिर से चौधुरी को) किसी भी क्षण में संध्या देवी...

संध्या : मगर राय चौधुरी जी, मैं आपकी बाते समझ नहीं पा रही हूं। आप कहना क्या चाहते हैं...

संजय : मैं तो सिर्फ एक ही बात कहना चाहता हूं। साधारण रूप से जिंदगी बिताने के लिए आप लोगों को रुपये की बड़ी जरूरत है। मैं आप में से हर एक को बीस-बीस हजार रुपये देना चाहता हूं।

सध्या : कहा से देंगे?

संजय : यहीं से--इसी मेज पर से।

संध्या : यहीं से? यह तो आपका रुपया नहीं है।

संजय : नहीं है। मगर आप बता सकती हैं, ये रुपये हैं किसके? कहिये, किसके है ये रुपये? नहीं, आप नही बता सकतीं। ये रुपये किसी के नहीं है। आपके भी नहीं, मेरे भी नहीं। किसी के नहीं। मगर सबके हैं। कल आपको जो एक सौ दस रुपये मिलेंगे, वे भी तो आपके रुपये नहीं हैं। पर आपके प्रयोजन की अपेक्षा ये रुपये इतने कम हैं कि उनका हर पैसा आप अपना मानकर पकड़ना चाहती है। यह बीस हजार रुपये आप ले जाइये, अगर राह में इनमें से एक सौ दस रुपये खो भी जायें तो भी आपका कुछ लगेगा नहीं। मगर किसी ऐसे बदकिस्मत आदमी को, जिसे एक सौ दस रुपये की सख्त जरूरत है, ये रुपये मिल जायें, तो वह उन्हें खर्च करेगा! वह समझेगा कि वे उसी के रुपये हैं। अब तो जमाना बदल चुका है संध्या देवी! जिसे रुपये की जरूरत हो, रुपया उसी का है।

संध्या : लेकिन--जरूरत तो सिर्फ मेरी ही नहीं है न!

संजय : नहीं है। जरूरत है चौधुरी महाशय की, मजुमदार की, सब की। लीजिए चौधुरी महाशय, बीस हजार लीजिये। मजुमदार, बीस हजार लें, और आप...

संध्या : आप चोरी करने को कह रहे हैं--डकैती करने को कह रहे हैं...

संजय : (कुछ संत्रस्त होकर) नहीं, ठीक-ठीक डकैती नहीं, चोरी नहीं।

संध्या : चोरी नहीं तो भला क्या है? आफिस के कैश का रुपया है। कल हस्ताक्षर करने के बाद मेरे हाथ में जब तक दिया नहीं जाता तब तक इस अस्सी हजार रुपये के एक सौ दस रुपये पर भी मेरा कोई अधिकार नहीं है। और आप कह रहे हैं, हर आदमी बीस-बीस हजार ले जाय। क्या यह चोरी नहीं है?

संजय : अच्छा मान लीजिये कि चोरी है, तब?

संध्या : वह रुपया मुझे नहीं चाहिए, राय चौधुरी जी! मैं मांगकर खाऊंगी, भीख मांगकर गुजारा करूंगी, उपवासी रह जाऊंगी, वह भी अच्छा है। छिः छिः! नहीं-नहीं आप मजाक कर रहे हैं, जरूर मजाक कर रहे हैं।

संजय : नहीं, ठीक-ठीक मजाक नहीं। मगर हां, इसे आप मजाक भी कह सकती हैं। लाखों रुपये लेकर जबकि बड़ी-बड़ी इंडस्ट्रियल फर्मे जुआ खेलती हैं, तो अस्सी हजार रुपये इधर-उधर करना भी आप मजाक ही मान सकती हैं।

संध्या : नहीं, नहीं, वैद्य से मजाक की मुझे जरूरत नहीं। कृपया आप ये बातें बंद करें मुझे असह्य लग रही हैं। वेतन मिलते ही वापस कर दूगी, कह कर कभी-कभी मुसीबत मे पड़ने पर पांच-दस रुपये कैश से ले जाती हूं। जब तक वापस नहीं कर देती, मेरी छाती धड़कती रहती है। दूसरों के रुपये लेकर मजाक करने की योग्यता मेरी उससे ज्यादा नहीं है।

संजय : योग्यता नाम की कोई निश्चित चीज तो है नहीं।

संध्या : है, जरूर है। मेरी एक सौ दस रुपये की योग्यता है। उससे ज्यादा मुझे और कुछ भी नहीं चाहिए। एक साथ ये हजारो रुपये देख पाना भी मैं अपनी बदकिस्मती मानती हूं। इससे और बड़ी बदकिस्मती मैं अपने ऊपर लेने का मजाक नहीं कर सकती राय चौधुरी जी! चौधुरी महाशय करें, मजुमदार जी करें, मगर मुझसे न कहें--मैं नहीं कर सकती।

चौधुरी : क्या आप सचमुच चोरी करने की बात कह रहे हैं, राय चौधुरी?

मजुम : इसे चोरी करना कहते हैं, या क्या कहते हैं, मैं कह नहीं सकता। मैं एक

साफ बात कह रहा हू। रुपये की चिता ने आप लोगो को अपाहिज बना डाला है। ये अस्सी हजार रुपये आप लोग अपने काम मे लगाइये, भले ही इससे आप लोगों की जिदगी का रग न बदले, पर दुश्चिन्ता तो मिटेगी!

चौधुरी : उसका बिल्कुल उल्टा ही होगा राय चौधुरी। दुश्चिताएं मुझे ग्रस लेगी। मेरी जिंदगी का रग बदल जायेगा, मगर आप ऐसी बाते कैसे कह पा रहे हैं?

संजय : इसी कारण कह पा रहा हू, कि अपनी संतान को आदमी न बना पाने के लिए "किस्मत-किस्मत" कह कर सिर पीटने की आदत मेरी नहीं है।

चौधुरी : नहीं, नहीं,सध्या सही कह रही है। अगर मै अपने बाल वच्चों को पाल-पोस नहीं सकता, तो मैं सड़क पर भले ही निकल जाऊंगा, मगर...

संजय : जमाना बहुत बुरा आ गया है चौधुरी जी। सड़क भी आजकल सबको जगह नहीं देती।

चौधुरी : चाहे जो भी हो, मैंने चौदह साल नौकरी की। मेरा और कुछ रहे न रहे, अपनी संतान के सम्मुख कम से कम एक इंसान के रूप मे मैं खड़ा हो सका हूं। पिता के रूप में, पति के रूप मे कुछ सम्मान मुझे मिला है। कल सुबह पुलिस जब मुझे हथकड़ी लगाकर उनके सामने से घसीटती ले जायेगी ... नहीं-नहीं, मुझसे... मुझसे ऐसा कभी नहीं हो सकेगा। इस उम्र में मैं चोर नहीं बन सकता।

मजुमदार : (चीख कर) ऐसा नहीं हो सकना, नही हो सकता। ऐसा करना असंभव है।

संजय : (मजुमदार के बिल्कुल पास आकर)– असंभव क्यों है मजुमदार!

मजुमदार : मुझे जिंदगी भर जेल में सड़ना पड़ेगा। और मेरी मा मर जायेगी राय चौधुरी। लाखों रुपये की जिदगी शुरू कर सब कुछ खो चुकने के बाद मां आज गिरवी रखी जमीन पर दूसरों के मकान में सिर छिपाये जिदा है। और वह जिंदा है सिर्फ मेरे मुंह की ओर देखकर। मै किरानी के काम की रकम से ही मां को पालूंगा। मैं जेल नहीं जा सकता।

संजय : मगर आप लोगों को जेल जाना होगा, यह किसने कहा है?

मजुमदार : आप ही कह रहे हैं।

संजय : कभी नहीं कहा मैंने। बल्कि मैंने तो कुछ देर पहले आप लोगों से यह कहा था कि हम जेल के सामने से आना-जाना ही करते है, मगर जेल के अंदर जा पाना इतना आसान नहीं है।

मजुमदार : इसका मतलब? इसी मेज से, चार आदमियो के बीच से अस्सी हजार

रुपये गायब हो जायेंगे, उसके बावजूद हम खुले रह सकेंगे, क्या यह भी संभव है?

संजय : जरूर संभव है, मजुमदार! जरूर संभव है! मैं संजय राय चौधुरी छह-कैश-रूमों के अनुभवों से आप लोगो से यह बात कह रहा हूं। उन छह कैश-रूमों में से एक-एक ऐसा था जो आप लोगों की इस पूरे इंडस्ट्रियल फर्म को खरीद सकता था। मैं उन छहों कैश-रूमों के पते आप लोगों को दे रहा हूं, आप लोग पता लगा आयें! सुनेंगे कि हर एक में एक-एक रहस्य भरी घटना हो चुकी है। और हर घटना के साथ हजारों रुपयों का मामला जुड़ा है। पर आप लोग देखेंगे कि हर कैश-रूम में कर्मचारी हसी-खुशी काम कर रहे हैं। और उन लोगों मे (चौधुरी से) चौदह साल की क्या बात, बीस-साल काम करने वाले लोग भी हैं। परंतु कहां? कोई भी तो जेल नहीं गया?—

चौधुरी : तो फिर आप-आप-आप—

संजय : मेरी पेटी में तले में कुछ अखबारों की कतरनें आपको मिलेंगी। छह रहस्यमयी घटनाओं की निष्फल जांच के लबे-लंबे विवरण। उन्हें अखबारों से काटकर छह सर्टीफिकेटो जैसे रख दिया है। बीच-बीच में देख-पढ़कर मजा लेने के लिए। (अपनी बाह खोलकर) यह कैसी निशानी है, बता सकती हैं संध्या देवी? पुलिस से लेकर सब यही जानते थे कि अपार साहस से डाकुओं को रोकने में उसकी गोली लगने के कारण संजय राय चौधुरी गिर पडा था। असल मे मेरे शरीर मे तो बैंक के दरबान की चलायी गयी गोली लगी थी। वह दरबान आजकल तीन सौ गायो वाला बनकर बड़ा भारी दूध का व्यापार करता है। और उसे मैंने ही बसाया है। और मैं अब तो वन आफ दि मोस्ट एफिशिएट हैंड इन दि कैशरूम माना जाता हूं। मुझे ज्यादा इंक्रिमेंट देकर यहा बुला लिया गया है। कल आपको तो सिर्फ एक सौ पचासी रुपये मिलेंगे। मगर महीना पूरा होते ही मुझे मिलेगा तीन सौ पचास रुपया। और नौकरी में आये मुझे सिर्फ आठ साल हुए हैं। चौदह साल होने में तो अभी बहुत समय बाकी है।

मजुमदार : मगर हम क्या कहेंगे राय चौधुरी जी।

संजय : (तेज नजर से क्षण भर मजुमदार की ओर देखकर) आप लोगो को कुछ भी नहीं कहना है। आज चार बजे के बाद आप लोग अपने-अपने घर चले जायें। कल नियमानुसार समय पर यहां आने के बाद आप देखेंगे कि बात कहने के लिए बहुत सारे मौन गवाह यहां मौजूद हैं। यहां पड़े

रहेंगे दो सिलिंडर, एक आक्सीजन का, दूसरा एसीटिलिन का। यहां-वहां कुछ ऐसी चीजें पड़ी रहेंगी, जिनकी जाच-याच करने के बाद लेबोरेटरी के कार्यकर्त्ता यह रिपोर्ट भेजेंगे कि ये विस्फोटक वस्तुएं हैं। वहां एक छेद से होकर एक रस्सी टंगी रहेगी। यहां-वहां कुछ ऐसी उंगलियों की निशानियां होंगी जिनका जन्म दुनिया में हुआ ही नहीं। चौधुरी महाशय, आपने प्लास्टिक की उंगलियां देखी हैं? नहीं देखी? आप और भी देखेंगे, रुपया रखने की इस अलमारी के दरवाजे का एक हिस्सा उड़ गया है। अंदर हैं कुछ अधजले नोट। और अलमारी की चाभी हाथ में लिये आप लोगों का वह जनरल मैनेजर पसीना-पसीना होकर स्पेशल डिटेक्टिव अफसर के पीछे-पीछे चक्कर लगा रहा है।

संध्या : ओह, मैं यह सब सहन नहीं कर संकूगी। कृपया मुझे सबसे छुटकारा दे दीजिये आप लोग।

संजय : आप लोगो को सिर्फ एक ही मदद करनी है। सिर्फ एक। चाभी मेरे हाथ में सौंपकर आप लोग कार्यालय से निकल गये हैं और सुबह कार्यालय आये हैं। इसके सिवा आप लोगों को और कुछ पता नहीं, आप लोगों को सिर्फ इतना ही कहना है। सिर्फ इतनी ही मदद करनी है। सोच लीजिये, सिर्फ इतनी सी मदद के जरिये आप लोग अपनी जिंदगी की सारी दुश्चिंताएं दूर कर सकते है। ये सारे रुपये आप लोगों के हैं। कहिये, कहिये आप लोग क्या कहते हैं? चौधुरी महाशय, कहिये...

चौधुरी . आपको तो पता है कि मुझे रुपये की बड़ी जरूरत है। रुपये की चिंता में मैं असमय में ही बूढ़ा हो गया हूं। रुपया मुझे चाहिए– हा, रुपया मुझे चाहिए। निर्माली के लिए, अपने लड़के के लिए मुझे रुपये चाहिए। मगर उसके लिए डकैती करना-नहीं, नहीं,नहीं ...

संजय . (साथ ही साथ) देखिये चौधुरी जी ! जो लोग बैंकों में डाका डालते हैं, वे सभी सिर्फ शराब पीने के लिए ही डाके नहीं डालते! बहुत से लोग तो खाना मिले, इसलिए भी करते हैं।

चौधुरी : मगर इस फर्म के इतने रुपयों का नुकसान। यह भी तो बहुत से लोगों को खाना खिलायेगा।

सजय : आप लोग बड़े भोले है। चौधुरी महोदय, आप चिंता न करें। इन अस्सी हजार रुपयों के नुकसान के बावजूद, आप लोगों का वह मैनेजर पानी नहीं पीयेगा, शराब ही पीयेगा। मगर इनके विनिमय में एक असमर्थ आदमी अपनी बेटी को मंडप तले शंख-उरुली की ध्वनियों के बीच किसी को

प्रदान कर सकेगा। एक नौजवान अपनी मां को रखने के लिए दो कट्ठा जमीन छुड़ा सकेगा। गुप्त रूप से एक प्रेमी को वचन दे चुकने वाली युवती अपनी मनचाही दुनिया बसा सकेगी। संध्या देवी, क्या सोच रही हैं आप?

संध्या : आपको मैं दिल खोलकर आशीर्वाद दे रही हूं। जिंदगी भर आपके सम्मुख आभारी बनी रहना चाहती हूं, मगर यह रुपया मैं खर्च नहीं कर पाऊंगी। मेरी वह योग्यता नहीं है, योग्यता नहीं ही है।

संजय : (नाराजगी से) फिर योग्यता की बात कर रही हैं। संध्या देवी, योग्यता समय के साथ-साथ बढ़ा करती है। आपको अपना पे-स्केल याद है न? वह तो शायद ऐसा होगा : अस्सी रुपये-वृद्धि पांच रुपये- एक सौ दस-दक्षता अवरोध साढ़े सात रुपये-एक सौ पच्चीस रुपये। बस खत्म। मगर जिंदगी में अचानक कुछ ऐसी योग्यताएं आ जाती हैं, जिनके साथ कदम मिलाकर चलना सीखना चाहिए। मान लें कि किसी से प्रेम करने की योग्यता आपकी है। मगर क्या वह आपके पे-स्केल से मिलता जुलता है?

संध्या : नहीं-नहीं, मुझसे नहीं होगा... मैं। मर जाऊंगी।

संजय : मर जायेंगी। आई. ए. पास मास्टर के पचानवे रुपये के साथ अपने एक सौ दस रुपये मिलाकर दो आदमियों की एक दुनिया बसाने की शुरुआत करेंगी। उसके बाद एक-एक नया चेहरा दुनिया में आने के साथ-साथ एक-एक बदकिस्मती आप दोनों को घेर लेगी। आपके पे-स्केल के आखिरी अंक से उलटकर पढ़ने में जैसा होगा, उससे कहीं ज्यादा तेजी से आप लोगों की जिंदगी में हाहाकार उतर आयेगा। (मुड़ कर) एक बात मैं कहे देता हूं, चौधुरी जी! मुझे रुपया नहीं चाहिए। अगर रुपये की जरूरत होती तो मैं यहां नौकरी करने नहीं आता। आप लोग हंसमुख रहकर नौकरी करते रहें, मेरी यही कामना है।

चौधुरी : मैं समझता हूं राय चौधुरी! मैं सब कुछ समझता हूं। लेकिन मुझे अभी से अपने घर के सामने पुलिस के कदमों की आवाज सुनायी देने लगी है।

संजय : आप आज जेल जाने से डर रहे हैं। लेकिन आपके बेटे को कभी जेल जाना पड़ जाय, इस बारे में आप कुछ भी नहीं सोचते। और अगर उसका इंतजाम आप जेल गये बगैर कर सकें तो उसमें आपत्ति क्या है? बताइये संध्या देवी! बताइये मजुमदार!

मजुमदार : मैं तो कुछ भी सोच ही नहीं पा रहा हूं राय चौधुरी।

संजय : आपको कुछ भी सोचना नहीं है। कहिये, ठीक है न? (मजुमदार मौन)

ठीक है न संध्या देवी? (संध्या मौन) ठीक है न चौधुरी महाशय? (चौधुरी असहाय-सा दिखता है) ठीक है। (संजय फोन उठा लेता है) हेल्लो-एक्सचेंज। प्लीज पुट मी टु सिक्स फोर सिक्स (रुककर। कौन? ओ, दैट इज फाइन : आवर टु पीलोट टू टु पीलोट टू? संजय हियर, स्पीकर, कैरेवान। यस-यस-यस-यस टू टु थ्री। आलराइट, फाइन। (फोन रख देता है।) एक रैक की फाइलों में से एक चमड़े का बैग निकाल लाता है।) मजुमदार आप नोटों के बंडलों को इस बैग में भरते जाइये। यों देख क्या रहे हैं? हमारे पास समय नहीं है– जल्दी कीजिये। (संजय बैग मे नोटो के बंडल भरता है। मजुमदार डरते-डरते मदद करता है।)

मजुमदार : यह बड़ी खतरनाक बात हो रही है, राय चौधुरी जी।

संजय : गिरवी रखी जमीन-जायदाद के घर में रहने की अपेक्षा इसका खतरा कम ही है मजुमदार।
(दोनों रुपये भरते हैं। तभी संध्या चीख पड़ती है।)

संध्या : नहीं-नही, ऐसा न कीजिये। मैं तो यों ही मर जाऊंगी। जैसा है, अच्छा है। मुझे यह रुपया नहीं चाहिए। राय चौधुरीजी, मैं आपके पैर पकड़ती हूं। मुझे माफ कर दें, मुझे छुटकाग दे दें। मुझसे यह न हो सकेगा। (सजय नाराजगी और विरक्ति से कुछ क्षण संध्या की ओर देखता रहता है, फिर तेजी से चौधुरी के पास आ जाता है।)

सजय : चौधुरी जी, एक बात याद रखें। आपकी लड़की निर्माली की जिंदगी भले ही बरबाद हो जाय, संध्या देवी का कोई नुकसान नहीं है। इस एक ही कमरे में जिंदगी भर नौकरी करने पर भी आप यह न सोचें कि संकट के समय आपको उबारने वाला कोई इन लोगों के बीच निकलेगा। लेकिन आपकी जिदंगी के एक शुभ क्षण को बरबाद कर देने वाले लोगों की कोई कमी कभी नहीं होगी।

संध्या : नहीं-नहीं नहीं। मैं वह करना नहीं चाहती। मैं कभी वैसा नही करूंगी। मैं तो सिर्फ अपना छुटकारा चाहती हूं।

संजय : चार लोगों में से एक को छुटकारा देकर ऐसा काम नहीं किया जा सकता, आपको पता है? सोच लीजिए! हमारे पास सिर्फ कुछ मिनट भर का समय है।

संध्या : (चेहरा पोंछ कर) ठीक है, तब! मेरे कारण किसी का शुभ क्षण बरबाद नहीं होना चाहिए। (फिर टाइप राइटर के ऊपर सिर टिका देती है)

संजय : (संजय देखकर फिर काम शुरू कर देता है।) कोई सबल भले ही न रहे,

कम से कम कुछ हिम्मत तो होनी ही चाहिए, संध्या देवी! मजुमदार, कुड यू प्लीज गिव मी ए हैंड?

(मजुमदार मंत्र-मुग्ध सा मदद करता है।समय बीतता है।अचानक चौधुरी कह उठता है)–

चौधुरी : राय चौधुरी, मुझसे अब रहा नहीं जाता। अपनी लड़की के हाथों में मंगलसूत्र पहनाने के पहले हथकड़ी नहीं पहन सकता। मेरे इस बुढ़ापे के शरीर को यह सब बिल्कुल सहन नहीं होगा। बंद कीजिए, राय चौधुरी, यह सब बंद कीजिए।

(संजय रुपया बंद करता है। गुस्सा आना है। कुछ देर देखते रहकर नोटों के बंडल बैग से निकाल डालता है।)

संजय : तब ठीक है। (नोटो पर हाथ रखकर) इस दुनिया में ऐसे लोग भरे हुए हैं, जिनके हाथ अगर सोने का टुकड़ा भी थमा दिया जाय तो उसे फेंक देते हैं। इसी कारण तो यह दुनिया हा-हा-कार करके दुख से परेशान हो रही है। (संजय एक-एक बार में बीस-बीस बंडल नोट अलमारी में भर देता है। तीन बार में ही वह मेज पर रखी सारी रकम अलमारी में भरने का काम पूरा करता है। हर बार अलमारी के पास से मेज पर पड़े रुपये लेने के लिए लौटते समय एक-एक वाक्य कहता है।) एक सौ पचासी रुपये में अगर किसी के विवाह मंडप में (चौधरी की ओर देखकर) शंख-उरुली की ध्वनि गूंजती है, तब तो अच्छी बात है। एक सौ दस रुपये से अगर (सध्या से) किसी के गुप्त प्रेम में सपनों की रंगीनी आती है, तो अच्छी बात है। गिरवी रखी जमीन नीलाम हो जाने के पहले अगर कोई (मजुमदार की ओर देखकर) एक सौ बीस रुपये में खा-पीकर पांच हजार रुपये जमा कर सकता है, तो ठीक है, अच्छी बात है।

(जैसे ही संजय अलमारी का ताला बंद करता है; दरवाजे पर दस्तक होती है। सभी लोग उत्तेजित हो उठते है। संजय दरवाजा खोल देता है। मैनेजर आता है।)

मैनेजर : आप लोगों का हो गया या नहीं। चार तो बज ही गया। (संजय आगे बढ़कर आलमारी की चाभी मैनेजर को थमा देता है।) हां, तो उसके बाद? राय चौधुरी, आपको कैसा लगा?

संजय : (बिल्कुल नये आदमी के लहजे से) सर, अच्छा ही लगा। चौधुरी और संध्या देवी के बारे में तो मुझे कुछ कहना नहीं है। आपने जो बातें सुनी हैं, वे बिल्कुल सही नहीं है। ये लोग भले आदमी हैं। इन्हें यहीं रहने दें।

सिर्फ ये (मजुमदार की ओर उंगली से दिखाता है। कार्यालय के सब लोग विस्मित होते हैं।), मेरे विचार से इन मजुमदार को यहां नहीं रहना चाहिए। हालांकि वे भी ठीक ही हैं, कोई खास सोचने की बात नहीं है। फिर भी कुछ दिन के लिए इन्हें दूर ब्राच में ट्रांसफर करना ही अच्छा होगा। जरूरत होगी तो इन्हें फिर यहां ला सकेंगे।

मैनेजर : ठीक है, ऐसा ही किया जायेगा। बहुत-बहुत धन्यवाद राय चौधुरी। आप आइये।

(दोनों निकल जाते हैं। दूसरे सभी लोग विस्मित होकर खड़े रह जाते हैं।)

(पटाक्षेप)

भास्वती

सत्य प्रसाद बरुआ

पात्र

लेखक

भास्वती

मां

पिता

विमल

हिमांशु

(इस नाटक में सिर्फ 'लेखक' पात्र के सिवा अन्य पात्रों का सृजन पारंपरिक रूप से नहीं किया गया है। वे दूसरे नाटकों के पात्रों की भांति प्रवेश-प्रस्थान नहीं करते। लेखक के मन में जब कभी जिस पात्र की याद आती है, वह तभी लेखक के सामने आ जाता है। इस नाटक का वास्तविक रंगमंच है, लेखक का मन। लेखक के मन की बातों को, भावनाओं को दृश्यात्मक बनाने के प्रयास से ही इस नाटक का सृजन हुआ है।

मंच पर विशेष साज-सामान की जरूरत नहीं। काला "साइक्लोरेमा" या एक काला परदा पीछे की ओर लगाने से ही काम चल जायेगा। मंच के एक सिरे पर एक प्लेटफार्म पर एक छोटी-सी मेज है, जिस पर दो-तीन किताबें और एक टेबल-लैंप है। मेज के अनुपात से बैठने की एक कुर्सी है। परदा उठने पर दिखाई पड़ता है कि प्लेटफार्म की कुर्सी पर बैठा 'लेखक' कुछ लिख रहा है। टेबुल-लैंप के उजाले से लेखक का चेहरा, लिखने की बही और दूसरी चीजें साफ-साफ दिखायी पड़ रही है। लेकिन मंच के दूसरे हिस्से पर अंधेरा है।

मंच पर न कोई पात्र हिलता-डुलता है और न जगह बदलकर बातचीत ही करता है। शुरू से आखिर तक लेखक अपनी जगह पर बैठा ही रहेगा। दूसरे पात्र भी शुरू में जहां रहेंगे, वहीं से बिना हिले-डुले बातें करते रहेंगे। मानो तस्वीरें ही बात कर रही हों।

एक बड़ी-सी बही पर लेखक ने लिखना शुरू किया है, मगर उसका लेखन आगे नहीं बढ़ रहा है। कोई शब्द लिखता है—फिर काट डालता है। कुछ देर सोचकर फिर लिखता है। दो-तीन बार ऐसा करने के बाद दर्शकों को लेखक की जबान से निकली आवाज 'भास्वती' सुनायी पड़ती है। तीसरी बार 'भास्वती' कहते ही मानो दर्शकों के कानों में झीना-सा कंपन जग उठता है। दर्शकों को मानो 'भास्वती' शब्द की प्रतिध्वनियां ही सुनायी पडती हैं। 'भास्वती! भास्वती! भास्वती!' इसके साथ ही लेखक के सामने भास्वती आ जाती है।)

भास्वती : क्या कहा? भास्वती!

लेखक : हां, भास्वती! क्यों, क्या तुम्हें इसमें कोई एतराज है?

भास्वती : इतराज नहीं है, बात तो ऐसी है नहीं। आप नाटक की लिख रहे हैं न। ठीक है, लिखिये! लेकिन इस नाटक का नामकरण मेरे नाम से न करते, तो क्या काम नही चल सकता था आपका?

लेखक : मुझे मालूम है कि एतराज करने का तुम्हारा अधिकार हो सकता है। पर मैं तो लाचार हूं।

भास्वती : मगर क्यों?

लेखक : नाटक जब तुम्हारे ही बारे मे लिख रहा हू तो फिर तुम्हारा नाम उधार लिये बगैर कैसे चल सकता है? तुम्हीं बताओ!

भास्वती : मेरे बारे में नाटक लिख रहे हैं?

लेखक : हां।

भास्वती : मुझे ही लेकर लोग ऐसी खींचातानी क्यों करते रहते हैं, मेरी समझ में नहीं आता।

लेखक : इसीलिए खींचतानी करते हैं, कि तुम सामान्य नियम का अपवाद हो, तुम असामान्य हो।

भास्वती : धन्यवाद! आपकी जबान से अपनी प्रशंसा सुनकर मुझे बड़ा अच्छा लग रहा है। मगर यह तो बताइये कि आपने मुझे असामान्य क्यों कहा? मैं सामान्य नियम का अपवाद कैसे हूं?

लेखक : तुम्हारी जैसी पढ़ी-लिखी होशियार लड़की हमारे समाज में मिलनी मुश्किल है।

भास्वती : जिस पर मैं गाना गाती हूं, नाचती हूं, घोड़े पर सवारी करती हूं, साइकिल, मोटर यहां तक कि हवाई जहाज भी चलाती हूं। मगर सिर्फ इन्हीं कारणों से तो आप मुझे सामान्य नियमों का अपवाद नहीं मान रहे हैं न!

लेखक : और अपवाद मानना भी क्या गलत है?

भास्वती : पति के जीवित रहते ही मैं दूसरी बार विवाह करने चली हूं। मुझ पर इसी कारण आप लोगों की आंखें लगी हैं, यह बात मुझे मालूम है। आप इसी कारण मुझे अपवाद बता रहे हैं। और इसी कारण मुझे परेशान करने का यह सबसे बड़ा तरीका आपने अपना लिया है।

लेखक : तुम्हें परेशान करने को?

भास्वती : जरूर।

लेखक : मगर कैसे?

भास्वती : आप जब मेरी बातें सोचते रहेंगे, उसके कारण आपके चिंतन की लहरे आकर मेरे मन पर चोट कर मुझे बेचैन बनाये रखेंगी।

लेखक : तब तो मैं शुरू में ही आपसे माफी मांग लेता हूं, अभी-अभी...

भास्वती : आप मेरे बारे में लिखने चले हैं। पर मुझे कितना जानते हैं आप? मेरा बाहरी रूप ही तो आपने देखा है, मेरा बाहरी आचरण आप लोगों की नजरों में आया है, पर मेरे मन की बातों का कोई पता है आपको?

लेखक : पता है या नही, बता नहीं सकता। मगर मैंने उसका पता लगाने का भी कोई कम प्रयास नही किया है।

भास्वती : लगता है अपने इस नाटक के आखिरी हिस्से में अत तक सारे दोषों की भागीदार आप मुझे ही बनायेंगे।

लेखक : तुम्हारे ऐसे सोचने का क्या कोई युक्तिसंगत आधार भी है?

भास्वती : मैं यह बात अच्छी तरह जानती हू कि मुझसे किसी की कोई सहानुभूति नहीं है।

लेखक : मुझे भी सहानुभूतिहीन समझ लेना शायद तुम्हारे लिए उचित नहीं है।

भास्वती : आप लेखक हैं, नाटककार हैं, आप लोग ज्यादातर बाहरी बातों को ही कुरेद कर देखा करते हैं। मन की बातें समझने का प्रयास नहीं करते। इसी कारण कहती हूं, आप लोग, यानी आप भी सहानुभूतिहीन हैं।

लेखक : तुम्हारी धारणा सही नहीं है। मैं तो ठहरा एक सामान्य-सा दरिद्र लेखक! अपनी किताब की नायक-नायिका के प्रति जान-बूझकर अन्याय करूं, ऐसा दुस्साहस मेरा है नहीं। जो लोग जाने-माने लेखक हैं, जो लोग कलम की एक ही लकीर से पात्रों का रूप : बदल सकते हैं, वे लोग भी तो सहानुभूतिहीन नहीं हैं। अच्छा, मैं एक बात कहता हूं, क्या तुम उस पर विश्वास करोगी?

भास्वती : कहिये, क्या है वह बात?

लेखक : चूंकि तुमसे मेरी अपार सहानुभूति रही है, इसी कारण तुम्हें मैंने अपने नाटक की नायिका बनाया है। मैं तुम्हें जानना चाहता हूं। समझना चाहता हूं, साथ ही यह भी चाहता हूं कि दर्शक-पाठक भी तुम्हें जानें, समझे।

भास्वती : मगर यह कौतूहल क्या अस्वाभाविक नहीं है?

लेखक : बचपन में ही तुम्हारा विवाह हो गया था। विवाह के बाद तुम अपने पति के यहां नहीं गयीं। पिता के यहा रहकर तुमने पढ़ाई-लिखाई की। अब तो तुम्हें विश्वविद्यालय से डाक्टरेट मिल चुका है। हम सब यही आशा लगाये हुए थे कि तुम अब संसार के जंजालों में न फसकर अपने को देश-सेवा के कामों में उत्सर्गित कर दोगी। पर तुम अब फिर विवाह करने चली हो, यह जानकर क्या हमारे मन मे कौतूहल जाग उठना स्वाभाविक नही है?

भास्वती : और उसी कारण आपने मुझे अपने नाटक की नायिका बनाया है जिससे दर्शकों-पाठकों के मन में भी उसी तरह का कौतूहल जगाकर इस नाटक को एक सार्थक कृति बनाया जा सके। है न?

लेखक : तुमने सिर्फ मेरी ही नहीं, सभी लेखकों की कमजोरी पर उंगली रख दी है।

भास्वती : आप कहते हैं कि मेरा विवाह बचपन में ही हो गया था, पर उसके लिए उत्तरदायी मैं हूं, ऐसा आप नहीं कह सकते। अगर बचपन में ही मेरा विवाह न हो गया होता तो मैं निश्चित रूप से कह सकती हूं कि आज मेरी ऐसी हालत नहीं होती।

लेखक : समाज के प्रचलित नियमानुसार आज से अठारह साल पहले तुम्हारा विवाह हुआ था।

भास्वती : और उस समय मेरी उम्र थी ग्यारह साल!

लेखक : उस विवाह के लिए आज तुम भी और किसी को उत्तरदायी नहीं बना सकतीं।

भास्वती : मगर मैंने तो सुना है कि मेरा विवाह करवाकर घर से निकाल देने के लिए मेरी मां ही ज्यादा बेचैन हो उठी थी।

लेखक : और इसी कारण शायद तुम्हारे पिता ने तुम्हारा विवाह भी बड़ी जल्दबाजी में कर दिया था, जिससे कि समाज का नियम भी न टूटे और तुम्हारा भी कल्याण हो।

भास्वती : लेकिन मां अगर इतनी बेचैन न होती हो...

(भास्वती को अंधेरा घेर लेता है। मां दिखायी पड़ती है।)

मां : लड़की सयानी हो जाये तो उसका विवाह करवाकर विदा कर देना मां-बाप का कर्त्तव्य होता है। हमारे परिवार में लडकियों का विवाह उसी उम्र में होता आया है। मुझे भी मेरे मां-बाप ने ग्यारह साल की उम्र में ही ब्याह कर विदा कर दिया था। भातुमणि (भास्वती) के विवाह के बारे में बेचैन तो मैं उसके पिता के लापरवाह स्वभाव के कारण हो उठी थी।

(मां के रहते ही पिता दिखायी पड़ता है। जैसा कि मां के चेहरे पर पड़ा है, उसी तरह पिता के चेहरे पर भी नीले या बैंगनी रग का प्रकाश पड़ता है)

पिता : सच कहता हूं, छोटी उम्र में ही भातुमणि को ब्याह कर विदा कर देने के पक्ष में मैं नहीं था। मैंने ऐसा सोचा भी न था। इसी कारण, हो सकता है कि मेरी बात तुम्हें बुरी लगे, मुझे कहना पड रहा है कि तुम्हारे ही कारण भातुमणि का विवाह उतनी जल्द करने को मुझे विवश होना पड़ा था।

मां : अब सारा दोष मेरे मत्थे मढ़ देने से ही क्या होगा? मैंने भातुमणि का विवाह करने के लिए जरूर कहा था, मगर यह तो नहीं कहा था कि उस लड़के को अपना घर-जमाई बना लीजिये।

पिता : हां, तुमने ऐसा नहीं कहा था।

मां : और उसी लड़के से उसका विवाह हो, ऐसा भी तो नहीं कहा था। बल्कि मैं तो बार-बार यही कह रही थी कि शहर में पली-बढ़ी मेरी बिटिया, गांव में रह नहीं सकेगी।

पिता : उन दिनों मेरी कैसी हालत हुई थी, जरा यह तो सोचो। उधर पिताजी डट गये थे कि गांव के लड़के बिमल से ही भातुमणि का विवाह करवा देना है। अब पिताजी के खिलाफ मैं क्या कर सकता था, बताओ।

मां : और आप इतने बड़े पितृभक्त बन गये कि खुद आप उस लड़के को देखने तक नहीं गये।

पिता : वह जमाई तुम्हें पसंद नहीं है, ऐसा समझकर ही तो बिमल की पढ़ाई का

मौका देख मैंने सोचा कि भातुमणि की पढ़ाई भी जारी रखी जाय। और उस स्थिति में पिताजी भी इतराज न कर पाते। और करते भी कैसे? विमल पढ़ाई में लगा था, अपनी कमाई न थी, घर बसाने की बात उसने भी तो नहीं चलायी थी।

मां : और पिता साल भर में ही स्वर्गवासी हो गये।

पिता : बता नहीं सकता। आपकी तरह तो मैंने इन बातों पर गहराई से गौर नहीं किया है।

लेखक : और आपके इस प्रयास में बेटी के प्रति आपको स्नेह या मोह ने ही प्रेरणा दी थी। इसीलिए मैं सोचता हूं वर्तमान स्थिति के लिए आप भी आशिक रूप से उत्तरदायी हैं।

पिता : आंशिक रूप से कहने की अपेक्षा अगर संपूर्ण रूप से भी कहा जाय, तो मैं बुरा नहीं मानता।

लेखक : आपकी स्वीकारोक्ति आपके महत्व को ही प्रकट करती है।

पिता : मै आज इसलिए द्वविधा में पड़ा हुआ हूं कि मैं अपनी ही लगायी हुई गाठ अब खोलने में असमर्थ-सा हूं। बेटी को विवाह के बाद अपने यहां रखकर, पति के यहां जाने न देकर पढ़ाता रहा। उसे एम.ए. पास करवा कर डाक्टरेट पाने की जो सुविधा मैंने कर दी थी, उसका नतीजा आज अच्छी तरह से भुगत रहा हूं। भातुमणि अब प्रोफेसर हिमांशु शइकिया से विवाह करना चाहती है।

लेखक : (धीमे स्वर से) ऐसी बात है? देख रहा हूं कि बातें बड़ी रोमांटिक होती जा रही हैं।

पिता : आप तो बातों को बड़े हल्के ढंग से ले रहे हैं। मेरी समस्या पर जरा सहानुभूति से विचार कीजिये न!

लेखक : बरुआ जी, समझते हैं, समस्या चाहे कितनी ही गंभीर क्यों न हो, उसे हल्के ढंग से लेने पर ही उसका हल निकालना आसान हो जाता है। नहीं तो गंभीर समस्या के साथ यदि अपने मन को भी गंभीर कर लिया जाय, तो उन दोनों के दबाव में सांस तक लेना कठिन हो जाता है।

पिता : अगर भातुमणि ही मेरी इकलौती बेटी होती, तो शायद चिंता का कोई कारण ही नहीं होता, पर अपनी और दो बेटियों के बारे में भी मुझे सोचना पड़ रहा है। इसकी किस्मत में तो जो होना था, हुआ। इसी के साथ अपनी उन दो बेटियों का भविष्य भी मैं अंधकारमय नहीं करना चाहता।

लेखक : पढ़-लिखकर भास्वती के ज्ञान की सीमाएं व्यापक हो गयी हैं। वह खुद सोच-विचार करने लायक हो गयी है। उसका मन भी एक निश्चित रूप

ले चुका है। इसी कारण समस्या की जटिलता बढ़ गयी है।
(मां दिखायी पड़ती है)

मां : पहले तो सास-ससुर के सामने मुंह खोलने तक का अधिकार मुझे न था। मुझे जो भी कहना होता 'उन' (पति) से ही कहती! मगर मेरी बात सुनकर भी वे अनसुने-से बने रहे। सास-ससुर के रहने तक खुलकर अपना विचार मैं प्रकट नहीं कर पाती थी। मगर आज हालत बदल चुकी है। आज अब मेरी बात की वे उपेक्षा नहीं कर सकते।

पिता : तुम्हारी या तुम्हारे विचार की उपेक्षा मैं कभी नहीं करना चाहता। क्या करना चाहिए, यह बात तो अब भी तुमसे पूछ ही रहा हूं। बताओ, क्या करना चाहिए?

मां : भातुमणि को बिमल के यहां भेज दो।

पिता : सौतन की सेवा करने के लिए?

मां : अगर मेरी बेटी की किस्मत में यही लिखा है, तो भला उसे कैसे बदला जा सकता है?

पिता : पर अब तो भातुमणि अठारह साल की नन्हीं लड़की नहीं रही है न! वह डाक्टरेट प्राप्त कालेज की प्रोफेसर है। उसे भला तुम जबरन बिमल के यहां कैसे भेज सकते हो? अगर बिमल ने फिर विवाह नहीं किया होता, तब भी कोई बात थी। अगर अब वह कहती है कि 'नहीं जाऊंगी' तो मैं क्या उसे जबरन भेज सकता हूं?

मां : आपने तो इसी तरह से बेटी को सिर पर चढ़ा लिया है। उसके साथी लड़के घर आते हैं तो मैं मना कर देना चाहती हूं। आप कहते हैं, जाने दो, कुछ कहने की जरूरत नहीं, बिटिया बुरा मानेगी। नौजवान प्रोफेसर उसे पढ़ाने आता है। मैं मना करना चाहती हूं तो आप कहते हैं, कालेज की पढ़ाई कठिन होती है। अगर कुछ बता समझा रहा है तो समझाने दो। उसके पढ़ने-पढ़ाने में मुझे कोई एतराज नहीं था, मगर पढ़ाने के बहाने इतनी घनिष्ठता क्यों? मैं शुरू से ही इन बातों को पसंद नहीं करती थी। भले ही पढ़े-लिखे, उससे क्या होता है? वह जो लड़की है; लड़की ही तो रहेगी। मां-बाप की अपेक्षा वह कभी ज्यादा समझदार नहीं हो सकती। किस बात से उसका भला होगा, किस बात से बुरा होगा, उसकी अपेक्षा हम कहीं ज्यादा अच्छी तरह समझते हैं।

लेखक : तो आप उसे समझाती क्यों नहीं?

पिता : हां-हां, तुम्हीं उसे समझाओ न!

मां : शह दे देकर आपने ही उसे सिर पर चढ़ा लिया है। अब उसके सुधार की व्यवस्था भी आप ही को करनी होगी।
(मां ओझल हो जाती है)

पिता : इसीलिए तो मैं कहता था कि बिमल को फिर से विवाह नहीं करने देना चाहिए था। उसे रोकना चाहिए था, पर जबकि रोकने नहीं दिया गया तब...
(दर्शकों को विमल दिखायी देता है)

बिमल : शायद आपने रोकने का अधिकार भी खो दिया था।

लेखक : तुम यों किस लिए कह रहे हो बिमल?

बिमल : इसीलिए कह रहा हूं कि मेरी बीमारी अच्छी हो जाने के बाद भास्वती को ले जाने के लिए पिताजी ने कई बार कहला भेजा था। परंतु इन लोगों ने हमारा प्रस्ताव हर बार किसी न किसी बहाने ठुकरा दिया।

पिता : बिमल, बीमारी की बात भले ही छोड़ दें, पर तब तक तुम्हारी कमाई का कोई जरिया नहीं था।

बिमल : मुझ पर आप लोगों का विश्वास रहना चाहिए था। उन दिनों भले ही कमाई का कोई जरिया न रहा हो, पर आज तो मैं कुछ न कुछ काम धाम कर परिवार चता ही रहा हूं।

लेखक : कुछ-न-कुछ कर नहीं, तुम आजकल अच्छे ढंग से ही परिवार चला रहे हो।

बिमल : शहरी लड़का न होने पर भी मैं भास्वती के लिए अयोग्य पति नहीं था। मेरा कुल-वंश, चाल-चलन, स्वभाव-चरित्र आदि देख-सुनकर ही तो आप लोगों ने कन्यादान किया था।

पिता : हां, इन बातों से इनकार नहीं किया जा सकता।

बिमल : आप लोगों ने विवाह तो करवा दिया, मगर विवाह के बाद हमारे मन का मिलन हो, हम एक-दूसरे को भली-भांति जान-पहचान सकें, उसकी कोई सुविधा आप लोगों ने नहीं दी।

पिता : उन दिनों भातुमणि बिल्कुल नन्हीं लड़की थी, सुविधा देने पर भी वह...

बिमल : भास्वती की उम्र बढ़ने के बावजूद आप लोगों के बर्ताव में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ। आप लोगों ने कभी उसे मेरे समीप आने नहीं दिया; हमेशा उसे दूर ही दूर रखने का ही प्रयास करते आये। और उसका नतीजा यह हुआ कि हम दोनों के बीच खाई इतनी बढ़ गयी कि हम धीरे-धीरे अनजान जैसे हो गये। इसके अलावा उसे पढ़ने की और तरह-तरह के लोगों से मिलने-जुलने

की छूट देकर भास्वती के मन को मुझसे दूर हटा लेने के लिए भी आप लोगों ने मन ही मन प्रयास किया था।

पिता : तुम्हारा यह निर्मूल संदेह है। खैर, वह सब जो कुछ हुआ, आज उन बातों की चर्चा करने से फायदा क्या है? अगर तुम अपने को प्रतिष्ठित कर सकते तो हम चाहे जो कुछ भी क्यों न करते, हो सकता है कि भास्वती का अंतर जीत लेना तुम्हारे लिए असंभव न होता, और हम पर भी बेकार दोष मढ़ने की जरूरत नहीं होती।

(पिता ओझल होता है। भास्वती के चेहरे पर प्रकाश पड़ता है।)

भास्वती : इसी तरह के संदेह ने ही तो उनके विरुद्ध मेरे मन को मोड़ देने में सबसे ज्यादा सहायता की थी। उनसे बहुत ज्यादा बातचीत करने का मौका भले ही पिताजी आदि ने नहीं दिया था, फिर भी उन पर मेरी बड़ी श्रद्धा थी। अगर उनका बर्ताव आशानुरूप होता तो वही श्रद्धा आगे चलकर हमारे संपर्क को और ज्यादा गहरा बना देती।

लेखक : मैं तुम्हारी बात अच्छी तरह से समझ नहीं पा रहा हूं।

भास्वती : स्कूल की पढ़ाई खत्म करने के बाद कालेज में प्रवेश लेकर मैं लड़कों के साथ पढ़ने लगी। उन दिनों मेरी क्लास के विद्यार्थी प्रायः मुझसे मिलने के लिए हमारे यहां आया करते थे। वे मेरे साथ पढ़ाई-लिखाई की चर्चा किया करते, बातें करते, गप्प करते थे। वे शायद इन्हें मन ही मन नापसंद करते थे। मौका पाते ही इन बातों का जिक्र करते हुए मेरी हंसी उड़ाते थे, बातें सुनाते थे, इसी कारण मैं ऐसा समझने के लिए विवश हो गयी थी कि उनका मन आम लोगों की अपेक्षा संकीर्ण है।

लेखक : परंतु बिमल का यह संदेह या अंग्रेजी में जिसे "जेलसी" कहते हैं; वह तो एक तरह से प्रेम की ही अभिव्यक्ति है। यह बात एक लिखी-पढ़ी लड़की होने के नाते तुम्हें समझनी चाहिए थी।

भास्वती : मैं जानती हूं कि मुझे समझना चाहिए था, मगर उनमें भी ऐसी शक्ति होनी चाहिए थी जिससे वे मेरे मन को आकर्षित कर लें। मां और पिताजी मुझे कुछ ज्यादा ही प्यार करते थे - हमेशा मुझे अपने साथ ही रखना चाहते थे। इस बात का अनुभव हालांकि मैं आहिस्ते-आहिस्ते करने लगी थी। फिर भी अपने पति के प्रति मेरी भावना में कोई परिवर्तन नहीं आया था। मुझे ले जाने के लिए उन्होंने पिताजी आदि से कहा था। पिताजी ने मुझे नहीं भेजा, इस बात को मैं बिल्कुल निराधार नहीं मान पायी थी।

दिमल : और न जा पाने का मुख्य कारण ही है अनुप चलिहा।

लेखक : अनुप चलिहा?

बिमल : हां, अनुप चलिहा! जिसके साथ यह हमेशा नदी किनारे घूमा करती थी, रेस्तरां में चाय पीती थी, सिनेमा देखा करती थी।

भास्वती : मानव के सहज संबंध को भी आप जैसे संकीर्ण मानस के लोग कलंकमय बना डालते हैं।

बिमल : तुम लोगों के इस सहज संबंध की बातें कालेज में सब की जबान पर थीं, पर मैंने तुम्हें कभी नहीं बताया था। इसी कारण भले ही तुम मुझे संकीर्ण मनवाला कहो, पर मैं इसे कदापि स्वीकार करने को तैयार नहीं।

लेखक : अनुप चलिहा के साथ तुम्हारा जो संबध बन गया था, भले ही उसे तुम दोषपूर्ण न मानो, पर उसे अपने इतने नजदीक आने देना शायद तुम्हारे लिए उचित न था। हालांकि इसके लिए मैं तुम्हें उत्तरदायी नहीं मानता। अगर किसी को उत्तरदायी माना जाय तो वे हैं तुम्हारे मां-बाप। अभिभावक के रूप में तुम पर जैसा अनुशासन रखना चाहिए था, उन लोगों ने वैसा नहीं किया।

भास्वती : अनुप चलिहा के साथ घूमना-फिरना समाज के कुछ सकीर्ण मनवाले लोग भले ही बुरा समझें पर मैंने ऐसा कुछ भी नहीं किया जिससे मेरे मां-बाप या परिवार के सम्मान पर धब्बा लगे।

लेखक : तुम्हारा बड़े से बड़ा दुश्मन भी यह बात भले ही अपनी जबान खोलकर न कहे, पर मन से स्वीकार करने को विवश है।

बिमल : ऐसी बातें फैलने के बावजूद मैं एक बार भास्वती के ले जाने के लिए आया था। मगर उस बार भी मुझे लौटा दिया गया।

लेखक . और इसी कारण शायद तुमने ऐसा सोच लिया कि अब भास्वती की आशा छोड़कर फिर से विवाह कर लेना ही उचित है?

बिमल : मैंने भले ही खुद फिर से विवाह करने की बात ज्यादा नहीं सोची थी, मगर मा ने नहीं माना। विधवा मां की बड़ी इच्छा थी नाती-नातिन का चेहरा देख पाने की।

भास्वती : अपनी एक अलग दुनिया बसा लेने का एक आसान तरीका तो उन्होंने ढूंढ लिया और उनकी जिदंगी से मुझे परे कर दिया गया।

लेखक : ऐसा करने के कारण क्या तुम्हें बुरा लगा था?

भास्वती : मन में चोट तो पहुंची थी, आज इस बात को मैं नकारती नहीं।

लेखक : क्यों?

भास्वती : मैं पढ़-लिख रही थी, ससुराल न जाकर नैहर में रह रही थी, मगर ऐसी कल्पना मैंने कभी नहीं की थी कि हम दोनों के बीच होमाग्नि को साक्षी रखकर किसी दूसरे का आविर्भाव होगा। वे इस तरह से अचानक विवाह

कर डालेंगे। यह सच है कि हम दोनों को एक-दूसरे से परिचित होने का मौका नहीं मिला था, पर परिचित होने की संभावना का मार्ग इस तरह से कट जायेगा ऐसा तो मैंने कभी सोचा ही न था। पहली बार की मानसिक चोट सह लेने के बाद मुझे ऐसा लगा था कि उन्होंने मुझसे बदला लेने के इरादे से ही ऐसा मार्ग चुना है। मेरे मन में जब ऐसी भावना जाग उठी तो मैंने संकल्प दृढ़ कर लिया कि अपने मन से उनकी सारी स्मृतियां बिल्कुल पोंछ डालूं।

लेखक : भले ही बिमल ने विवाह कर लिया, पर उसके घर के दरवाजे तो तुम्हारे लिए कभी बंद नहीं हुए थे।

बिमल : मेरे परिवार के सब लोग भास्वती का स्वागत करने को पूरी तरह तैयार हैं। अगर यह आना चाहे तो...

भास्वती : यह झूठ है। अब आपके उस संसार में मेरा जाकर घुसना कभी संभव नहीं है। आपके बर्ताव ने मुझे नये रूप से अपने को तैयार करने पर विवश किया है। मेरे सामने आज जो संसार खुल गया है, उसे अतीत की स्मृतियां कभी मटमैला नहीं कर सकतीं।

बिमल : ठीक है, तुम अपने नये जीवन को अपना लो। मेरी शुभकामना रही। (बिमल ओझल होता है।)

लेखक : फिर से विवाह करने के उपरांत तुम्हें ले जाने की इच्छा प्रकट करना, बिमल के लिए शोभनीय नहीं है। ऐसा कहना कोई ज्यादती नहीं है।

भास्वती : यह केवल अशोभनीय ही हो ऐसी बात नहीं, बल्कि यह आदिम मनोवृत्ति का परिचायक भी है।

लेखक : आदिम मनोवृत्ति का उद्‌गम अगर अंतर के अंतःस्थली में हो, उसका संचालन गहरी अनुभूति द्वारा होता हो, तो आदिम मनोवृत्ति का समर्थन भी बहुधा किया जा सकता है। मगर तुमसे बिमल की वैसी किसी सहानुभूति का प्रमाण मुझे नहीं मिला है। अगर सहानुभूति होती तो बिमल दूसरी बार विवाह करने के लिए इतना उतावला न हो उठता। इसके अलावा तुम्हारे मन में भी अगर बिमल के लिए रत्ती भर प्यार होता तो तुम लोगों का संबंध गहरा हो जाता; और इतनी आसानी से उन्हें ठुकराने का कारण भी तुम्हें ढूंढे नहीं मिलता।

भास्वती : इतनी-सी सहानुभूति के लिए धन्यवाद।

लेखक : (हंसकर) मैं बिल्कुल हृदयहीन नहीं हूं इतना-सा परिचय तो तुम्हें मिल गया न।

भास्वती : (धीमे से) जी हां, मैं अपना पहले का विचार वापस ले लेती हूं।

लेखक : नहीं, अभी वापस उठा लेने की जरूरत नहीं। कुछ और आगे बढ़ जाना ही शायद ज्यादा उचित होगा। ठीक है, कहती जाओ, तुम्हारी बातें बड़ी अच्छी लग रही हैं। किसी आदमी को, किसी चरित्र को समझने का प्रयास कितना संतोषप्रद होता है, इस बात का अनुभव हमसे ज्यादा और कौन कर सकता है? हां कहती जाओ...

भास्वती : हम दोनों के अंदर यानी मेरे और उनके बीच हालांकि प्रेम नही जगा फिर भी उनके साथ मानसिक मेल-जोल की भावना जगाने के तरीके की खोज में मैंने तो कितनी ही रातें उनींदी बितायी हैं। मगर उनके और मेरे बीच जो दरार पड़ गयी है, उसे पाटने का कोई उपाय न पाकर मैं हताश हो गयी हूं।

लेखक : तुम हताश इसीलिए हुई हो क्योंकि तुम्हे बिमल में ऐसा कोई गुण दिखायी नहीं दिया जिसे संपुष्ट करते हुए अपने जीवन को तुम परिपूर्णता की दिशा में आगे बढ़ा सको। और इसी कारण बिमल भी तुम्हारे मन को जरा भी आकर्षित नहीं कर पाया है। ऐसे आकर्षण की शक्ति, हो सकता है कि गहरे प्यार से कम हो, फिर भी विवाहित जीवन की सुख एवं शांति को बनाये रखने के लिए वह पर्याप्त है।

भास्वती : हालांकि मैंने पहले इसी तरह बिल्कुल नही सोचा था, पर अब भली-भांति अनुभव कर रही हूं कि आपकी धारणा सही है। पता नहीं, किस कारण मेरे पति कभी भी मेरी आतरिक श्रद्धा प्राप्त नहीं कर सके। यहां तक कि जब वे बीमार पड़े थे, तब भी मेरे मन में कोई खास सहानुभूति नहीं हुई थी। हो सकता है कि मेरी बातें सख्त और कड़वी लगें, हो सकता है कि मैं आदर्श गृहिणी जैसी बात नही कर रही। परंतु मैंने सरल भाव से ही आपके सम्मुख अपना विचार प्रकट करने की कोशिश की है। पति के नजदीक आने की ज्यादा सुविधा मुझे नहीं मिली थी, यह सच है, पर थोड़ी-सी सुविधा जब मिली भी, तब उनमें सिर्फ आदिम बर्बरता ही मेरी नजर में आयी थी और इसी से मेरा मन उनसे कटता गया। आपने जैसा बताया, उस गुण की कोई झलक तक मुझे उनमें दिखाई नहीं पड़ी।

लेखक : अगर कुछ काव्यमय ढंग से कहा जाय, तो उनके संपर्क से तुम्हारा हृदय-कमल खिला न था - यही न?

भास्वती : मेरा भी एक दिल है, मेरे अतर में भी एक कोमल अनुभूति है, अनुप चलिहा के संपर्क में आने पर ही मैंने यह समझा था। मगर हिमांशु के प्रति जो आकर्षण पनपा, उसकी गहराई ने तो मुझे बिलकुल अभिभूत ही कर डाला है।

लेखक : क्या हिमांशु तुम्हारा सहपाठी है?

भास्वती : सहपाठी होने पर भी मेरी जान-पहचान हिमांशु से ज्यादा दिन पहले नहीं हुई। जान-पहचान होने के बाद अब ऐसा लग रहा है, मानों हम दोनों एक-दूसरे से जान-पहचान के लिए अरसे से बाट जोह रहे थे।

लेखक : तुम्हारे जैसा ही एक संस्कृति-संपन्न हृदय अवश्य हिमांशु का भी होगा, शायद इसीलिए तुम दोनों एक-दूसरे को आकर्षित कर सके। शायद इसीलिए अब तुम हिमांशु से विवाह करने चली हो।

भास्वती : अब मैं यही चाहती हूं कि मेरी जीवनधारा अब एक निश्चित गति से प्रवाहित हो। मेरे इस यात्रा-पथ का सहयात्री होगा हिमांशु! हिमांशु के प्रति जागा हुआ जो आकर्षण मुझे बिल्कुल अभिभूत कर रहा है, उसे ही शायद प्रेम कहा जा सकता है। मैं सोचती हूं कि उसी के जरिये मैं अपनी सत्ता का बोध प्राप्त करने के साथ-साथ उसे परिपुष्ट भी कर पाऊंगी।

लेखक : क्या हिमांशु की भावना भी ऐसी ही है?
(हिमांशु दिखाई पड़ता है)

हिमांशु : सारी प्रतिकूल स्थितियों का सामना करने हेतु मैं प्रस्तुत हूं।

लेखक : यह न भूलो कि जिंदगी रोमांस भर नहीं है। तुम्हें यह बोध होना आवश्यक है कि अंतर के सामयिक उच्छ्वास की अपेक्षा प्रेम कहीं अधिक गहरा होता है।

हिमांशु : यह बोध मुझे हो चुका है।

लेखक : सिर्फ यही नहीं, अपने प्रेम को तुम्हें युक्ति, यानी औचित्य की वेदी पर प्रतिष्ठित भी करना होगा।

हिमांशु : मैंने कर लिया है। वैज्ञानिक जब फूल की पंखुड़ियों को तोड़कर कुचल डालता है, उस समय भी फूल की खुशबू जैसे बनी रहता है, उसी तरह मेरे प्रेम की खुशबू भी अब घटने की बजाय दुगुनी बढ़ गयी है।

लेखक : तो क्या तुम भास्वती से विवाह करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हो?

हिमांशु : मैं अपने निर्णय पर अविचल हूं। मेरा संकल्प अटल है।

लेखक : लेकिन भास्वती के मा-बाप की सम्मति तुम्हें नहीं मिलेगी।

हिमांशु : सम्मति नहीं मिलेगी, यह बात आप दृढ़ता से कैसे कह सकते हैं?

लेखक : भास्वती की मां पुराने विचारों वाली है। उसके पिता भी संस्कार-मुक्त नहीं है।

हिमांशु : मगर वे लोग यह बात जरूर समझ गये हैं कि आज से अठारह साल पहले भास्वती के कल्याण के लिए उन लोगों ने जो कुछ किया था उसका नतीजा वैसा नहीं हुआ, जैसा कि उन लोगों ने सोचा था। होमाग्नि के सामने जो

पवित्र मंत्र बोला गया था, वह भास्वती के जीवन मे निष्फल रह गया।

लेखक : तुम जितनी आसानी से यह बात समझ गये हो शायद वे लोग इतनी आसानी से समझने का प्रयास नहीं करेंगे।

हिमांशु : मगर भास्वती का जीवन विषमय हो उठे, जरूर वे ऐसा नही सोचते। भास्वती का जीवन सुख और तृप्ति से परिपूर्ण हो, यह बात हालांकि वे जबान से नहीं कहते पर अंतर से यही चाहते है।

लेखक : भास्वती, बताओ, तुम क्या सोचती हो? तुम्हारे मा-बाप को तुमसे बडी आशाएं हैं। क्या तुम उनकी आशाओं पर कुठाराघात करोगी?

भास्वती : मै आज तो कुछ करने चली हूं, अगर उसमें मां और पिताजी की पूरी तरह से सहमति होती, तो वह बड़ी खुशी की बात होती। मगर वे किसलिए समर्थन नहीं कर सकते, मुझे पता नहीं। मां और पिताजी के मन को चोट पहुचाना जिस तरह मेरे लिए अनुचित है, उसी तरह मेरे अंतर भी दुख देना उनके लिए भी अनुचित है। क्या मेरे मन की बातें, मेरी समस्याए समझने की कोशिश उन्हें भी नहीं करनी चाहिए? हालांकि बिना समझे या समझने की कोशिश किये बगैर, पुराने संस्कारों को वे जबरन पकड़े रहना चाहें, तब तो खैर मैं लाचार हूं।

लेखक : मगर मां-बाप का आर्शीवाद मिले बिना इतना बडा काम करने की क्या तुम्हारी हिम्मत है?

भास्वती : मेरा तो यही विश्वास है कि उनके आर्शीवाद से मुझे वचित नही होना पड़ेगा। सक्रिय रूप से भले ही वे मेरे साथ सहयोग न करें पर निष्क्रिय बैठे रहकर भी वे जरूर अपने मन से हमारा अनुमोदन ही करेंगे। साथ ही यह आर्शीवाद भी अवश्य देंगे कि किसी भी प्रकार का अमंगल हमारा स्पर्श न करे।

लेखक : बिमल की ओर से भी हो सकता है कि अड़चन डाली जाय।

हिमांशु : शायद नहीं। और अड़चन आये भी तो उस अड़चन को हटाने मे हम समर्थ हैं।

लेखक : पर तुम लोगों के इस काम से हो सकता है कि समाज में हलचल मच जाये।

भास्वती : (कुछ आवेश में आकर) समाज की बात मुझसे न कहें। हमारे लिए ही समाज सजग रहता है पर पुरुष के लिए उसकी आंखें बंद रहती हैं। मेरे पति जब दूसरी बार विवाह कर रहे थे तो समाज ने उन्हें क्यों नहीं रोका? मेरे प्रति पति का जो उत्तरदायित्व है, समाज ने उन्हें याद क्यो नहीं दिलाया? इस समाज की दुहाई मेरे सामने न दें। पुरुषों के बनाये नीति-नियमों की बातो से मेरा मन विद्रोह कर उठता है। समाज हमेशा हमारा शोषण करता रहे, यह बात मैं और ज्यादा सहन नहीं कर सकती।

लेखक : तुम जैसी आदर्श नारी के प्रति लोगों की जो आस्था रही है वह घट जायेगी।

भास्वती : मैं आदर्श नारी नहीं बनना चाहती।

हिमांशु : जो भास्वती जैसी हैं, उन्हें भास्वती के इस कदम से अपने अंतर के दुखों का बोझ हलका करने में मदद मिलेगी। और समाज में ऐसे लोगों की तादाद भी बहुत कम नहीं। वे भास्वती की मार्ग-दर्शक के रूप में पूजा करेंगे।

लेखक : संसार का कीचड़ तुम लोगों के प्रेम को गंदा कर डालेगा।

हिमांशु : कल्याणी गृहिणी के रूप मे भास्वती उस कीचड़ से बहुत ऊपर रहेगी। मातृत्व का गौरव उसे और ऊंचा उठायेगा।

लेखक : मगर वह मार्ग है, भोग का, कामना का, प्रवृत्ति का। उस मार्ग से आगे कदम बढ़ाने पर तुम लोगों के प्रेम को मुक्ति का स्वाद नहीं मिलेगा। मोह बंधन में उसका अस्तित्व खो जायेगा।

भास्वती : आपने तो हमारे प्रेम को स्वीकार कर लिया है न? मगर हमारे विवाह के निर्णय का आप अनुमोदन नहीं करते। इसका मतलब यही है कि आपका मन भी संस्कार-मुक्त नहीं है। नाटककार, साहित्यकार होने पर भी हमारे सिर पर हाथ फेरते हुए 'तुम्हारी यात्रा मंगलमयी हो' कहकर आशीर्वाद देने में आप भी हिचक रहे हैं।

लेखक : तुम यह गलत समझ रही हो।मेरे मन में न कोई हिचक है और न संकोच। मैं तो केवल तुम लोगों के भावी जीवन की ही कल्पना करता हूं।

हिमांशु : आपकी वह कल्पना यथार्थ की उपेक्षा कर रही है।

लेखक : मगर मेरी कल्पना यथार्थ से ही अपना गति-प्रवाह, अपनी प्राण-शक्ति प्राप्त करती रही है।

भास्वती : आप कायर है। सत्य को सुंदर बनाकर साहित्य मे प्रतिष्ठित करने की हिम्मत आप में नहीं है।

लेखक : भास्वती, सुनो! केवल यह दृश्यमान जगत भर ही यथार्थ नहीं है। सत्य का अंकुर केवल उसी में निहित नहीं रहा है। सत्य और यथार्थ की परिधि, वास्तव जगत की सीमाओं को पार कर मनुष्य के भावना-जगत में, मनुष्य के अंतस्तल में, आत्मा की अनिर्वचनीयता के बीच तक फैली हुई है। मैं शिल्पी हूं, नाटककार हूं, साहित्यकार हूं, द्रष्टा हूं। मेरी कल्पना केवल वस्तु-जगत मे सीमित नहीं रहती, सीमित रह ही नहीं सकती। इसीलिए मैं चाहता हूं कि तुम लोगों का संस्कृति-संपन्न अंतर आज उस प्रेम का उद्बोधन करे जो प्रेम देह का बंधन नहीं चाहता, आत्मा के मिलन को स्वीकारता है। उस प्रेम को जगाये जो लौकिकता की संकीर्ण सीमाओं को पार कर असीम प्रेम का महात्म्य अनुभव करना सिखाये, उसे त्याग के बीच,

भोग-वासना की निवृत्ति के बीच अनुभव करना सिखाये। अंतरात्मा में मधुर मिलन का आनंद जगाये। केवल यही प्रेम सत्य है, यही प्रेम निर्वाण का संधान देता है। यही प्रेम अक्षय एवं चिरंतन है।

हिमांशु : मगर हम तो मिट्टी के पुतले ठहरे। आपके उस प्रेम की कल्पना इस धूल-मिट्टी की धरती के रक्त-मांस वाले इंसान के लिए नहीं है। इस दुनिया को बिल्कुल चिमटकर पकड़े रहने हेतु हमारा अपार मोह है। इस मोह-पाश में बंधे रहने के अलावा हमारे लिए और कोई दूसरी राह नहीं है।

लेखक : हिमांशु, तुम तो पुरुष हो। अपने मन के गति-प्रवाह का रूप तुम खुद जैसा सोच रहे हो, वैसा है नहीं। मैं तो यह कहूगा कि तुम मुझे पहचान नहीं पाये हो। हाड़-मांस का इंसान होने पर भी तुम में एक अंतर है। अपनी कल्पना की मानसी प्रिया को दुनिया की किसी नारी में संधान कर पाने की, इस अंतर में अदम्य आकांक्षा है। आज शायद अपनी मानस-प्रतिभा के साकार रूप का संधान तुम्हें भास्वती मे मिल रहा है। इसी कारण भास्वती के प्रति जो आकर्षण तुम्हारे मन में जग उठा है, उसने तुम्हें अभिभूत कर लिया है। परंतु विवाह के जरिये अगर तुम इस बंधन को चिरंतन बना डालना चाहो तो हो सकता है कि तुम्हें निराश होना पड़े। तुम्हारे अंतर की गति-चंचलता तुम्हें कभी तृप्ति का स्वाद लेने नही देगी। नवीन के संधान में वह फिर स्थिरता खो बैठेगी।

भास्वती : आप तो पुरुष हिमांशु के अंतर की चंचलता के बारे में सोच रहे हैं, पर मेरे मन के बारे में तो सोचते नहीं। मैं नारी हू। मैं हिमांशु मे अपने को समर्पित कर जीवन को सार्थक बनाना चाहती हूं। इसीलिए अभिसारिका की भांति आगे बढ़ आयी हूं। निविड़ सान्निध्य के जरिये हिमांशु के अस्तित्व का मैं अनुभव करना चाहती हूं। मैं ठहरी नारी। धूप जैसे खुद जलते रहकर निःशेष हो जाती है, मैं भी हिमांशु के प्यार मे अपने को विलीन कर दूंगी।

लेखक : लेकिन मैंने तो तुम्हारे इस तरह के रूप की कल्पना ही नही की थी।

भास्वती : आपने गलती की थी।

लेखक : तुम तो सामान्य नहीं हो, तुम तो अनन्य हो - भास्वती हो तुम! मैंने तो सोचा था, धीमान पुरुष की भांति ही तुम्हारा अंतर भी गतिशील होगा। किसी निश्चित बिंदु पर आकर वह अचानक ठहर नहीं जायेगा। विभिन्न रूपों के जरिये अपने को अभिव्यक्त करता हुआ वह अनंत की ओर बढता चलेगा।

भास्वती : मुझे क्षमा करें। आपकी आशा को, आपकी योजना को हम रूपायित नहीं कर सके।

लेखक : अपने सामने मैं भास्वती के दो अलग-अलग रूप देख पा रहा हूं। एक है मेरी मानस-कन्या, अशरीरी भास्वती और दूसरी हो तुम।

भास्वती : और आप अब अपने नाटक की नायिका के रूप में किसे चुनेंगे? मुझे तो निश्चय ही नहीं चुनेंगे?

लेखक : कुछ समय पहले तक ये दोनों ही रूप एक ही में विलीन थे। भास्वती के एक ही रूप को मैंने मानस-पटल पर देखा था। पर अब तो तुमसे अलगाव हो गया है। तुम लोग अपने मार्ग पर आगे बढ़ जाओ, मैं रुकावट नहीं डालूंगा। और मैं भी अपनी राह जाऊं, अपनी कल्पना को, अपने आदर्श को, अपने साहित्य में रूपायित करूं। मेरी मानस-कन्या, मेरी कल्पना की भास्वती, ध्यान-लोक की भास्कर ज्योति से उद्‌भासित हो उठे। सांसारिक जीवन की संकरी सीमाओ को लांघकर मेरे साहित्य में भास्वती का प्रेम त्याग के जरिये अम्लान बने, सुंदर बने।

भास्वती : तो अब हम चलें।

लेखक : ठीक है, जाओ। परंतु कभी अगर मेरी बात की सचाई का अनुभव कर सको, तो फिर लौट आना। उस परम वेला की मैं बड़े आग्रह से बाट जोहता रहूंगा।

(मंच पर अंधेरा होकर नाटक का अंत सूचित होता है)

द्वीप

हिमेंद्र क़ुमार बरठाकुर

पात्र

पुरुष	:	बूढ़ा
		खीरेश्वर
		भास्कर
		बिजन
नारी	:	आघोणी
		सावित्री
		मंजुला

(मंच के बीचों-बीच लगभग सूखा हुआ एक पेड़ है, जिसमें एक ही डाली है। उसकी पृष्ठभूमि में नीला आकाश, बड़े-बड़े बादलों के कुछ टुकड़े उडे जा रहे हैं। धूप का चमकीला प्रकाश फैल रहा है। पानी की आवाजें आ रही हैं।

मंच पर काम में व्यस्त एक बूढ़ा आदमी दिखाई पडता है। उसके शरीर पर एक फटी हुई कमीज है, चेहरे पर कई दिन की बढी हुई दाढी है। बूढे की उम्र साठ साल के करीब होगी। एक रस्सी को खींचते हुए वह शायद किसी नाव या बेड़े को चला रहा है। रस्सी का दूसरा सिरा नेपथ्य की बायीं ओर पीछे के कोने में है।

नाटक के निर्देशन में जो "बायी ओर" या "दायीं ओर" बताया गया है वह दर्शकों की ओर से निश्चित किया गया है। अभिनेताओं की ओर से नहीं)

बूढ़ा : ओह्। ठीक से पकड़, अरे, छोड़ न देना, देखना-देखना भैया ओ...
(बूढ़ा फिसल पड़ता है, फिर उठ जाता है)
एह- यह इतनी फिसलन है; देख रहा हूं, इनके साथ मेरी कमर भी टूट जायेगी। (चीख कर कहता है) अरे ओ, वह जल-कुंभी को ठोकर मार कर हटा दे, नहीं तो मैं भला इतने बेड़ों को यहां लगाऊंगा कैसे?
(रस्सी को खींचता हुआ लाकर पेड़ से एक चक्कर घुमाकर फिर खींचता है। फिर स्वगत...)

बूढ़ा : अब कैसा मजा मिल रहा है, पूरा का पूरा गांव बह गया। अब पागल बूढ़ा ही बचाये तो बच सकते हैं।
(बूढ़ा रस्सी खींचकर बांधता है। रस्सी का दूसरा सिरा नेपथ्य मे बायी ओर पिछले कोने में है। रस्सी खीची हुई है, और ऊपर-नीचे हो रही है जिससे लगता है कि नेपथ्य में बेड़ा हिचकोले खा रहा है। बाढ के पानी के चलने की आवाज आ रही है)

बूढ़ा : आओ—आओ—सब यहां ऊपर आ जाओ।
(पेड़ की डाली के जोड़ पर बैठकर हांफता है।)
हां, कितने दिन मेरे राज्य में रहना है, उसका भी हिसाब लगा लो!
(अचानक बायीं ओर नजर पड़ते ही आवेश में आकर नीचे आ खड़ा होता है।)
अरे-अरे उस घर में क्यों घुस रहा है, निकल आ-निकल आ। (उसी ओर से खीरेश्वर का प्रवेश। दुबला-पतला लड़का। उम्र इक्कीस साल है या अट्ठाईस साल, पता ही नहीं चलता)

खीरेश्वर : भाभी को उस घर में रहने दें दादा।

बूढ़ा : क्यो रहने दूं?

खीरेश्वर : हालत बड़ी खराब है दादा। उसके बच्चे की हालत तो और ज्यादा खराब है।

बूढ़ी : अच्छा! तो फिर घर का किराया दे।

खीरेश्वर : घर का किराया?

(तभी बहुत दूर हेलिकाप्टर की आवाज सुनायी पड़ती है।)

बूढ़ा : हां, हां, घर का किराया। नहीं तो क्या यों ही रहने दूंगा? सिर्फ घर का किराया ही नहीं, तुम लोगों ने जो मेरे इस राज्य में कदम रखा है उसके लिए भी एंट्री टैक्स दो।

खीरेश्वर : भला वह कौन-सी चीज है?

(हेलिकाप्टर सिर के ऊपर आ जाता है। आवाज तेज हो गयी है। बूढ़ा ऊपर की ओर देखकर गुस्से से कहता है)

बूढ़ा : उफ् तभी से न जाने क्यों, यह फतिंगे की भांति छलांग भर रहा है रे! (हेलिकाप्टर की ओर देखकर) ओ हेलिकाप्टर! यहां से जाता है या नहीं? क्या, नहीं गया अब तक?

(हेलिकाप्टर की आवाज दूर चली जाती है। तभी आघोणी बूढ़ी आकर खीरेश्वर के पास खड़ी हो जाती है।

आघोणी : अरे खीरेश्वर, बापूकण की बीमारी और ज्यादा बढ़ गयी है रे! उसकी हालत खतरे में है।

बूढा : कौन है बापूकण?

आघोणी : मेरा नाती है बाबा! परसों पानी बढ़ आया तो मेरे बड़े लड़के की मृत्यु हो गयी। तभी से हम पानी में तैर रहे हैं बाबा। इस खीरेश्वर ने बहू और दो बच्चों को किसी तरह से चढ़ा लिया।

बूढ़ा : दो बच्चों को? दूसरा कहां है?

खीरेश्वर : कल सुबह देखा - नहीं है।

बूढ़ा : नहीं है?

खीरेश्वर : रात ही को कहीं बेड़े से उछल कर गिर पड़ा।

बूढ़ा : गिर पड़ा?

खीरेश्वर : उछल कर गिर पड़ा। शायद उसी रात को। हो सकता है कि दिसां मुख[1] में ही गिरा हो।

बूढ़ा : क्यों? तुम सबने उसे उठा क्यों नहीं लिया?

खीरेश्वर : पता चलता तब तो उठाते! हमें तो पता तक न चला कि वह गिरा कब।

---

1. दिसा और ब्रह्मपुत्र नदियों के संगम की जगह।

बाद मे नजर पड़ी, तो देखा कि नहीं है। (आघोणी इसी बीच रोने लगती है।)

आघोणी : बाबा, बहू के तो आंसू सूख गये। मेरे भी।

खीरेश्वर : अच्छा ही हुआ। अब तुम लोग फिर रोने-चीखने न लगना। तुम लोगों की चीख-पुकार सुनते-सुनते मेरे कान बहरे हो गये हैं। (बूढ़े से) क्या यहां केले के पौधे हैं?

बूढ़ा : केले के पौधे? भला केले के पौधे से क्या करेगा तू?

खीरेश्वर : जरा बेड़े की मरम्मत करनी है।

बूढ़ा : तूने उस बेड़े की भला पहले ही मरम्मत क्यों नहीं कर ली थी? तब तो वह बच्चा पानी में न गिरता न!

खीरेश्वर : उसके लिए समय ही कहां मिला? दिसां का तटबंध तोड़कर पर्वत जैसा हहराता आ गया, बड़े भैया आगे बढ़कर जरा देखने गये थे, कि बहकर किधर चले गये पता ही नहीं। मैंने किसी तरह से मा और बहू को घर की छत पर चढ़ाया, पिटकण को बहू ने पकड़ा, मैंने बापूकण को मां की पीठ पर चढ़ा दिया। फिर पानी घर की छत तक पहुंच गया। उसी बीच किसी तरह से टटोल कर कुछ केले के पौधे काटे।

बूढ़ा : उसके बाद?

खीरेश्वर : उसके बाद घर की छत जाने कहां चली गयी। दिसां का तेज पानी आकर हमें भी बहा ले गया।

आघोणी : आज आपने हमें बड़े मौके से उबार लिया, बाबा।

(बायीं ओर से सावित्री का प्रवेश! 23-24 साल की देहाती बहू। आंखों में आंसू छलछला रहे हैं।)

सावित्री : मां।

आघोणी : क्या हो गया! भला बच्चे को छोड़ क्यों आयी?

सावित्री : बापूकण न जाने क्या-क्या कह रहा है। मां, मुझे बड़ा डर लग रहा है।

आघोणी : चल तो, चल। पता नहीं, हरि ने किसके ललाट पर कितने दुख लिखे हैं।

(सावित्री और आघोणी बायीं ओर से जाती हैं। बूढ़ा अब तक कुछ सोच रहा था। अब कहता है)–

बूढ़ा : अच्छा, ठीक है। तुम लोगों को मकान का किराया नहीं देना पड़ेगा।

खीरेश्वर : पिछले दो-दिन, दो रात हम इसी बेड़े पर तैरते फिरते रहे हैं दादा। हमारे हाथ पैसे–कौड़ी की तो बात ही नहीं, हमें काटने पर खून भी नहीं निकलेगा।

बूढ़ा : तुम सबको "एंट्री टैक्स" भी नहीं देना पड़ेगा। सब माफ कर दिया। (अचानक उत्साह से) ओ, अरे तू क्या लकड़ी पकड़ सकता है?

खीरेश्वर : लकड़ी?

बूढ़ा : हां-हां, लकड़ी। पिछली बार जब बाढ़ आयी थी, मैंने बहुत-सी लकड़ी-काठ लाकर जमा किया था। मगर अब अकेले काम नहीं कर सकता। (नेपथ्य की ओर, जिधर दर्शक बैठे हैं, उस ओर उंगली दिखाकर) वह-वह-देख रहा है न - वह -

खीरेश्वर : कौन-सा? कौन-सा?

बूढ़ा : अरे-वो-वो-बाप रे! कितना बड़ा काठ है। मेरा महीने भर का काम चल जायेगा।

खीरेश्वर : कहां देख रहे हो काठ, तुम? अरे वह तो जलकुंभी है। बड़ी तेजी से बही जा रही है।

बूढ़ा : अरे ओ अंधे, उस जलकुंभी के पीछे, जरा अच्छी तरह से देख तो। ओह, वह तो बह ही गया। (नेपथ्य में दूसरा काठ बहता आता देखकर कहता है।) वह - वह - दूर - इसी ओर बहता आ रहा है। चल, चल, उसे पकड़ सकें तो - वाह, इस काठ से भी महीने भर की रसोई का काम चल जायेगा।

खीरेश्वर : रसोई का काम? (अपने सूखे होठों को जीभ से चाटकर) दादा, खाने को कुछ है क्या? पिछले दो दिन-दो रात से पेट में एक दाना भी नहीं पड़ा।

बूढ़ा : खाना यहां कहां मिलेगा? देखता नहीं, चारों ओर पानी ही पानी है। तुम जैसे गांव के सारे लड़के मुझे चिढ़ाया करते हैं। कहते हैं - पागल बुड्ढ़ा, टीले पर अकेला-अकेला रहता है। मगर देखता है न, अब इस बाढ़ के समय इस टीले के बीच का यह टीला ही बचा रहा और सब कुछ पानी में डूब चुका है।

खीरेश्वर : बड़ी भूख लगी है दादा! भूख के मारे पेट की अंतड़ी कड़क रही है। किरमी - केंचुवे मर चुके हैं।

(दूर से मोटर - लांच की धीमी-धीमी आवाज आती है)

बूढ़ा : मेरी हंडिया में थोड़ा-सा चिउड़ा तो था। (खीरेश्वर आशा से देखता है) मगर कल शाम को वह भी खत्म हो गया। अब तो जैसा तू भूखा है, वैसे ही मैं भी भूखा हूं।

(खीरेश्वर बड़ा निराश हो जाता है। नेपथ्य में मोटर लांच की आवाज कुछ तेज हुई है। पहले बूढ़ा, उसके बाद खीरेश्वर उस ओर देखता है)

बूढ़ा : अरे वह क्या है?

खीरेश्वर : शायद भट्भटिया नाव है।

बूढ़ा : वह तो इसी ओर चली आ रही है। परमीशन तो लिया नहीं।

खीरेश्वर : शायद कुछ खाने का सामान ला रहा है, दादा जी।

बूढ़ा : चाहे जो कुछ लाये, मगर मेरे यहां नाव बांधनी है तो टैक्स देना पड़ेगा। (आघोणी आती है)

आघोणी : बाबा, वह बच्चा तो लगातार उल्टी कर रहा है।

बूढ़ा : उल्टी कर रहा है? कोई दवा-दारू नहीं खिलाओगी? अब बताओ भला इस प्रचंड बाढ़ में मैं करूं तो क्या करूं।

खीरेश्वर : जैसे भी हो इसे टाउन के अस्पताल मे ले जाना है, दादा। (नेपथ्य के बायीं ओर पीछे के कोने में बेड़े की ओर देखकर कहता है) यह बेड़ा भी बिलकुल खराब हो गया। क्या केले के पौधे कहीं हैं इधर? और दो पौधे मिल जाते तो।

बूढ़ा : भला यहां केले के पौधे कहां मिलेंगे?

आघोणी : बेटे, केले का पौधा लेकर भला क्या करना है तुझे? पानी की इतनी तेज धारा है। क्या उसके बीच तू...?

बूढ़ा : भला केले के पौधे की अब जरूरत क्या है बेटे! पानी की इतनी तेज धारा में क्या तू बेड़े को मोड़ सकेगा?
(नेपथ्य में मोटर - लांच की तेज आवाज आती है। पता चलता है कि लाच समीप आ रही है)

खीरेश्वर : मोड़ क्यों न सकूंगा बेड़े को? जरूर मोड़ सकूंगा। इससे कितने भयंकर पानी में बेड़ा चलाता आया हूं। अब सिर्फ कुछ खाना खा लेना होगा। बड़ी भूख लगी है। भूख के मारे पेट मे दर्द हो रहा है। (अपने पेट को जोर से दबा लेता है। चेहरे पर तकलीफ की अनुभूति प्रकट होती है।) आज दो दिन - दो रात से कुछ भी खाया-पीया नहीं है। (नेपथ्य के बायीं ओर के पीछे के कोने से बिजन की पुकार सुनायी देती है।) ओ बूढ़े, ओ, जरा यह रस्सी पकड़ लो।
(साथ ही उसी ओर से बिजन रस्सी का एक सिरा फेंक देता है। बूढ़ा पकड़ता है। खीरेश्वर मदद करता है। मोटर-बोट की आवाज बंद है। बूढ़ा नेपथ्य के दायीं ओर के पिछवाड़े के कोने की ओर देख चीखकर कहता है)—

बूढ़ा : यहां नाव बांधने पर पैसा देना होगा।
(बिजन नेपथ्य से चीखकर कहता है)

बिजन : दूंगा, दूंगा पैसा। रस्सी जरा खींचो न।
(बूढ़ा और खीरेश्वर रस्सी को खींचकर पेड़ से बांध देते हैं)। दायीं ओर के पीछे के कोने से भास्कर का प्रवेश। उसके पैरों में कीचड़ लगा है। 27-28 साल का जवान, शरीर पर कुछ सुरुचिपूर्ण पहनावा।)

भास्कर : क्या तुम लोग बाढ़ में बहकर आये हो?

आघोणी : हम लोग बड़े ही गरीब है बाबा! मेरे नाती को बड़ी सख्त बीमारी हुई है। जरा हमारी मदद करें बाबा।

(बूढ़ा भास्कर से कहता है)

बूढ़ा : नाव बाधने के पैसे दो।

भास्कर : मिलेगा, मिलेगा, जरा ठहरो न। (आघोणी से) कहां है वह बच्चा?

खीरेश्वर : वह, उसी घर में।

भास्कर : क्या हुआ है उसे?

खीरेश्वर : उल्टी हुई है।

भास्कर : उल्टी हुई है? चलो जल्दी चलो।

(भास्कर आघोणी और खीरेश्वर बायीं ओर से चले जाते हैं। बूढ़ा भी पीछे-पीछे जा रहा था, पर उसी बीच दायीं ओर से बिजन और मंजुला देवी के प्रवेश करने के कारण, उसी ओर मुड़कर देखता है और लौट आता है। बिजन 27-28 साल का जवान है। शरीर पर बूटेदार कपड़े की कमीज, कंधे पर टंगा हुआ कैमरा। पहले बिजन प्रवेश करता है। बूढ़े की ओर पीठ कर नेपथ्य में दाहिनी ओर देखता हुआ कहता है--)

बिजन : आओ-आओ भाभी। देखना - देखना - बहुत ज्यादा कीचड़ है। अरे डाल दिया न कीचड़ में पैर।

(उसी ओर से मंजुला का प्रवेश। 30-32 साल की महिला। अत्याधुनिक कपड़ों में)

मंजुला : उफ् मेरी साड़ी यों ही खराब हो गयी।

बिजन : एडवेंचर और कहते किसे हैं? बड़ा थ्रिलिंग है न?

बूढ़ा : सर, टैक्स देते जाइयेगा।

(बिजन मुड़कर देखता है)

बिजन : कौन हो जी तुम? कैसा टैक्स?

(बूढ़ा गंभीरता से जवाब देता है।)

बूढ़ा : पोर्ट टैक्स।

मंजुला : कितने अचरज की बात है!

बिजन : पोर्ट टैक्स?

बूढ़ा : मेरे बंदरगाह में आप लोग जहाज बांधेंगे, तो क्या पोर्ट-टैक्स नहीं देना पड़ेगा? सिर्फ पोर्ट टैक्स ही नहीं, यह जो आप लोग ऊपर चढ़ आये, उसके लिए एंट्री-टैक्स भी देना होगा आप लोगों को।

बिजन : वाह, यह तो कोई आदमी नहीं छोटा है। कौन हैं जी आप?

बूढ़ा : मैं हूं इस टापू का राजा।

मंजुला : बड़ा इंट्रेस्टिंग है।

बिजन : तुम राजा होकर भी इस तरह से टैक्स वसूल करते रहे हो? अगर पुलिस को पता चले तो वह पकड़ ले जायेगी, जानते हो या नहीं?

बूढ़ा : पुलिस? कहां है पुलिस? देखते नहीं तुम लोग, चारों ओर पानी ही पानी है। भला यहां तुम लोगों की पुलिस ड्यूटी करने आयेगी? यह राज्य मेरा है। यहां और किसी का 'राइट' नहीं है।

बिजन : वाह, यह तो अच्छी अंग्रेजी बोलता है। कौन हो तुम?

बूढ़ा : तुम जैसे लड़के को मैं अंग्रेजी सिखा सकता हूं बेटे। पता है, चालीस साल मैं हाई स्कूल में अंग्रेजी का मास्टर था? अंत में पेंशन मिलने पर जब गांव लौटा, तो देखा कि मेरी जमीन-मेरा घर सब कुछ चला गया है।

बिजन : चला गया है?

बूढ़ा : हां, रेवेन्यू सेल में चला गया। आत्मीय - स्वजनों ने "एडवर्स पोजेशन" कर लिया। बे-दखल। पचीस सालों से मैं मनिआर्डर से जमीन का लगान देने के लिए जो रुपये भेजता रहा, उन्हें जमा ही नहीं किया था। सब टाइम-बार हो गया।

मंजुला : तुमने इतनी सारी कानून की बातें भला कहां से सीखीं?

बूढ़ा : बाद में! जमीन जायदाद के लिए केस कर दिया। तब समझ में आया कि नियम कानून क्या होता है। वकील, मुहर्रिर, हाकिम आदि क्या होते हैं। उसके पहले कुछ भी पता नहीं था। बस स्कूल मास्टर था। हां अब दीजिये। हमारा टैक्स दे दीजिये।

(आखिरी वाक्य मंजुला से कहा था, मगर जवाब दिया बिजन ने--)

बिजन : दीजिये, कहने से ही क्या हो जाता है? टैक्स वसूल करने का तुम्हारा कौन-सा 'राइट' है।

बूढ़ा : ज्यादा बहस न करो बेटे। बहस करने पर पेनल्टी देनी होगी।

बिजन : वाह, यह तो देखता हूं बूढ़ा टस से मस होने वाला नहीं है।

बूढ़ा : हां, बड़ा पक्का आदमी हूं मैं। घर नहीं - जमीन नहीं - धन नहीं, सोना-चांदी नहीं, गांव में मेरे लिए कोई जगह नहीं। इसलिए मैं वहां से आकर इस ऊसर मैदान में पड़ा हूं। अकेला ही हूं इस मैदान की ही भांति। दो, टैक्स दे दो। पोर्ट टैक्स साढ़े सात रुपये, एंट्री टैक्स हर व्यक्ति के तीन रुपये के हिसाब से नौ रुपये, बहस करने के कारण जुर्माना दस रुपये। कुल साढ़े छब्बीस रुपये। इसके अलावा अगर किराये का मकान चाहिए तो कहो, सत्तर रुपये हर माह किराया।

मंजुला : मकान?

बिजन : कहां है मकान?

(बायीं ओर उंगली से दिखाकर बूढ़ा गंभीर होकर कहता है--)

बूढ़ा : क्यों, दिखाई नहीं पड़ता?

बिजन : क्या वही किराये का मकान है? वह फूस की झोंपड़ी?

बूढ़ा : खबरदार! हंसो मत। वही इस राज्य का गवर्नमेंट हाउस है। देखते नहीं, बाढ़ के पानी ने चारों ओर की सारी जगहों को डुबो दिया, परंतु अब भी इस राज्य को डुबो नहीं सका है। लेकिन लहरें कोशिश कर रही हैं, शोर करके जोर लगा रही हैं? चोटें कर रही हैं, सुन रहे हो न पानी की आवाजें... (पानी की आवाजें। बूढ़ा नेपथ्य की दायीं और देखकर पुकार कर कहता है) खबरदार, खबरदार, अरी बाढ़ और आगे न बढ़, आगे बढ़ी कि मरी। अरी ओ लहरो, इस तरह से धक्का क्यों मार रही हो! जाओ, पीछे हट जाओ, गो बैक, गो-बैक...

(दायीं ओर विंग्स की ओट में खड़ा होकर नेपथ्य की ओर देखता हुआ ऊंची आवाज में बाढ़ पर शासन करता है। इधर उसी समय बिजन और मंजुला बातें करते हैं।)

बिजन : आदमी पागल है।

मंजुला : शायद मन के दुख से पागल हो गया है। वह भास्कर गया कहां?

बिजन : भला उसका और काम ही क्या है। नौकरी-चाकरी छोड़ कर अब देश सेवा में जुट गया है।

मंजुला : तुम्हारे कहने से क्या होता है? तुम्हारी तो नौकरी ही नहीं है। सिर्फ आई.ए.एस. के लिए बाट जोहते ही दिन बीत रहे हैं।

बिजन : हां, मगर भास्कर की भांति सिंचाई विभाग के इंजीनियर की नौकरी मिलती तो मैं कभी इस्तीफा नहीं दे सकता, समझीं।

मंजुला : ओ आ रहा है वह। भला वह उस झोपड़ी में घुस कर क्या कर रहा था?

(दोनों बायीं ओर नेपथ्य में देखते हैं। उधर से भास्कर की आवाज सुनायी देती है--)

भास्कर : ओ बिजन, लांच को बांध लिया है न?

बिजन : भला, तुम क्या कर रहे हो जी। आ क्यों नहीं रहे हो? (बांयी ओर से भास्कर का प्रवेश)

मंजुला : भला तुम वहां क्या कर रहे थे?

भास्कर : भाभी, ये बेचारे बड़ी मुसीबत में पड़े हैं। उस लड़की का पति कल मर गया, बेड़े से एक बच्चा कहां गिर पड़ा पता ही नहीं। दूसरा बच्चा भी सख्त बीमार है।

बिजन : अरे ये सब दुख की कहानियां तो हमेशा की हैं। इधर बड़ी परेशानी हो रही है, जानते हो या नहीं?

भास्कर : कैसी परेशानी?

(मंजुला बूढ़े की ओर उगली से संकेत कर कहती है)

मंजुला : वह... उसे टैक्स चाहिए।

भास्कर : कहा था मुझसे भी! भाभी, कुछ रुपये दे दो, बेचारा बूढ़ा आदमी ठहरा।

बिजन : वाह, क्या उसके कहने पर ही दे दोगे?

भास्कर : देखो बिजन। भाभी इतने बड़े अधिकारी की श्रीमती हैं; कुछ रुपये अगर दे ही दें, तो क्या होता है?

(बूढ़ा वापस आता है।)

बूढ़ा : हां, ठीक से डांट दिया कलमुंही को।

बिजन : कैसे डांट दिया दादा?

बूढ़ा : अच्छी तरह गालियां दे दीं।

भास्कर : किसे?

बूढ़ा : और किसे? बाढ़ को। कलमुंही मेरा राज्य डुबाने आयी है। चारों ओर अथाह पानी है। उसके बीच जमीन का यह टुकडा भी मानो उनकी आंखों का कांटा बन गया है। देखो तो, वे लहरें किस तरह से चोटें कर रही हैं? मानो चोट करते-करते इसे ढहा ही देगी। (दायीं ओर देखते हुए पुकारता है) सावधान, सावधान, एक कदम भी आगे न बढ़ना। बैक, गो-बैक।

(बूढ़ा पहले जैसे विंग्स के पास जाकर नेपथ्य की ओर देखता पुकारता रहता है)

मंजुला : देख रहे हो, कैसे यह बाढ़ को नियंत्रित कर रहा है।

बिजन : भास्कर, तुम लोग तो इसी को फ्लड-कंट्रोल का चीफ इंजीनियर बना सकते हो?

भास्कर : वस्तुतः ठीक ही कहते हो। सरकार तो लेक्चर झाड़ कर ही फ्लड-कंट्रोल करती आ रही है। बिजन, तुम्हारे बड़े भैया तो मिनिस्टर हैं न?

बिजन : हां, तो उससे क्या होता है?

भास्कर : उनसे कहना इस बूढ़े को ही फ्लड-कट्रोल का मिनिस्टर बना लें। क्यों?

(तभी ऊपर हेलीकाप्टर की आवाज आती है। बूढा लौट आता है।)

बूढ़ा : यह मुसीबत का घर फिर आ गया।

बिजन : ओ, कल भैया ने मुझसे कहा भी था हेलीकप्टर से फ्लड देखना चाहता है, तो चल।

मंजुला : मोटर लांच से ज्यादा अच्छा लगता है, समझे! ज्यादा एक्साइटिंग!

बूढ़ा : (ऊपर उंगली उठाकर) कौन है उसमें?

बिजन : मिनिस्टर बरुआ है। मगर तुम्हें क्या काम है?

बूढ़ा : ओ मिनिस्टर? चारों ओर पानी ही पानी। ऊपर है मिनिस्टर। किसके मिनिस्टर हैं वे?

बिजन : रेवेन्यू मिनिस्टर।

बूढ़ा : (गुस्से से जल-भुनकर) रेवेन्यू, रेवेन्यू,रेवेन्यू! मेरी सारी जमीन जायदाद रेवेन्यू-सेल में चली गयी...(हैलीकाप्टर से) जाता है या नहीं यहां से - जाता है या नहीं?

(हैलीकाप्टर की आवाज बंद हो जाती है। बिजन मंजुला को एक ओर ले जाकर कहता है--)

बिजन : वाह, देखती हो न बुड्ढे का गुस्सा।

बूढ़ा : हां, लाओ, मेरा टैक्स दे दो।

बिजन : ओ, तुम अब तक भूले नहीं?

बूढ़ा : ज्यादा लेट न करो, लेट फाइन देना पड़ेगा।

भास्कर : ये तो अच्छी अंग्रेजी बोलते हैं।

(मंजुला बैग खोलने लगी है)

मंजुला : ठहरो, पैसे निकाल रही हूं।

बूढ़ा : लेकिन अब पूरे तीस रुपये देने होंगे।

बिजन : क्यों? पहले तो साढ़े छब्बीस रुपये ही हुए थे।

बूढ़ा : हुए थे, मगर अब नहीं। साढ़े तीन रुपये लेट-फाइन लग गया है। कुल तीस रुपये।

(मंजुला के निकाले दस रुपये के तीन नोट बूढ़ा झपट कर ले लेता है)

मंजुला : आह, यों झपट कर क्यों लेते हो?

बूढ़ा : तीस रुपये? हाः हाः हाः इन तीन दस टकिया नोटों से हम बढ़िया खाना खा सकेंगे। ओ लड़के, ओ रे लड़के!

(नेपथ्य की बायीं ओर जाकर खीरेश्वर को पुकारता है। खीरेश्वर नेपथ्य से जवाब देता है)–

खीरेश्वर : आ रहा हूं दादा।

भास्कर : भूख के मारे आदमी का दिमाग फिर गया है।

मंजुला : और दूसरी आग भी है।

(बूढ़ा खीरेश्वर की तरफ से बायीं ओर आगे बढ़ गया था, अब उसी ओर से खीरेश्वर के प्रवेश करने पर विंग्स के पास ही दोनों मिल गये। वे आपस

में बात करते हैं और मंजुला - बिजन - भास्कर दांयीं ओर के सिरे पर खड़े उन्हें देखते रहते हैं।)

खीरेश्वर : क्या है दादा!

बूढ़ा : तूने अपना नाम क्या बताया था?

ख़ीरेश्वर : खीरेश्वर!

बूढ़ा : हां, चल हम किसी अच्छे कीमती रेस्टोरेंट में खाना खा आयें। चल... (खीरेश्वर अचरज में पड़ जाता है।)

खीरेश्वर : दादा?

बूढ़ा : बता क्या खाना चाहता है तू? मुगलाई पराठा? मटनकरी? पुलाव? चल, चल तीस रुपये हम उड़ा आयें। दस रुपये के तीन-तीन नोट। छक-कर खाना होगा! चल,चल!

(बूढ़ा खीरेश्वर को साथ ले पीछे के पट के पास तक जाता है। और वहीं दोनों बातें करते हैं। पर उनकी आवाज सुनायी नहीं पड़ती। उसी समय मंच के सामने बिजन-मंजुला-भास्कर बातें करते हैं)

बिजन : बुड्ढा बड़ा ह्यूमरस है।

भास्कर : मैंने कहा था न? कुछ भिगोया चना या चिउड़ा ले चलें मगर, तुम लोग तो जरा भी ठहरे नहीं। तुम लोग सोचते थे, बाढ़ देखने जाना एक फन है, एक उमंग है, एक पिकनिक है। अब देख रहे हो न?

बिजन : ऐसा तो हर साल होता ही रहता है। दिस इज नो वंडर।

भास्कर : मैं इसीलिए तो कह रहा हूं। हमारी जाति इस नदी के किनारे रहने के लायक नहीं है।

मंजुला : मैं अपने लेडीज क्लब से कुछ खाने की चीजें लायी हूं, जानते हो? (खीरेश्वर बूढ़े का साथ छोड़कर इधर बढ़ आता है।)

खीरेश्वर : मा जी, कुछ खाने की चीज है क्या? क्या हमें भी देंगी?

मंजुला : दूगी - दूंगी। जरा ठहरो। बिजन, लॉच पर वह जो थैला है न, उसे उठा लाओ जरा।

बिजन : विध प्लेजर!

(बिलायती ढंग की हंसी हंसकर बिजन दाहिनी ओर से जाता है। देहाती ढंग की कुछ आवाजें करते हुए खीरेश्वर बायीं ओर जाता है। कहता जाता है--)

खीरेश्वर : (पुकार कर) ओ मैया, मैया ओ, खाने की चीजें लायी है। आ - आ!

भास्कर : कौन-सी चीज लायी हो, भाभी?

मंजुला : अरे वही लड्डू! हमारे लेडिज क्लब से युद्ध के जवानों के लिए जो भेजे गये थे।

भास्कर : हां, मगर उसके बाद क्या हुआ?
(मंजुला मुंह फुलाकर कहती है)

मंजुला : ये जवान सारे बड़े असभ्य होते हैं, जानते हो? उन सबने लड्डू वापस कर दिये।

भास्कर ; मगर क्यों?

मंजुला : कहते है, उन्हें बंदूक ही चाहिए, लड्डू नहीं। ये सारे जवान बिलकुल "मैनर" नहीं ज़ानते।
(खीरेश्वर और आघोणी का प्रवेश)

भास्कर : इतने दिनों के पुराने लड्डू क्या खराब नहीं हो गये होंगे?

मंजुला : शायद नहीं! सूखी मिठाई जल्द खराब नहीं होती है न! (आघोणी और खीरेश्वर इसी बीच कतार में खड़े हो, आशा से बाट जोह रहे हैं। बूढ़ा मंच के सामने खड़ा उनके कार्य-कलाप देख रहा है।)

आघोणी : भले ही खराब हो गये हों। हमें दे दो मां।

खीरेश्वर : दो दिन - दो रात से कुछ भी खाया-पिया नहीं। मां जी, अब अच्छे-बुरे का भला सोच-विचार क्या करें?

बूढ़ा : आप लोग ये लड्डू क्या फ्री देने वाले हैं?
(मंजुला को अचरज होता है।)

मंजुला : और नहीं तो क्या हम पैसे लेने वाले हैं? भला, कैसी बातें करते हो?

बूढ़ा : तब तो ठीक है। मगर पैसे लेने पर यहां सेल्स टैक्स देना पड़ेगा।
(बिजन आता है। उसके साथ में एक थैला है।)

बिजन : हां, यह है थैला! लो।

मंजुला : देखूं, जरा खोलो न!
(बिजन थैला खोलकर मंजुला को देता है और कुछ हटकर कैमरा फोकस करता है। आघोणी आदि मंजुला के कुछ समीप आ जाते हैं)

आघोणी : दो मां, मेरी उस बहू के लिए भी दो-एक दे दो।

बिजन : ठहरो भाभी, मैं जरा कैमरा फोकस कर लूं।
(मंजुला लड्डू बांटती है। बिजन फोटो लेता है।)

बिजन : हां, जरा इधर नजर घुमाओ न, जरा मुस्कराओ, हां-हां, ठीक है, ठीक है! थैंक यू! बड़ी सुंदर होगी तस्वीर। डिप्टी कमिश्नर की मिसेज इतनी इंटीरियर जगह जाकर फ्लड रिलीफ का काम कर रही है, बिल्कुल हेड लाइन समाचार!
(कुछ शर्माती हुई मंजुला पूछती है)

मंजुला : पीछे की ओर जो बादल और पानी है, वह फोटो में आया है न?

भास्कर : तुम लोग यह सब क्या कह रही हो, भाभी? लोगों की इतनी दुर्दशा के समय मे भी...

बूढ़ा : कहने दो बेटे! बात कहने पर तो कोई टैक्स नहीं लगता है न!

खीरेश्वर : अरी मां - मां।

आघोणी : क्या हो गया बेटे? क्या हो गया?

खीरेश्वर : पानी! पानी!

(भास्कर खीरेश्वर को पकड़ लेता है। आघोणी बायीं ओर तेजी से प्रस्थान करती है।)

भास्कर : पीने का पानी है क्या?

मंजुला : पानी?

बिजन : क्या वह सब पानी नहीं है?

भास्कर : यह पानी बड़ा गंदा है, आदमी पी नहीं सकता।

खीरेश्वर : पानी!

भास्कर : हमारी लांच पर क्या पानी की बोतल नहीं है?

बिजन : ऐसा ही हो तब तो एक पूरा रेस्टोरेंट उठा लाने पर ही काम होगा।

(एक लोटा पानी लिये आघोणी आती है।)

खीरेश्वर : पानी!

आघोणी : यह पानी है, ले बेटे पी ले!

(आघोणी खीरेश्वर को पानी देती है। उसे पीकर खीरेश्वर कुछ स्वस्थ होता है।)

बूढ़ा : (कविता जैसे गाकर) 'वाटर वाटर एवरी ह्वेयर, नाट ए ड्राप टु ड्रिंक'.... कोलरिज।

खीरेश्वर : ये लड्डू...सड़े हैं।

बूढ़ा : और मन भी सड़े हैं।

मंजुला : ओह! कैसी सड़ांध आ रही है यहां! ओक्-ओक्!

(उल्टी का भाव दिखाकर नाक रूमाल से बद करती है। सभी चारों ओर देखते हैं।)

बिजन : कुछ सड़ गया है शायद!

भास्कर : बदबू अचानक आयी थी!

बूढ़ा : वह-वह पानी में बहता आ रहा है! वह!

भास्कर : कौन-सी चीज?

बूढ़ा : एक मरी हुई गाय, बिल्कुल सड़ गयी है। बहती हुई आकर मेरे इस टापू के तट पर आ लगी है। ठहरो, कोस्टल गार्डों द्वारा निकलवा देता हूं।

(बूढ़ा दायीं ओर चला जाता है।)

बिजन : देखता हूं, इस राज्य में बूढ़ा खुद गवर्नर, टैक्स कलक्टर, कोस्टल गार्ड सब कुछ है।

मंजुला : आह, कितनी भयंकर सड़ांध! (मुह विकृत हो जाता है।)

भास्कर : यही रियलिटी है, समझीं भाभी? याद है, जब मुझसे मिली थीं, उस समय क्या कहा था तुमने?

बिजन : क्या?

भास्कर : इतनी भारी बारिश के बाद अब मौसम साफ हुआ है। चलो, मोटर-बोट से हम फ्लड देख आयें। मानो कोई आउटिंग हो।

बिजन : ओफ्, तुम इतने क्रिटिकल हो?

भास्कर : वह देखो, बुड्ढ़े ने शव को निकाल दिया। (मंजुला से) सड़ांध झट से घट गयी, देखा न भाभी।

मंजुला : अब चलो हम जायें।
(बूढ़ा आता है)

बूढ़ा : हां, निकलवा दिया। आई-एम. सॉरी मैडम! मेरे इस राज्य की कोस्टल सर्विस को जरा और इंप्रूव करना होगा।
(भास्कर आघोणी से पूछता है--)

भास्कर : अब तुम लोग क्या करोगे?
(बिजन मंजुला को एक ओर ले जाकर कहता है)

बिजन : देखती हो न भाभी, यह झझट खुद ले रहा है?

खीरेश्वर : (भास्कर से) सर, हम से तो कुछ कहा ही नहीं जा रहा है कि क्या करना है।

आघोणी : पिछली बार की बाढ़ में हमें सात दिनों तक भूखे रहना पड़ा, मालिक! उसी बार हमारा बूढ़ा मर गया।

बूढ़ा : तुम सब गांव छोड़कर हमारे इसी राज्य में आकर रहो। टैक्स, वैक्स नियमित चुकाते रहना। सुख से रह सकोगी। कोई डर नहीं।

आघोणी : मेरे ससुर भी बाढ़ में मरे थे, मालिक।

बिजन : हा - हा - हा - तीन पीढ़ियां...

मंजुला : (बिजन को रोक कर) हंसो मत बिजन! (आघोणी से) तुम्हारे लड़के कितने हैं?

(आघोणी खीरेश्वर को उंगली से दिखाती है।)

आघोणी : यह हमारा छोटा लड़का है मां! अब तो यही बचा है। मंझला लड़का ग्रहणी की बीमारी से मर गया। चार साल पहले, ऐसी ही बाढ़ के दिनों में। बड़ा लड़का मर गया परसों, पर्वत जैसे पानी से - मां।

खीरेश्वर : अरी, वह मरा नहीं है न, खोया ही है।

आघोणी : एक और लड़का खो गया है मां! वह है मेरा नाती। बिल्कुल नन्हा-सा। परसों रात के आखिरी पहर में बेड़े पर से कहीं लुढ़क पड़ा। हमें पता ही न चला। (आंसू बहाती है)

खीरेश्वर : बहुत तेज धार है न, इसी कारण।

बूढ़ा : धार बहुत तेज है। इसी तेज धारा में देश का भविष्य बह गया।

मंजुला : तुम लोग इतनी विपदाओं के बीच रहते हो - (भास्कर से) अरे भास्कर, तुम जैसे इंजीनियर लोग भला कुछ कर नहीं सकते, क्यों? (आघोणी और खीरेश्वर बायीं ओर जाते हैं। जाते-जाते बात करते जाते हैं। 'न जाने बापूकण का क्या हुआ? आदि)

भास्कर : क्या तुम यह सोचती हो भाभी, कि हम इस ब्रह्मपुत्र नदी को कंट्रोल नहीं कर सकते? चारों ओर पहाड़-पर्वतों से घिरी हुई एक घाटी। यहा जितने बादल आ घुसते हैं, उसमें से एक टुकड़ा भी किसी दूसरी ओर निकल नहीं सकता। देश में पानी कितना होगा, बारिश कितनी होगी, इसका हिसाब उंगली के सिरे पर निकाल सकते हैं। उसी तरह "डैम" बनाकर पानी भी रोककर रखा जा सकता है। नदी के जल को नियंत्रित किया जा सकता है।

बिजन : तो फिर करते क्यों नहीं?

(भास्कर बिजन की बात का जवाब न देकर मंजुला से कहता रहता है)

भास्कर : तुम्हें यह सुनकर अचरज होगा भाभी, फ्लड कंट्रोल डिपार्टमेंट का कोई डैम नहीं है। डैम बनाने के लिए रकम नहीं हैं। बारिश का पानी पहाड़ों में ही जमा रखा जाय, ऐसा कोई प्रयास नहीं। वे लोग मेटेरीयोलाजिकल स्टडी तो करते ही नहीं। बादल कितने आये, माप-जोख के लिए उनके पास कोई साधन नहीं है, कोई यंत्र भी नहीं है।

मंजुला : तो फिर वे करते क्या हैं?

भास्कर : वे लोग नदी के किनारे-किनारे तटबंध बनाते फिरते हैं। बस, यही काम है। अगर तुम इसमें इतराज करो तो तुम बनोगी -'अप स्टार्ट', 'सिरफिरी'।

बूढ़ा : इसलिए तुम इस घाटी में रहने के लायक नहीं हो।

भास्कर : ब्रह्मपुत्र जैसी नदी के किनारे जो जाति निवास करे, उस जाति को तेजपूर्ण होना पड़ेगा, कर्मशील होना पड़ेगा, प्रैक्टिकल होना पड़ेगा।

बूढ़ा : और अगर ऐसा न हो तो?

बिजन : ऐसा न हो तो क्या होगा?

बूढ़ा : ठहरो मैं बताता हूं। न हो तो... हां, रेलगाड़ी तो देखी है न?

(खीरेश्वर आता है। चुपचाप पानी की ओर कुछ देखता रहता है।)

बिजन : रेलगाड़ी ?

मंजुला : भला रेलगाड़ी से क्या होगा?

बूढ़ा : लगभग दो हजार ट्रिप।

बिजन : इसका मतलब?

बूढ़ा : साठ लाख असमिया लोगों को इस घाटी से पैक-अप कर भेज देने के लिए सिर्फ दो हजार ट्रिप की जरूरत है। हर दिन पंद्रह-पद्रह ट्रिप के हिसाव से सिर्फ छह महीने।

भास्कर : इसका मतलब रिफयूजी?

बूढ़ा : हां, क्योंकि तुम लोग इस घाटी में रहने लायक नहीं हो।

भास्कर : तुम ठीक ही कहते हो। इतिहास में देखा जाता है कि पृथ्वी पर बहुत-सी संस्कृतियां बाढ़ों के कारण विनष्ट हो चुकी है। (खीरेश्वर दायीं ओर दिखाकर चीखता है। सब लोग उधर ही देखने लगते हैं।)

खीरेश्वर : दादा, दादा, वह - वह - सांप! सांप! सांप! ...

बूढ़ा : सांप? कहां हैं सांप?

(मंजुला बहुत डर जाती है)

मंजुला : सां...प!

बिजन : कहां है? कहां है?

खीरेश्वर : वह पानी में बहता आ रहा है।

बूढ़ा : इसी ओर आ रहा है।

भास्कर : शायद यहीं चढ़ आयेगा।

मंजुला : आये, वह चढ़ा आ रहा है।

(बायीं और से आघोणी आती है)

बिजन : अरे बाप रे, इतना बड़ा सांप। मारो तो, मारो-मारो!

बूढ़ा : खबरदार, कोई न मारना। पानी में बहकर आया सांप कुछ भी नहीं करता।

आघोणी : ओ मां, इसी ओर आ रहा है।

मंजुला : बि - ज -न।

बिजन : भास्कर!

भास्कर : डरो मत तुम लोग। जरा हट जाओ।

खीरेश्वर : शायद वह पेड़ पर चढ़ेगा।

(सबके अभिनय से यह प्रतीत होता है कि मंच की दाहिनी ओर के कोने से एक सांप आ रहा है। अब वह पेड़ की जड़ तक पहुंच गया है। बूढ़ा छलांग मारकर पेड़ की डालियों के जोड़ पर चढ़ जाता है, लाठी से तने

पर ठक्, ठक् मारता है, और बांयी ओर सामने की तरफ नेपथ्य में उंगली दिखाकर कहता है...)

बूढ़ा : यहां नहीं, यहां नहीं, अरे बेटे, जाकर उस पेड़ पर चढ़! जा-जा उस पेड़ पर चढ़ जा!

आघोणी : गया - गया - चला गया!

भास्कर : डरो मत भाभी! सांप चला गया - (सभी के अभिनय से पता चलता है सांप बायीं ओर सामने से होकर नेपथ्य में चला गया।)

बिजन : किसी तरह से उस सांप को मार डालो न!

बूढ़ा : खबरदार कोई न मारना। कोई न मारना! लेट हिम लिव! वह भी हमारे जैसा निराश्रित जीव है। लेट हिम लिव! (कहता हुआ बूढ़ा मंच की दायीं ओर सामने आ जाता है। मंजुला अब तक डर के मारे नेपथ्य के बायीं ओर सामने देख रही थी।)

मंजुला : वह जाकर उस पेड़ पर चढ़ गया। अगर वह उतर आये तो? (बायीं ओर से सावित्री आती है। बाल बिखरे हुए हैं)

सावित्री : मां- मां ....

आघोणी : क्या हुआ?

सावित्री : बापूकण को न जाने क्या हो गया है मा! जल्दी आओ न!

भास्कर : क्या हुआ? चलो तो , देखें। (जल्दी से बायीं ओर से भास्कर, आघोणी, खीरेश्वर और सावित्री का प्रस्थान! बूढ़ा उस ओर देखता हुआ कहता है--)

बूढ़ा : ऐसे दृश्य तो अनेक देखे है। भला मैं क्या करूं? मैं तो कुछ भी कर नहीं सकता। (मजुला पेड़ पर चढ़ते सांप की ओर देख रही थी)

मंजुला : बिजन, हमे चला जाना चाहिए था! काफी देर हो गयी।

बिजन : भास्कर अब इसी बात से क्यों चिपका हुआ है?

बूढ़ा : हां, तुम लोग जल्दी चले जाओ बेटे! मेरे इस टापू की जो तस्वीर ली थी न, उसे अखबार में अच्छी तरह से छापने के लिए कह देना! (भास्कर दौड़ा आता है)

भास्कर : बड़ी गंभीर हालत है भाभी! लड़के को तुरंत दवाई देने की जरूरत है।

मंजुला : क्या हुआ है?

भास्कर : सफेद-सफेद उल्टी, सफेद दस्त! लड़के को...

बूढ़ा : हैजा, हैजा हो गया है। (बायीं ओर प्रस्थान)

बिजन : हैजा?

मंजुला : कैसी भयंकर बात है, उसके जर्म्स आ जायें तो हमें भी हैजा हो सकता है न?

बिजन : अरे भास्कर, हैजा है या गैस्ट्रो - एंट्राइटिस? (भास्कर नाराज होता है)
भास्कर : शट अप् बिजन? (मंजुला से) भाभी, हमें उस बच्चे को जैसे भी हो टाउन ले ही जाना होगा!
मंजुला : क्या हमारे साथ?
भास्कर और नहीं तो किस पर? (आघोणी आती है)
आघोणी : हमें जीवन दान दो मां। बच्चे को जैसे भी हो अस्पताल ले जाना...
बिजन : क्या अंट-संट कह रही हो? हैजे के रोगी को हम अपनी लांच पर कैसे ले जा सकते हैं?
(मंजुला का मुंह सूख गया है।)
मंजुला : बिजन चलो, हम चलें। चलो भास्कर?
(आघोणी बड़े करुण भाव से मंजुला से कहती है।)
आघोणी : मां, बच्चे को छोड़कर न जाओ। मेरा पति गया, ससुर गये, बेटा गया, नाती गया, वंश में अब दीया दिखाने के लिए सिर्फ यही बच्चा भर है। उसे छोड़कर न जाओ मां।
भास्कर : ठहरो भाभी, मैं बच्चे को लेता आऊं। अब भी समय है। स्लाइन दिया जा सके तो हो सकता है कि बच जाये।
बिजन : भास्कर, सुनो! हम तो उसे नहीं ले जा सकते।
भास्कर : न ले जाने से कैसे होगा? क्या आंखों के सामने ही मरने के लिए छोड़ दोगे? (आघोणी से) चलो, लड़के को हम ले जायें? (भास्कर और आघोणी जल्दी से बायीं ओर चले जाते हैं।)
मंजुला : ओ भास्कर, सुनो-सुनो! (भास्कर लौट आता है)
भास्कर : क्या है?
(मंजुला भास्कर का हाथ पकड़कर विनय से कहती है)
मंजुला : चलो भास्कर! बच्चे को छोड़ो। अगर हमें भी हैजा हो जाय तो?
भास्कर : तुम कैसी बात कहती हो भाभी? भला हमें हैजा क्यों होगा?
बिजन : हो जाय तो क्या करोगे?
भास्कर : हो जाय तो इलाज करवाऊंगा। हम तो टाउन में रहते हैं। घर के पास ही अस्पताल है।
मंजुला : नहीं, नहीं वैसी बात न कहो। इधर वह सांप है, चारों ओर पानी ही पानी। दूर वह मरी हुई गाय है। सड़-गल कर बदबू आ रही है। इधर यह एक हैजे का रोगी! चलो, हम जल्द इस जगह से चले जायें।
(बिजन इसी बीच रस्सी खोलने में लगा है।)

भास्कर : लड़के को छोड़कर मैं नहीं जाऊंगा, भाभी।

मंजुला : भास्कर, हठ न करो। चलो हम चलें जायें।
(बिजन रस्सी खोलकर बुला रहा है।)

बिजन : चलो, चलो पानी बढ़ता जा रहा है। लांच को अगर कुछ हो जाय तो सर्वनाश हो जायेगा।

भास्कर : तुम लोग जरा ठहरो भाभी! मैं बच्चे को लेता आ रहा हूं। (बायीं ओर से प्रस्थान)

बिजन : भाभी, चलो हम चलें । भास्कर रहे।

मजुला : उसे छोड़कर जाने के बाद बुआ जी से भला क्या बताऊंगी?
(भास्कर को ऊची आवाज में पुकारती हैं)

बिजन : वह हमेशा ऐसे ही झंझटो में लगा रहता है। इसीलिए वह किसी के साथ मिल जुलकर रह नहीं सकता। अब तक कितनी बार उसने नौकरियां छोड़ी हैं, जानती हो? अपस्टार्ट कहीं का।
(भास्कर आता है)

भास्कर : जरा-जरा ठहरो भाभी! वह बच्चे को ला रही है। बिजन, रस्सी खींच कर नाव को जरा और इधर ले आओ!

मंजुला : हम लड़के को नहीं ले जा सकते भास्कर। हमारी भी तो फैमिली है। हैजे का एक रोगी...

भास्कर . तब तुम लोग चले जाओ। मैं नही जाऊंगा।

मंजुला : नहीं जाओगे तुम?

भास्कर . नहीं।

मंजुला : भला मैं बुआ जी को क्या बताऊंगी?

भास्कर : कह देना, सुना है, भास्कर पानी में गिरकर मर गया। तुम लोग ऐसे निर्मम हो। उस लड़के को वह ले ही आ रही है। (बिजन जाने के लिए तैयारी कर रहा है) बिजन, खबरदार, चले न जाना। देखूं, रस्सी मुझे दे दो, देखता हूं तुम लांच स्टार्ट कैसे करते हो...।
(भास्कर बिजन के हाथ से रस्सी पकड़ लेने के लिए झपट पड़ता है मगर उसके पहले ही बिजन छलांग मारकर दायीं ओर प्रस्थान करता है। जाते-जाते कहता है)

बिजन : चलो - चलो भाभी। (प्रस्थान)

मजुला : भास्कर! आओ चढ़ जाओ।

भास्कर : भाभी, भाभी...(लांच स्टार्ट करने की आवाज) जरा देर रुक कर जाओ भाभी। लड़के को अस्पताल जरूर ले जाना होगा। स्लाइन पाते ही वह

जी जायेगा। दुनिया में फिर रहने की सुविधा मिल जायेगी। जरा ठहर जाओ। (लांच जाने की आवाज) बिजन, बोट को वापस ले आओ, लड़के को अस्पताल जरूर ले जाना है। भाभी! बिजन! (लाच के निकल जाने पर उसकी आवाज धीमी होकर विलीन हो जाती है। भास्कर नेपथ्य के दायीं ओर दूर देखता हुआ स्तब्ध-सा रह जाता है। बायीं ओर से खीरेश्वर प्रवेश कर मंच पार कर भास्कर के पीछे खड़ा हो, उसके कंधे से ऊपर दूर की ओर देखता रहता है। धीरे-धीरे कहता है)

खीरेश्वर : चले गये?

(भास्कर को मानो होश आ जाता है। धीरे-धीरे कहता है)

भास्कर : हां, चले गये। (कुछ देर दोनों मौन रहते हैं)

खीरेश्वर : अब लड़के का क्या किया जाय?

भास्कर : उसे बड़े पीढ़े पर सुला दो।

(खीरेश्वर बायीं ओर चला जाता है। पृष्ठभूमि के सगीत में पानी की हरहराहट। मंच पर भास्कर स्तब्ध-सा खड़ा रहता है - सभ्यता के खंडहर के गवाह के रूप में।)

(बूढ़े का चुपचाप प्रवेश)

बूढ़ा : सूखे के मौसम में कोई-कोई नदी सूख-सूखकर टूट जाती है।

(भास्कर बूढ़े की ओर मुड़कर देखना है)

बूढ़ा : हमारी इस घाटी मे मानव-सभ्यता की नदी टूट गयी है।

(भास्कर बूढ़े की ओर देखता रहता है।)

बूढ़ा : जल्दी करो बेटे! पानी बढ़ता आ रहा है। बेड़े को ही ठीक कर लो जल्द।

भास्कर : क्या इस बेड़े से हम लड़के को बचा पायेंगे?

बूढ़ा : मगर उसके सिवा तो और कोई उपाय भी नहीं है। पानी बढ़ता आ रहा है। थोड़ी देर में यह आश्रय भी नही रहेगा।

(खीरेश्वर आता है।)

खीरेश्वर : दादा जी, रस्सी है क्या?

बूढ़ा : रस्सी से क्या करना है?

खीरेश्वर : केले का एक पौधा खुल गया है। उसे बांधना है।)

(भास्कर इसी बीच बायीं ओर नेपथ्य में पीछे के कोने में बेड़े की ओर देखता है।)

भास्कर : क्या केले का पौधा है?

बूढ़ा : नहीं केले का पौधा नहीं, बहकर आया हुआ काठ है। (खीरेश्वर

मे) जा तो, उस घर के पिछवाड़े ...। (तभी आघोणी बेतहाशा दौड़ती आती है)

आघोणी : लड़के की आखे उलट गयी है बाबा।

भास्कर : उसकी बीमारी बढ़ती जा रही है।

बूढ़ा : इधर तो पानी भी बढ़ता आ रहा है। अरे खीरेश्वर! जल्दी कर! जल्दी कर! (दूर-सामने उंगली से सकेत कर) दूर - वह पानी की लहर उमड़ती आ रही है ...।)

खीरेश्वर : दादा वह जल कुभियों की ढेरिया देख रहे हैं न।

भास्कर : क्या वह ब्रह्मपुत्र का पानी है?

बूढ़ा : वह लोहित का प्रलय - प्रवाह आ रहा है। अरे खीरेश्वर।अपना बेड़ा ठीक कर ले जल्द।

(खीरेश्वर का बायीं ओर से प्रस्थान)

भास्कर : भला वह अकेले कैसे कर सकेगा? ठहर, मैं भी आ रहा हू। (भास्कर भी बायीं ओर से चला जाता है।)

आघोणी : लड़के की आंखें उलट गयीं बाबा! इधर उसके मुह में देने के लिए भी पानी नहीं है। दवा नहीं, पथ्य नही, और तो और साफ पानी भी बूंद भर नहीं है बाबा!

बूढ़ा : क्या वह पानी मांग रहा है?

आघोणी : उसकी तो जबान ही बंद है बाबा! उसके होंठ सूख गये हैं, आंखों के चारों ओर काला पड़ गया है, उभरे गाल सिकुडकर बूढ़े आदमी के जैसे हो गये हैं।

बूढ़ा : हां, चार ही साल मे वह बूढ़ा हो गया।

आघोणी : उसके होंठ बिल्कुल सूख गये हैं बाबा। शायद उसे जरा-सा पानी चाहिए। बहू का दिमाग भी खराब हो गया। वह भी न जाने कैसे - कैसे कर रही है। बहू लड़के के मुंह में अपनी छाती घुसा दे रही है। कहती है मैं तुझे जरूर बचाऊंगी बेटे। मै तुझे यम के यहा से वापस ले आऊंगी। (आघोणी सिसकती है। भास्कर आता है।)

भास्कर : हो गया, हो गया, अब उस काठ को बांधते ही हम स्टार्ट कर सकेंगे। चलो, चलो, जल्दी करो। पानी बढ़ता आ रहा है। थोड़ी ही देर बाद यह टापू डूब जायेगा।

आघोणी : क्या इस बेड़े से हम अस्पताल पहुंच सकेंगे, बाबा?

भास्कर : कोशिश करेंगे। अंतिम क्षण तक कोशिश करेंगे। ओ दादा, चलो, चलो, बेड़े पर चढ़ जाओ।

बूढ़ा : नही, मुझे नहीं जाना है।

भास्कर : नहीं जाना है तुम्हें?

बूढ़ा : अगर मैं चला जाऊं तो मेरा यह राज्य कौन चलायेगा?

भास्कर : मगर तुम देखते नहीं पानी कैसे बढ़ता आ रहा है? कुछ देर बाद तुम्हारा राज्य भी डूब जायेगा।

बूढ़ा : इस बाढ़ की भला कोई ताकत है कि मेरे राज्य को डुबो सके? मैं इस टापू को छोड़कर नहीं जाऊंगा।

भास्कर : मगर यह टापू अगर डूब जाये तो तुम रहोगे कैसे?

बूढ़ा : मैं उस पेड पर रह जाऊंगा। मेरी सारी जमीन रेवेन्यु सेल में चली गयी। मगर वह पेड़ तो है न!

(खीरेश्वर आता है)

खीरेश्वर : हां, हो गया! रस्सी अब खोलनी होगी। मा चल! भाभी को और बापूकण को बेड़े पर चढ़ायें, चल।

(तभी नेपथ्य में सावित्री का आर्तनाद सुनायी पड़ता है- मां, ओ -ओ-ओ मेरे बेटे! साथ ही आघोणी पत्थर की मूर्ति-सी स्थिर हो जाती है)

भास्कर : क्या हुआ? क्या हुआ?

खीरेश्वर : शायद कुछ हो गया है।

बूढ़ा : शायद चला गया। (तीनों झटपट एक साथ बातें कहकर तेजी से बायीं ओर चले जाते हैं। आघोणी मंच पर स्थिर सी ठहरी रहती है। उसके अंदर मानो हजारों युगों की वेदना पुंजीभूत हो उठी है। मंच पर सारा प्रकाश घट जाता है। सिर्फ आघोणी के शरीर पर सामने से प्रकाश पडता है जिससे उसके सफेद कपड़े चमकते हैं। नेपथ्य में तेज करूण संगीत की धुन बजती रहती है, उसके साथ ही चीख-पुकार, रोना-धोना आदि एक साथ इस तरह से सुनायी पड़ते हैं--)

(नेपथ्य से)

सावित्री : अरे ओ, मेरे बच्चे, ओ बेटे। आंखें खोलकर देख बेटे।

खीरेश्वर : पानी-पानी! (नेपथ्य में)

बूढ़ा : नहीं - नहीं प्राण गये नहीं हैं।

भास्कर : नाड़ी चल रही है, देखो - देखो

(सावित्री का प्रवेश। बावली-सी आघोणी का शरीर पकड़कर सिसक-सिसककर रोती है)

सावित्री : लड़के को बचा लो मां। वह न बचेगा तो मैं कैसे जिंदा रह सकूंगी...मां... मां...मां...

(अघोणी निश्चल हैं। मानो सावित्री की बातें उसके कानों में पड़ी ही नहीं। नेपथ्य संगीत में एक सिसकी लगातार सुनायी देती है। बूढ़ा तेजी से प्रवेश करता है।)

बूढ़ा : हां, हां, जिंदा है, जिंदा है।

सावित्री : जिंदा है?

बूढ़ा : जिंदा है। यह बिटिया बेकार ही डर रही थी।

सावित्री : दादा जी, क्या मैं उसे यम के दरवाजे से वापस ला सकूंगी?

बूढ़ा : जरूर! क्यों नहीं ला सकेगी? तेरा नाम सावित्री नहीं है क्या?

सावित्री : अरे ओ मेरे बेटे!...(दौड़कर निकल आती है)

बूढ़ा : तुम अकेली यहां क्या कर रही हो मां। जाओ, जाकर बेड़े पर चढ़ जाओ।
(आघोणी को मानो अभी चेतना लौटी है। धीरे-धीरे कहती है)

आघोणी : क्या लड़का जिंदा है बाबा!

बूढ़ा : हां - हां - जिंदा है। जल्द जाओ! एक क्षण भी देर न करो।

आघोणी : इतने अथाह पानी में, विधवा बहू, बीमार लड़का, क्या ये सब बच पायेंगे बाबा?

बूढ़ा : इन्हें बचाना ही होगा। यही तो हमारा देश है। चारों ओर बाढ़ , पानी ही पानी, उसके बीच मरणोन्मुख भविष्य, विधवा वर्तमान- हमे अपने देश को बचाना ही होगा।
(खीरेश्वर का प्रवेश)

खीरेश्वर : मां, चल, चल, बेड़े पर चढ़ जा। आ - दादा जी!

बूढ़ा : मुझे छोड़! उस बेड़े पर इतने लोग नहीं आ सकेंगे। डूब जायेगा। तुम लोग जल्दी करो। जल्दी करो। पानी लगातार बढ़ता जा रहा है। वह जल कुंभियों की ढेरियां देखते हो न? कैसे प्रवाह में हहराती बहती जा रही है।
(खीरेश्वर और बूढ़ा अब मंच के सामने के हिस्से मे हैं। आघोणी पीछे रहती है।)

खीरेश्वर : वह काठ देख रहे हैं न दादा!

बूढ़ा : हां - हां, उससे मेरी महीने भर की रसोई बन जायेगी। सिर्फ रसोई बनाने के लिए कुछ नहीं है। हेइ, बाढ़ का पानी! खबरदार, एक कदम भी आगे न बढ़ना। एक कदम भी इधर न आना!
(नेपथ्य से भास्कर की पुकार सुनायी देती है— ओ दादा, रस्सी को ढीला कर दो जरा।)

बूढ़ा : हां-हां, कर रहा हूं। अरे खीरेश्वर, खोल दे - खोल दे!
(खीरेश्वर इसी बीच रस्सी खोलकर बूढ़े के हाथ देता है।)

खीरेश्वर : दादा,पकड़िये!

बूढ़ा : हां, तुम लोग चढ़ जाओ, देर न करो। जाओ...

आघोणी : आज ईश्वर ने ही हमें आपके यहां शरण दी थी बाबा!

बूढ़ा : अब तो देख लिया न कि वह शरण, बिल्कुल झूठ है, बिल्कुल छलना है। समय के प्रवाह में मेरा यह टापू भी चलाये जा रहा है। थोड़ी देर बाद ही डूब जायेगा। जाओ-जाओ- जल्दी करो। तुम लोग बेड़े पर चढ़ जाओ, क्विक्।

(खीरेश्वर और आघोणी बायीं ओर जाते हैं। नेपथ्य संगीत मे पानी की हरहराहट! बूढ़ा रस्सी को मजबूती से खींचे हुए है। कोई बात याद आते ही वह नेपथ्य की बायीं ओर देखकर पुकारता है --)

बूढ़ा : अरे ओ खीरेश्वर! ओ खीरेश्वर!

(खीरेश्वर दौड़ा आता है।)

खीरेश्वर : दादा जी!

(बूढ़ा एक हाथ से रस्सी पकड़े रहकर दूसरे हाथ मे तीन नोट खीरेश्वर के हाथ थमा देता है।)

बूढ़ा : ये रुपये लेता जा!

(खीरेश्वर विस्मित होता है)

खीरेश्वर : दादा जी, यह तो आपके पैसे है।

(बूढ़ा डाट कर कहता है)

बूढ़ा : अरे ले जा, ज्यादा बात न कर। इस पानी के बीच भला मै रुपये मे क्या करूंगा?

खीरेश्वर : दादा जी!

बूढ़ा : जा - जा - अब, वह पानी की लहर आ रही है, चढ़ जा, ये पैसे अस्पताल में काम आयेंगे। जा!

(खीरेश्वर दौड़कर निकल जाता है। बूढ़ा रस्सी को खींचकर पकड़े हुए है। नेपथ्य में बेड़ा डगमग हो रहा है। नेपथ्य की ओर देखता हुआ बूढ़ा चीखता है...)

बूढ़ा : होशियार, होशियार, रस्सी पकड़े रहना! ओ खीरेश्वर, खेवनी को ठीक कर ले, मैं छोड़ रहा हूं, देखना...

(रस्सी छोड़ देता है; बूढ़ा दूर देखता हुआ चीखकर कहता है) बहुत तेज प्रवाह है; अरे, अच्छी तरह उस लड़के को पकड़े रहना, नहीं तो यह भी गिर पड़ेगा। लोहित की प्रचंड बाढ़, तुम सब बिलकुल उसके मुंह में पड़े हो। हेलिकाप्टर फिर आता है! (बूढ़ा ऊपर देखकर चीखता है)

बूढ़ा : यह फिर आ गया। अरे हेलिकाप्टर, तू यहां से जाता है या नहीं! जाता है या नहीं! मेरे एयर-स्पेस में क्यों आ घुसा है? परमीशन लिया था? गैट आउट, गैट आउट।

(पास आते पानी को देखता हुआ) अरे बाढ़ के पानी! खबरदार, बढ़े न आना। एक कदम बढ़ाया कि मैं बूढ़ा तुम्हें ठीक से मजा चखा दूंगा। खबरदार, मेरे इस टापू पर चोट क्यों कर रहे हो। क्या इसे बिलकुल ढहा देना चाहते हो? (फिर हेलिकाप्टर की आवाज! बूढ़ा ऊपर देखकर चीखता है।) रेवेन्यू-रेवेन्यू-रेवेन्यू-अरे रेवेन्यू मिनिस्टर, देखा नहीं तूने, रेवेन्यू-सेल में (चारों ओर दिखलाकर) मेरी सारी जमीन चली गयी? (बाढ़ का पानी आकर पेड़ की जड़ को छू लेता है। बूढ़ा हटता हुआ पेड़ की जड़ के पास पहुंचता है।)

बढ़ी क्यों आ रही हो? तुम सब क्यों बढ़ी आ रही हो? अरी लहरो, तुम सब एक कदम भी न बढ़ना। तुम सबको एंट्री टैक्स देना होगा। यह मेरा राज्य है, यह मेरा टापू है। इस पर किसी का राइट नहीं है। (फिर हेलीकाप्टर की आवाज। बूढ़ा पेड़ पर चढ़कर चीखता है) अरे हेलिकाप्टर! गेट आउट, गेट आउट! (नीचे देखकर पानी से) अरे बाढ़ का पानी! जा-जा- पीठे हट जा! गो बैक, गो बैक!

(मंच का प्रकाश धीरे-धीरे घट जाता है। बूढ़ा कभी बाढ़ को और कभी हेलिकाप्टर को गाली दे देकर स्थिर हो जाता है, एक मूर्ति जैसा हो जाता है। अधेरे - से मंच पर पीछे की ओर से प्रकाश की एक किरण आकर बूढ़े और उस पेड़ को सेल्यूट करती है। प्रकाश की एक ओर किरण से दिखलायी पड़ता है कि मंच के बीच से जल कुंभियों की ढेरियां बहती जा रही हैं।

(पर्दा गिरता है।)

दैनंदिन

दुर्गेश्वर बरठाकुर

पात्र

धीरेन	-	पति
कमला	-	पत्नी
गणेश	-	घरेलू नौकर
सब्जीवाला		

(धीरेन बाहर से बड़े प्रसन्न मन से प्रवेश करता है। सोने के कमरे में कमीज खोलकर आंगन में हाथ-मुंह धोता है। फिर ड्रेसिंग टेबुल के पास बैठ प्रसन्न-मन बालों को संवारता है। स्नो और सेंट की शीशियों की खोज में ड्रॉअर खींचता है और उसमें जो चीजें हैं, उन्हें बेतरतीब कर देता है। तभी पत्नी कमला आ जाती है।)

कमला : हेह् हेह्। खैर आज पकड़े ही गये न! (उसी समय गणेश रसोई-घर के बरामदे में कोई चीज मुंह में भर रहा था। कमला उसे ही कह रही है–, ऐसा सोचकर वह रसोई-घर के अंदर घुस जाता है। मैं हमेशा सोचती हूं कि मैं तो सामानों को कितनी तरतीब से रखती हूं, इन्हें कौन बिखेर देता है? आज ही पता चला।

धीरेन : उंह, वैसा न कहो। हां, ड्रेसिंग टेबुल के ड्रॉअर में मेरे हाथ देने भर से सारी बदनामी मुझ पर ही न डाल दो। स्नो तो मैं लगाता ही नहीं। जिस दिन दाढ़ी बनाता हूं उसी दिन जरा-सा लगा लेता हू। वह भी तभी, जबकि पुराने ब्लेड को सीसे पर रगड़ना पड़े। ब्लेड नया हो तब तो कोई बात ही नहीं।

कमला : हां, हां, बात बना रहे हो। स्नो अगर लगाना ही पड़ता है तो लाने के लिए मुझे इतना कहना क्यों पड़ता है?

धीरेन : अरे अब वह सब छोड़ो! कहां रखी है शीशी, दो न।
(कमला ड्रॉअर खोलकर स्नो की शीशी निकाल देती है।)

कमला : हां, यह लो! (धीरेन उंगली के सिरे पर स्नो लेता है) उफ् राम, उस तरह धक्का मार कर लेने से भला कितने दिन चलेगा? हां, क्या खूब। सेंट की खुशबू से सब ओर गमगमा रहे हो? शीशी कहां रख दी? इस तरह से ढक्कन लगाये बगैर खुला रखने पर मुझे बडा गुस्सा आ जाता है...। मगर हां जी, आज भला इतना-सारा प्रसाधन, बनाव-सिंगार क्यों?

धीरेन : अच्छा बताओ तो, मैं अभी-अभी कुछ देर पहले कहां टहल रहा था? किस लिए टहल रहा था?
(अलगनी पर से कमीज लेकर पहनता है)

कमला : अब बात बदलने की जरूरत नहीं।

धीरेन : बात बदल नहीं रहा हूं। बात का जवाब निकालने के लिए ही तुमसे पूछ रहा हूं।

कमला : और कहां गये होंगे? उधार वाली दुकान में जाकर सिगरेट या तामोल-पान खाया-पीया होगा।

धीरेन : नहीं हुआ! उधार वाले दुकानदार ने पिछले महीने से ही सिगरेट, तामोल-पान देना मुझे बंद कर दिया है। बताओ, कहां गया था मैं?

कमला : मैं तो तुम्हारे पीछे-पीछे चक्कर लगाती नहीं फिरती न।

धीरेन : तो सुनो। कल शाम को तुम मुझे घंटे भर जो लेक्चर सुनाती रहीं, याद है न?

कमला : क्या वह बात झूठी थी? जोना दीदी ने हमें एक बार नहीं, दो बार खाना खाने का निमंत्रण दिया; क्या हमें भी उन लोगों को कम-से-कम एक बार खाना खिलाना नहीं चाहिए?

धीरेन : 'देयर यू आर- - तुम्हारी इसी बात पर मैं कल रात भर, आज सुबह, दोपहर सोचता रहा। उसके बाद सोचा, बात तो सही है। फिर दूसरी ओर से भी सोचा - मान लो कि जोना दीदी को हम एक बार खाना न खिलायें, या खाना खिला न सकें, तब क्या होगा? वह दुनिया भर से कहती फिरेगी क्या? मगर उन्हें खाना खिलाने के लिए भला हमें इतना सोच-विचार क्यों करना पड़ रहा है? फिर सोचा, इन बातो पर कोई युक्ति तर्क नहीं चलता। यह सब सिर्फ मुख-लज्जा की बात है, मुख्य रूप से औरत की!

कमला : ठीक है, तब बुलाने की जरूरत नहीं।

धीरेन : ठहरो! नाराज क्यों होती हो? वह सब बातें मेरे मन में उठी थीं! काम से तो मैं वैसा कुछ कर नहीं सकता! और मैं तो वैसा करता भी नहीं और सच कहूं तो जोना दीदी को खाना खिलाने के लिए ही मैं कुछ देर पहले चक्कर लगा रहा था।

कमला : इसका मतलब?

धीरेन : मतलब मैं बीस रुपये उधार मांग लाया।

कमला : किससे?

धीरेन : पिछले सप्ताह उधार का तकाजा करने जो आया मुझसे भेंट न होने पर 'यों ही आया था' कहकर तुम्हारे सामने मुस्कान फेंक कर जो चला गया था, उसी से।

कमला : छिः छिः! फिर उसी से जाकर मांगा?

धीरेन : बिना मांगे और चारा ही क्या है?

कमला : मैं पूछती हूं कि तुम किस मुंह से उससे मांग सके?

धीरेन : 'अभाव ही आविष्कार की जड़ है' यही बात है न? तब फिर? सीधे उसके पास जाकर कह दिया - शइकिया, आप तो शायद इसी बीच लोगों से मेरी बदनामी करने ही लगे हैं। करते रहिये, मुझे कोई एतराज नहीं, क्योंकि हर बात की एक सीमा होती है। शइकिया तो सुनकर चकित हो उठा। मैं लगातार कहता गया- देखिये शइकिया,

भगवान ने आप लोगों को धन-संपदा काफी दी है। मेरे जैसे दसों धीरेन यद्यपि आपका उधार चुका न सकें तब भी आप कौन-से गड्ढ़े में जा गिरेंगे, बताइये तो? तब शइकिया ने क्या कहा, जानती हो?

कमला : क्या कहा?

धीरेन : कहा- बरुआ, भला आप इतने सीरियस क्यों हो गये है? मैंने कहा--मैं सीरियस क्यों नहीं होऊं? मुझे आज और बीस रुपये चाहिए और मैं वह आपसे ही लूगा। इसके बाद अगर शइकिया बीस रुपये झट से अपनी जेब से निकाल कर दे दे तो मेरा दिल नाचने लगेगा या नही, बताओ?

कमला : (हंसकर) हां, नाचने लगेगा।

धीरेन . तो फिर सेंट लगाऊं या नही?

कमला : दिल के नाचने पर सेंट नही लगाते, जी।

धीरेन : तो क्या टूटने पर लोग सेंट लगाते हैं? तुम जब रोती रहो तो क्या सेट-स्नो लगा सकोगी?

कमला : अब बात बदलो मत। तुम्हे कहीं जाना है, यह बात साफ क्यों नहीं कहते?

धीरेन . हां, एक शादी में जाना तो है।

कमला : वही कहो, किसकी शादी?

धीरेन · हमारे दफतर के शर्मा की।

कमला : मेरे पूछने पर ही बताया। नही तो, हमे यह सब पता ही नहीं चलता। औरत हुई, इसी से क्या ये बातें भी हमें नहीं बतानी चाहिए?

धीरेन : यही तो। भला तुमने मुह क्यो फुला लिया? तुम्हें शादी में बुलाया नहीं, इसी से बताया भी नही। ये भी न जाने कैसे लोग हैं। अरे शादी में बुलाया है तो सबसे पहले महिला को बुलाओ। हमें बुलाकर क्या फायदा। हम जायेंगे और जलपान खाकर चले आयेंगे, बस।

कमला बस-बस! अब रहने दो।

धीरेन : अरे नही, विवाह मडप में बहू-बेटिया रहे, तो उन्हे देखकर ही मन खुश हो जाता है।

कमला : स्नो-सेंट लगाकर चले हो न। अब जाओ।

(कमला आंगन में निकल जाती है। बाहर तार पर टगे कपड़े उतारती है और उन्हें लेकर सोने के कमरे में आती है। इस आने-जाने और कपड़े-लत्ते सहेजने के साथ-साथ दोनो का वार्तालाप चलता रहता है।)

धीरेन : सुनो, मेरी बात पर विश्वास करो। तुम्हें साथ लेकर घूमने-फिरने, शादी-ब्याह में खाने जाने की मेरी इच्छा तो हमेशा रहती है। मगर

शादी-ब्याह में कोई अगर बुलाये ही नहीं, तो मैं क्या कर सकता हूं, तुम्हीं बताओ।

कमला : बुलाया भी होगा तो वह किसे पता है?

धीरेन : अरे, ऐसा क्यों कहती हो भला? अगर बुलाता तो क्या मैं तुम्हें ले नहीं जाता?

कमला : वह बात मुझे समझाने की जरूरत नहीं। मुझे साथ ले जाने पर कहीं कोई उपहार वगैरह देना न पड़े, इसीलिए तो तुम मुझे ले नहीं जाते। भला सच बात कहना इतना मुश्किल क्यों लगता है?

धीरेन : अब तो लगता है कि यह शादी का खाना, जहर खाना ही होगा।

कमला : ओ, जबान से कुछ कहें, तभी हो जाता है जहर! मेरे साथ कहीं निकलना होता है, तो सेंट-स्नो लगाना तो दूर की बात, दाढ़ी भी बनाकर नहीं चलते। अच्छे कपड़े तो पहनते ही नहीं।

धीरेन : अब अगर मेरी जबान खुले तो बात बुरी होगी।

कमला : जानती हूं, जब जवाब देते नहीं बनता, तो तुम ऐसे ही कहते हो।

धीरेन : जब कभी जी में आये, घूमने निकलना हो तो भला मैं अच्छे कपड़े-लत्ते पहनूं भी तो कहां से? उस दिन जैसा कि धोबी दूसरे की टेरीकोट की कमीज गलती से मेरे पहनने के लिए छोड़ गया था, वैसे तो वह हमेशा छोड़ नहीं जाता न। और दाढ़ी बनाने की बात कहती हो न। शनिवार को तो 'आन`प्रिंसिपल' मै दाढ़ी बनाता नहीं। और तुम घूमने अक्सर निकलती हो, बस शनिवार को ही!

कमला : भला शानिवार को न निकलूं तो किस दिन निकलूं? दूसरे दिनों को तो तुम छह बजे - सात बजे घर आया करते हो। क्या दफ्तर में काम तुम्हीं अकेले करते हो?

धीरेन : आजकल तो सिर्फ मुझे ही नहीं, मेरे जैसे जिनके घर में औरत है, उन सभी को दफ्तर से लौटने में देर होती ही है।

कमला : हां, होगी क्यों नहीं?काम किये बगैर दिन भर गप्प मारते रहने पर भला देर क्यों नहीं होगी? काम जल्दी निपटाकर जल्दी घर लौट आने की बात तो तुम लोग कभी सोचते ही नहीं।

धीरेन : सुनिये श्रीमती जी! नौकरी सरकारी हो, या गैर सरकारी, दफ्तर तो हमारा-तुम्हारा घर नहीं है न। हमारी इच्छा के मुताबिक दफ्तर चलता नहीं। वहां काम का एक निर्धारित रूप होता है, एक समय होता है।

कमला : वाह, वाह! निर्धारित काम कर देश को बिलकुल ऊपर उठा कर रख दिया है न तुमने। और हम सुबह से शाम तक इधर मक्खी मारती रहती

हैं न। फिर इसके अलावा मेहमानों का सेवा-सत्कार तो है ही। तुम लोग दस बजे से रात तक सिर्फ काम ही करते रहते हो क्या?

धीरेन : नहीं, किसी-किसी दिन तो चार बजते ही मेरा काम समाप्त हो जाता है।

कमला : तो फिर चार बजे घर क्यों नहीं आते?

धीरेन : यही तो कहता हूं, काम खत्म होने पर भी दफ्तर का एक निश्चित समय होता है। वह दफ्तर का डिसिप्लिन है।

कमला : यह तो कोई डिसिप्लिन है नहीं। बगैर काम के डेढ़-दो घंटे दफ्तर में गप्प मारते रहना कोई डिसिप्लिन नही है।

धीरेन : हम गप्प मारते रहते हैं, यह बात तुमसे किसने बतायी?

कमला : तो फिर समय कैसे बिताते हो?

धीरेन : वह समय मेरा अपना खास समय होता है। उस समय वहां रहती हो तुम, हमारा नन्हा मुन्ना, बीस रुपये वेतन वाला नौकर, रसोईघर, बाजार, उधार देने वाला दुकानदार, सब्जीवाला और डाक्टर। यानी घर के बारे में सोच-सोचकर ही मैं वह समय बिता देता हूं।

कमला : उसी तरह से घर में - दफ्तर में अगर घर के बारे में कुछ सोचते तो आज ऐसी हालत क्यों होती?

धीरेन : देखो कमला! रुपये-पैसे खर्च किये बगैर जिया जा सके, ऐसे कामों में चिंता करना, सोच-विचार करना ही पहला काम है। मेरे ऐसे सोचने के काम का भला तुम मजाक क्यों कर रही हो? चिंता तो मानसिक वस्तु है। कल एक घर बनाने की बात सोच रहा था। सोचने में क्या एतराज हो सकता है भला। हो सकता है कि कोई घर-मकान बनाना मेरी जिंदगी में नहीं भी हो सकता।

कमला : बात सुनकर तो अच्छा ही लग रहा है। बताओ तो, इस तरह से और क्या-क्या सोचते रहते हो?

धीरेन : सोच रहा था, इधर तुम्हारा अंग्रेजी मैगजीन खरीदने की मात्रा कुछ ज्यादा बढ़ गयी है क्या? सोच रहा था, ये मैगजीनें हमारे लिए विलासिता-सामग्री हैं या ज्ञान-भंडार हैं?

कमला : तुम कहना क्या चाहते हो, खुलकर क्यों नहीं कहते?

धीरेन : सोच रहा था, यह जो तुम वैसी ही कोई मैगजीन पढ़कर 250 ग्राम बढ़िया घी, कुछ काली मिर्च, दो अंडे, कुछ सिरका, छह चम्मच दही, 100 ग्राम किशमिश आदि से नयी-नयी जायकेदार चीजें बनाने की कोशिश करती

हो, और आखिर तक रसदार बनने वाली चीज लिजलिजी हो जाती है। मैं सोच रहा था, उसकी अपेक्षा अगर हमारे यहां यों ही पैदा होने वाली माटिकादुरी[1], नरसिंह[2], नन्हीं मानिमुनि[3], जिलमिल[4] आदि साग-पत्तियां हैं, उन्हें ही अगर सप्ताह में दो बार खाने लगें, तो उससे एक ओर जहां हमारी दाल का खर्च भी बच सकता है, साथ ही शायद पेट की मेरी पुरानी बीमारी भी मिट सकती है।

कमला : समझ गयी, इसका मतलब यह है कि तुम्हारी पेट की बीमारी के लिए उत्तरदायी मैं हूं, यही न? शादी के पहले तुम्हारा जैसा चेहरा था, मुझे याद है न। मैस में रहकर क्या-क्या खाते-पीते थे, मै जानती हूं। भात-दाल-भाजी, भाजी-दाल-भात। मुट्ठी भर मिर्च डालकर बनायी लाल तरकारी खा-खाकर बीमारी मोल ली, अब दोष हो गया मेरा। अच्छी बात है, आज से मैं रसोई बनाना ही छोड़ रही हूं। (रोती है)

धीरेन : माइ गॉड! तुम भला रोने क्यों लगीं? छिः छिः छिः! अरी सुनो तो। अपनी बात मैं 'विदड्रा' कर रहा हूं। सुनो, पेट की बीमारी तो मेरी मैस की ही संपदा रही है। तुम्हारी बनायी हुई चीजें खाकर मुझे कोई बीमारी तो नहीं हुई। अरी, सुनो, विवाह के पहले मै तो काफी दुबला-पतला था। विवाह के बाद काफी मोटा हो गया। मेरा वजन बहुत बढ़ गया। एक मन दस सेर हो गया। अरी–

(आंगन से गणेश पुकारता है)

गणेश : दीदी, सब्जीवाला आया है। (वह फिर बाहर चला जाता है)

धीरेन : अरी सुनती हो या नहीं, सब्जीवाला आया है।

कमला : तुम भी तो सुन रहे हो।

धीरेन : सब्जी तो हमेशा तुम्हीं लिया करती हो।

कमला : आज वह पैसे मांगने आया है। आज दूंगी - कल दूंगी, करते-करते आज सत्ताईस तारीख आ गयी। मैं तो उसके सामने मुंह नहीं दिखा सकती। दो महीने का उधार अस्सी रुपये हुए हैं। कम से कम पंद्रह रुपये तो उसे दे ही सकते हो।

धीरेन : जैसे-तैसे बातें न करो। दस से अगर बीस घटाया जा सकता तो इतने उधार-बाकी मैं गले से लगाये नहीं फिरता न। जाओ न उसे कुछ समझा दो।

---

1. एक तरह का जंगली साग। 2. एक तरह का पौधा। 3. एक तरह का साग। 4. एक तरह का साग।

कमला : मैं तो अब समझा-वमझा नहीं सकती। गणेश से कह दो, वह अगर हो सके तो उसे समझाये - वुझाये।

धीरेन : ठीक है, गणेश!...

गणेश : (बाहर से) जी, बाबू जी।

धीरेन : इधर आ तो।
(धीरेन दरवाजे के पास तक जाता है और गणेश आकर आगन में खडा हो जाता है।) एक बात है न! अब तेरे सामने छिपाना क्या है तू तो हमारे घर का ही है अब।

गणेश : हां, मैं तो ऐसा ही सोचता हूं बाबू जी।

धीरेन : तब फिर इस घर के लिए तेरी दीदी और मैं जिस तरह से सोचते-विचारते हैं, क्या तुझे भी वैसा ही करना नहीं चाहिए?

गणेश : क्यों नहीं चाहिए बाबू जी! मैं तो हमेशा सोचता रहता हूं- किस तरह से आप लोगों को एक-दो बार अच्छी तरह से पकाकर खिला सकू। किस तरह से छोटे भैया के और आपके कमीज- कपड़े धोकर बगुले के पंखों की भांति बनाये रख सकूं। जानते हैं, उस दिन आपकी बनियान धोने के लिए अपने पैसे से साबुन खरीद लाया था। आप लोग जब नहीं रहते तो कोई मेहमान अगर आ जाता है, तब भी मैं उन्हें खाली पेट नहीं लौटाता। अगर इसे अपना घर न मानता तो क्या यह सब करता कभी? कोई पड़ोसी कभी यह कह सकता है क्या कि मैं आप लोगों को पराया समझता हूं? आज सुबह की बात ही लीजिये; चीनी नहीं थी। मैंने क्या आप लोगों को बगैर चीनी की चाय पिलायी है?

धीरेन : नहीं तो!

गणेश : कितनी चतुराई से चीनी का इंतजाम किया, आप लोग भला क्या समझेंगे? मैं जैसे-तैसे लोगों से ये चीजें नहीं मांगता हूं न! मांगता हूं असली जगह!

धीरेन : कहां?

गणेश : वह, उन लोगों के यहां।

कमला : किन से मांगा, क्या बताया था?

गणेश : कहा था, मुझे चाहिए। यह बताया था कि हमें अपने राशन कार्ड की चीनी कल ही लानी चाहिए थी मगर भूल गये। अब अगर बाबू जी उठेंगे, तो उन्हें चाय कैसे दूंगा। मुझे एक कप चीनी दें तो! शाम को लौटा दूंगा।

धीरेन : क्या ऐसा कहते ही दे दी चीनी?

गणेश : दिये बगैर क्या रह सकते हैं? क्या उन लोगों ने मुझसे तीन डिब्बी चावल नहीं ली। स्टोव जलाने के लिए दियासलाई लेकर हमेशा आधी तीलियां रख लेते हैं।

धीरेन : समझ गया। हमारे न रहने पर तू अगर अपने घर के लड़के की भांति मेहमानों की सेवा करता है, मेरे कपड़े धोने का साबुन खरीदता है, हमें चीनी वाली चाय पिला रहा है, राशन के चावल से दोस्त की मदद करता है, तब तो एक और काम भी तू जरूर कर सकता है।

गणेश : कहिये बाबू जी! मैं कर सकूंगा।

धीरेन : इस सब्जी वाले को पैसे देने हैं। मेरे हाथ में पैसे हैं या नहीं, तुझे तो पता है ही।

गणेश : अगर पैसे होते आपके पास, तो क्या मैं दो महीने वेतन का पैसा बगैर लिये रहता क्या?

धीरेन : अब तू उस सब्जी वाले को समझा बुझाकर लौटा सकता है या नहीं? (बीच में सब्जी वाला "बबुआइन जी" पुकारता है।)

गणेश : यही तो मुश्किल है। वह तो मेरी जरा भी "केयर" ही नहीं करता। उस दिन चुन-चुनकर अच्छे आलू ले रहा था, उसने मेरे हाथ को जोर से पकड़ लिया था। नहीं तो जैसा कि पहले कह दिया करता हूं, वैसे ही कह देता हूं, बबुआइन की तबीयत अच्छी नहीं है, तुझे बाद में आने के लिए कहा है।

धीरेन : वैसे नहीं होगा। देखूं, तू हट जा।
(गणेश को धकियाता-सा वह बाहर जाना चाहता है। तभी कमला कहती है)

कमला : गेट के सामने सब लोगों को सुना-सुनाकर उससे कुछ भी कहने की जरूरत नहीं! उसे यहीं बुलवा लो।

धीरेन : गणेश, जाकर उसे बुला ला।
(गणेश बाहर जाता है और कुछ देर बाद सब्जीवाले को आंगन में बुला लाता है। कमला कमरे में घुस जाती है, गणेश रसोई-घर के बरामदे में चला जाता है।)

धीरेन : देश से लौटने के बाद तुझसे मेरी भेंट ही नहीं हुई सब्जी वाले।

सब्जीवाला : हां बाबू!

धीरेन : कैसा है हाल-चाल! इस वार तुम लोगों की तरफ कुछ बारिश तो हुई है। सामान-वामान कैसे हैं उधर?

सब्जीवाला : बहुत ज्यादा दाम है बाबू!

धीरेन : दाम भला कम कहां है? मुझे तो अब कोई चारा ही नहीं दिखायी पड़ता। तेरी मां जी को तो तेरे सामने आने में ही शर्म लग रही है। मैं कहता हूं, अरे इसमें शर्म की क्या बात है? उधार बाकी क्या हमीं खाते हैं? दुनिया भर के लोग उधार खाते हैं। है या नहीं?

सब्जीवाला : इसमें क्या है बाबू जी।

धीरेन : देखूं जरा, अपनी बही इधर दे तो। (बही देता है) यह देख तो, तेरी इस बही मे क्या पियन-चपरासी से लेकर साहब-हाकिम तक उधार खाने वाले लोगों के नाम हैं या नहीं?

सब्जीवाला : हां, बाबू। कितने सारे बाबू लोगों के नाम हैं।

धीरेन : तू तो जिस-तिस आदमी को थोड़े ही उधार देता है? जिसे तू विश्वास करता है, उसी को देता है न। अब मान ले कि मैं ही तुझे पिछले दो महीने का पैसा दे नहीं सका हूं, मगर इस लिए तो तू दूसरों के सामने यह नहीं कह सकता कि मैंने तुझे ठग लिया है, धोखा दिया है।

सब्जीवाला : बाबू जी, आप क्या बोलते हैं?

धीरेन : नहीं, मेरा मतलब है कि तुझे पैसे दे न पाने के कारण सचमुच मुझे बड़ा बुरा लग रहा है। (अचानक) तो मैं तुझसे बताऊंगा, तुझे कब आना है। समझा न।

सब्जीवाला : ठीक है बाबू!

(सब्जीवाला धीरे-धीरे निकल आता है।)

गणेश : (बरामदे से) बाबू मगर बड़े ठीक हैं, हां, उसे बिलकुल समझा दिया।

धीरेन : चुप रह। घर का लड़का कह दिया तुझे, इसी से बिलकुल सिर पर चढ़ गया।

(गणेश अंदर जाता है। मानो वह रसोई-घर में रसोई बनाने में जुटा हो)

धीरेन : (कमरे में आकर) सुनो, इस तरह बिहार के सूखे से लेकर मेरी अपनी हालत का विवरण दे-दे कर सब्जीवाले को, दूध वाले को समझाने का मेरा धीरज अब खोता जा रहा है। अब मुझसे ऐसा नहींही सकेगा।

कमला : तो फिर मुझे क्या करना है?

धीरेन : तुम एक फेमिली बजट बनाओ। और देखना - उस बजट में सिनेमा, रिक्शे से भरलु मुख आना-जाना, मेहमानों के लिए चाय, फेरीवाले के कपड़े, उधार सब्जी, उधार दूध, उधार अखबार, मैगजीन आदि कुछ न रहे।

कमला : वह बजट तुम्हीं बनाना। मुझसे क्यों कहते हो। इतने दिन तुम दफ्तर में घर चलाने के बारे में काफी सोच-विचार करते रहे हो। इसलिए यह बजट बनाने में तुम्हें सुविधा होगी।

धीरेन : गणेश!

गणेश : (रसोई घर के बरामदे से) हां, बाबू जी।

धीरेन : खाना क्या बन रहा है?

गणेश : तरकारी का शोरबा बन गया है। भात का पानी गर्म हो गया है। अब चावल डाल देने पर ही हो जायेगा।

धीरेन : मेरे लिए भात न बनाना। मैं विवाह के निमंत्रण में जाऊंगा।

गणेश : वहां खाना भी खा आयेंगे क्या?

धीरेन : खाना खा आऊंगा या जलपान खा आऊंगा, यह तुझे जानने की क्या जरूरत है?

(गणेश अंदर चला जाता है। मगर दर्शक उसे रसोई-घर में काम करते देखते हैं। धीरेन जूता पहनने के लिए अंदर जाकर फिर तेजी से निकल जाता है। जाते समय कमला को आवाज नहीं देता।)

(कमला के मन में अचानक कोई बात याद आ जाती है। वह ऊंची आवाज में "गणेश" कहती हुई दरवाजे पर आ जाती है)

कमला : गणेश! सुबह चावल मिला था या नहीं?

गणेश : हिस्से का चावल कहां जायेगा? ले आया हूं डेढ़ किलो।

कमला : और आटा?

गणेश : तीन किलो।

कमला : अच्छा है। अब आधा रोटी, आधा चावल बनेगा।

गणेश : तब तो दो ही दिन में सब खत्म हो जायेगा।

कमला : तो पूरी रोटी बनेगी। तरकारी की वह टोकरी इधर ले आ।

(गणेश टोकरी ले आता है)

कमला : ये चारआलू कल सबेरे के लिए, ये चार शाम के लिए, ये चार परसों सुबह के लिए।

गणेश : क्या कम नहीं होगा।

कमला : चुप रह। गोभी को बराबर चार टुकड़े कर चार वक्त के लिए। समझ गया न।

गणेश : समझ गया।

कमला : प्याज हर रोज एक-एक। अगर इस हिसाब में कोई हेर-फेर होगा। तो समझ लेना कि तेरी नौकरी खत्म और पहले का वेतन भी जब्त।

गणेश : हां, हां, ऐसा ही होगा। मगर दीदी! भात-तरकारी तो हो गया। थोड़ी-सी दाल नहीं चाहिए क्या?

कमला : क्या यह भी मुझे कहना पड़ेगा?

गणेश : जी नहीं, मगर कौन-सी दाल बनाऊं?

कमला : अपने सिर की। और कुछ कर नहीं सका न! सिर्फ खा सकता है। हर क्षण उसे बताना पड़ेगा, अमुक दाल लेना, दो-चार जीरा पीसकर डाल देना दाल में, तेल डालते वक्त देखना आग न धधक उठे, भात का करछुल भाजी में न लगाना। शरीर खुजलाकर वह हाथ नमक के बर्तन में न डालना, चम्मच से निकाल कर देना। जरा भी चैन नही। अब बना मेरा सिर।

गणेश : नहीं नहीं, दीदी - आ - आ - आपको पसंद है अरहर की दाल, बाबूजी को अच्छी लगती है मसूर दाल। एक खाते हैं ज्यादा मिर्च, एक को चाहिए खट्टा! भला अब मैं करूं तो क्या करूं?

कमला : ऐसे बड़बड़ाता न रह! एक ही थप्पड़ से आखे निकाल लूगी। वे सारे कप-प्लेट किसके धोने के लिए रख छोड़े हैं? मेरे लिए या बाबू के लिए।

गणेश : मैं ही धोऊंगा।

कमला : कब धोयेगा? (गणेश रसोई-घर के बरामदे मे पड़े कप-प्लेट उठाकर धोने के लिए ले जाना चाहता है) वह सब कहां ले जा रहा है?

गणेश : धो लूं इन्हे।

कमला : धो लूं इन्हें। कौन-सा काम पहले करना चाहिए अब इसके बारे में भी अनजान बन गया? अभी कितना बज रहा है?

गणेश : दाल कौन-सी?

कमला : मैं कह नहीं सकती।

(कमरे मे घुस जाती है। कमला दर्शकों को दिखायी नहीं पड़ती। गणेश सब्जी की टोकरी रसोई-घर में ले जाता है और वही बड़-बड़ाता है। बीच-बीच में वह कुछ डिब्बों में हाथ डालता है। इधर की चीज उधर रखता है। कप-प्लेट आदि सहेज कर रखता है।)

गणेश : अब बनाओ, क्या बनाते हो। कौन-सी दाल बनानी है, अब कोई कह ही नहीं सकता। अपनी मर्जी से बना दूंगा कुछ, तो खाते समय शुरू होगा गोल माल! कोई कहेगा - नमक ज्यादा हो गया, कोई कहेगा - मेरे लिए तो ठीक ही हुआ है। दीदी, बाबू जी से कहेगी, तुम्हे तो रसोइये के हाथ की बनायी रसोई हमेशा पसंद आती है, सिर्फ मैं जब बनाती हू तो तुमसे खाया ही नहीं जाता। अब बनाओ, क्या बनाते हो। रसोई अच्छी हो तो जैसी बात, रसोई बुरी हो तो भी वही बात! अरहर की

दाल बनाने पर जो बात, मसूर दाल बनाने पर भी वही बात। ठीक है, मसूर दाल भी चढ़ाये देता हू। जरा-सा नींबू निचोड़ दिया जाय तो भले ही दूसरे को अच्छी लगे या न लगे, मुझे ही अच्छा लगेगा। बोली का खट्टा भला और कितना खाते रहें। आज दाल का खट्टा ही खायें, जो हो! (अचानक दाल के कनस्तर में हाथ डालकर देखता है कि कोई भी दाल नहीं है) मर गया! अब भला करें तो क्या?

(अचानक कमीज पहन वह बाहर जाना चाहता है। तभी अंदर से निकल कर कमला उसे पुकारती है)

कमला : फिर कमीज पहन कर कहां निकल रहा है? बीड़ी पीने? मुंह से आवाज क्यों नहीं निकलती? जाता कहां है? अरे इसको यह क्या हो गया? ऐसा ठूंठ-सा खड़ा है मानो बिजली गिरी हो। अरे, पूछती हूं- दाल चढ़ायी है या नहीं?

गणेश : जी, दाल नहीं चढ़ायी!

कमला : अब तक कर क्या रहा था?

गणेश : दाल तो कोई भी नहीं है।

कमला : ऐसी बात है? वही लाने के लिए अब दुकान जा रहा था, क्यो? पैसा किसका है?

गणेश : मेरे हाथ में हैं।

कमला : तेरे हाथ में भला पैसे कहां से आये?

गणेश : बिहु में घर गया था न?

कमला : ओ, बाप से मांग लाया था?

गणेश : नहीं, उसी पैसे का आठ आना मेरे हाथ में बचा था।

कमला : यह बहाना बना दिया न तुरंत। निकल! अभी निकल जा तू। तेरे साथ मैं पुहकर[1] लगने जैसा हमेशा लगी नहीं रह सकती। खुद रसोई बनाऊंगी, खुद ही खाऊंगी। ढाई रुपये किलो की दाल, उसके दो ही दिनों बाद खत्म। अरे - क्या चबा कर खाता है तू? निकल, कहती हूं न निकल जा। बाहर हो जा!

(कमला उसे लगभग धकिया कर निकाल देना चाहती है तभी बाहर से धीरेन आता है। धीरेन को गणेश से लगभग धक्का-सा लगते-लगते रह जाता है।)

---

1. अशुभ क्षण में मृत्यु होने पर लगने वाला दोष।

धीरेन : ओ रे, क्या यह आदमी मुझे बिलकुल धकिया कर ले जायेगा? भला इसे क्या हो गया?

कमला : वह बाहर ही रहे। आखिरी क्षण में कहता है, दाल नहीं, तेल नहीं, नमक नहीं। कोई भी चीज अगर सही समय पर लाने के लिए वह कह सकता-

गणेश : कल शाम को तो आपने ही दाल निकाल दी थी? आज सुबह भी माप कर दी थी आप ही ने! अब भला मुझे कैसे पता चले कि दाल नहीं है?

कमला : भला देखो तो इसकी बात! अब मैं ही इसके लिए जिम्मेवार हुई...

धीरेन : वहां ठूंठ-सा खड़ा क्या कर रहा है? अंदर जा! (गणेश रसोई घर में चला जाता है।) कमला, जरा अंदर आना। (दोनों कमरे में जाते हैं) इसीलिए मैं तुमसे कहता हूं न। या तो रसोईघर उसे ही सौंप दो पूरी तरह, या तुम अपने जिम्मे रखो! एक ही माद में दो शेर नहीं रह सकते।

कमला : रसोईघर में जाने से क्या होता है?

धीरेन : कुछ नहीं होता। उसमें सब जा सकते हैं।

कमला : बस-बस, इस तरह से शह दे-देकर नौकर को तुमने सिर पर चढ़ा दिया। अब बात-बात में वह सीधा मुंह पर जवाब देने वाला हो गया है। क्या मै इस घर की मालकिन नहीं?

धीरेन : ओह, तुम तो बातों को तिल का ताड़ बना रही हो। असली समस्या पर आओ न! भला मैं घर कितनी देर रहता हूं? घर के सभी कामो पर तो तुम्हीं नजर रखती हो। इस बारे में तुम पूरी तरह से स्वतंत्र हो।

कमला : तो मैंने कौन-सी गलती की है?

धीरेन : यही, आज जो चुल्हे पर चढ़ाते समय दाल नहीं है इसका पता चला। मान लो, अगर ऐसी स्थिति, तुम्हारे-मेरे बीच हुई होती तो कौन किसे बाहर निकालता? बताओ तो?

कमला : इसका मतलब है कि उसका कोई दोष नहीं, तुम यही कहना चाहते हो?

धीरेन : ऐसी बात नहीं। मैं तो यह कहना चाहता हूं कि अगर वह कल शाम को या आज सबेरे दाल के डिब्बे में हाथ डाल सकता तो शाम के लिए दाल है या नहीं, जरूर बता सकता। मगर वह मौका तुमने उसे दिया कहा? दूसरी ओर तुमने भी कुछ नहीं कहा; इसी कारण यह गड़बड़ी हो गयी।

कमला : बड़ा अच्छा हुआ। उसे और ज्यादा सिर पर चढ़ा लो। अब मैं उससे जबान खोलकर कुछ कह नहीं सकती! अब इसी कारण उससे क्यों नहीं कहते, मेरा ही दोष है - वह आकर मुझे दो थप्पड़ लगाये।

धीरेन : अरे, भला तुम्हें यह क्या हो गया?

कमला : बस, बस हो गया। अब इस घर में या तो वह रहे या मैं रहूंगी!

धीरेन : सुनो कमला, नौकर से झगड़ा करने के कारण पत्नी को पति घर से निकाल दे, ऐसी मिसाल कहीं नहीं मिलती। कहानी-उपन्यासों में भी वैसी बात तुमने कही सुनी नहीं होगी। इसलिए वह सब छोड़ो। और दूसरी बात यह है कि गणेश को खदेड़ दो। कहो, तो उसे अभी दो-चार थप्पड़ मारकर निकाल दूं ? मगर उसके जाने के बाद दफ्तर से लौटने पर जब यह दिखायी पड़ेगा कि तुम्हारा चेहरा खरबूजे जैसा फूला हुआ है; क्रोध के मारे थाली कटोरी निकाल कर धोती रहोगी, दिन के दो बजे तक घर लीपोगी! खर्च घटाने के बहाने एक ही दिन रजाई के खोल से लेकर, मच्छरदानी, बिस्तर-चादर सब कुछ सिझाकर धोने लग जाओगी! (कमला की रुलाई बढ़ जाती है) ओ, हर दिन जो हुआ करता है, वह शुरू हो ही गया - अरे, भले ही वह नौकर हो, फिर भी उसे कुछ तो आजादी देनी चाहिए। समझी न! लगातार उसके पीछे लगी रहकर उसके अपने-पन की भावना को तुम्हीं नष्ट कर रही हो।

कमला : आज से मैं जबान नहीं खोलूंगी। अगर खोलूं तो मेरे नाम कुत्ता पाल लेना।

(कमला अब बिस्तर पर जा चढ़ती है। धीरेन कपड़े बदलकर अंदर ही कुछ इधर-उधर कर कमरे से निकल आता है और आंगन में खड़ा हो जाता है। वहां भी कुछ देर कुछ सोचता है। उसके बाद रसोईघर के पास जाकर गणेश को आवाज देता है।)

धीरेन : गणेश!

गणेश : (निकलकर) कहिये बाबू जी!

धीरेन : दाल नहीं थी, तो फिर क्या बनाया तूने?

गणेश : दूकान तो जा ही नहीं सका। दाल तो नहीं बनायी।

धीरेन : कोई रसदार तरकारी-सब्जी बनायी है या नहीं?

गणेश : जी हां, बनायी है - झिंगी और धुंधली[1] की रसदार तरकारी।

धीरेन : मेरे लिए तो भात नहीं ही बनाया होगा न?

गणेश : जी, आप तो कह गये थे न कि विवाह में जा रहा हूं, खाना नहीं खाऊंगा, इसीलिए भात नहीं बनाया।

---

1. एक प्रकार की सब्जी

धीरेन : अच्छी बात! हो जायेगा। अच्छा, यह तो बता, तेरी दीदी ने खाना खाया या नहीं।

गणेश : जी, नहीं खाया।

धीरेन : तू वहीं क्यों नहीं दे आता खाना। जा, दे आ वहीं मेज पर।

गणेश : मगर डर है, कहीं नाराज न हो जायें।

धीरेन : जा - जा - चिड़ियाघर के किसी बाघ-शेर को खाना देने नहीं जा रहा है न! डरने को भला क्या है?

(गणेश रसोई-घर के अंदर घुस जाता है और क्षण भर बाद कमला के लिए कमरे की मेज पर खाना रख जाता है।)

गणेश : (दबी जबान से) दीदी जी, खाना रख दिया है!

धीरेन : (बाहर से) अरी...खाना रख दिया है, उठो। खा लो! यों गुस्सा किये रहने से कुछ होता नहीं है।

कमला : नही खाऊंगी मैं खाना। तुमसे कौन बोलता है?

धीरेन : मुझसे कौन बोल रहा है? पहले भी कई बार 'नहीं खाऊंगी खाना', ऐसा कहकर बाद को खाया है, इसीलिए अनुरोध करता हूं। भला खाने ने कौन-सी बुराई की है? उठो, खा लो।

(क्षण-भर सन्नाटा। रसोई-घर के बरामदे मे है गणेश! सोने के कमरे के दरवाजे पर है धीरेन। धीरेन अंदर झांक कर देखता है, पत्नी बिस्तर पर से हिलडुल ही नहीं रही है। धीरे से वहां से हटकर फिर पहली जगह आ जाता है।)

धीरेन : गणेश! आजकल हर वेला में हमारे यहां चावल कितना लगता है?

गणेश : जी, ढाई डब्बे से ही हो जाता है।

धीरेन : दोपहर का भात कभी-कभी शाम तक के लिए बचा रहता है या नहीं?

गणेश : जी, बचा तो रहता नहीं।

धीरेन : हां, कैसे बचा रह सकता है? चावल इतना महंगा हो गया है, किसी तरह खींच-तानकर ही तो चलना होगा न। आजकल जमाना बड़ा बुरा आ गया है। आज अभी-अभी विवाह-घर मे जाकर देखा कि दिया जा रहा है बुंदिया के कुछ दाने और एक-एक समोसा। और लोग भला करें भी क्या, चारा भी तो है नहीं।

गणेश : और मैंने तो सोचा था, बाबू जी ने जबकि कहा है कि आज खाना नहीं खाना है, तब तो विवाह-घर मे ही ठीक से नाश्ता-खाना खा-पीकर आयेगे। खैर बाबू जी, न हो तो मुट्ठी भर भात बना ही दूं।

(कमला बिस्तर पर से कान लगाकर सुनती है)

धीरेन : रहने दे, अब इस रात को फिर से भात बनाने की जरूरत नहीं।

गणेश : नहीं तो मेरे हिस्से का ही आप खाईये।

धीरेन : और तू?

गणेश : मैं चिउड़ा-टिउड़ा कुछ चबा लूंगा।

धीरेन : रहने दे, रहने दे, मुझे उतनी भूख-ऊख तो है नहीं। नहीं तो एक काम कर। उसी में से तू थोड़ा खा और थोड़ा मैं खा लेता हूं। सिर्फ रात भर की ही तो बात है न?

गणेश : ठीक है। यही अच्छा होगा। (गणेश खाना लाकर बरामदे की मेज पर रखता है। धीरेन उसमें से थोड़ा-सा भात निकाल लेता है) और जरा-सा लीजिये बाबू जी!

धीरेन : हेइ, इतने जोर से क्या चीख रहा है? बस।हो गया,अब और मत देना। (अचानक एक आवाज सुनकर) तेरी दीदी आ रही है क्या? जरा देख तो!

गणेश : (देखकर) नहीं उठी हैं वह! तरकारी ली नहीं आपने?
(गणेश देता है)

धीरेन : अरे, इतना क्यों दे रहा है भला।
(वह भात जैसे ही मुंह में डालना चाहता है, कमला उठकर धीरेन के पास आ जाती है। धीरेन दंग रह जाता है। गणेश अदर चला जाता है।)

कमला : उसके हिस्से का खाना जो खाने चले हो, भला मेरी उस थाली के भात ने क्या बिगाड़ा है? क्या मेरे हिस्से का खाना बांटकर खा नहीं सकते?

धीरेन : जरूर खा सकते हैं। खा क्यों नहीं सकते। सिर्फ हिम्मत होनी चाहिए।

कमला : कैसी हिम्मत?

धीरेन : मान लो, जैसे मुझे तुमसे कहना पड़ेगा कि विवाह-घर में मेरा कुछ विशेष खाना हुआ ही नहीं। हालांकि पहले मैंने मना किया था खाना बनाने के लिए। पर अब मुझे भूख लगी है। मगर अब इस रात को भात बनाने की जरूरत भी नहीं। हां, क्या तुम्हारे हिस्से का खाना ही बांटकर नहीं खा सकते?

कमला : मगर अब वह हिम्मत मिल गयी है या नहीं।

धीरेन : हां, मिल गयी है।

कमला : तो फिर चलो कमरे में।
(आगे-आगे कमला और पीछे-पीछे धीरेन, दोनों आकर कमरे में मेज

पर रखा खाना बांटकर खाने लगते हैं। दूसरी ओर गणेश दुविधा में पड़ जाता है। धीरेन को दिया हुआ खाना फिर अपनी थाली में डाल लेता है और बीच में पर्दे की फांक से धीरेन और कमला को देख जाता है। अखिर में कहता है--)

गणेश : बाबू जी, तब यह भात मैं ही खा लूं?
(धीरेन, कमला दोनों को हंसी आ जाती है।)

धीरेन : हां-हां-खा! (उसके मुंह से भात के दो चार दाने छिटक कर कमला की देह पर पड़ जाते हैं।)

कमला : धत्।

(पर्दा गिरता है।)

पियली फुकन

नगांव नाट्य समाज

पात्र

जन्मि फुकन पियली फुकन	बदन फुकन के पुत्र
नारायण	पियली का नौकर
मणिराम	दीवान
हरनाथ बरुआ	दारोगा
दुतिराम	अंग्रेजों का असमिया दारोगा, एक अधिकारी
धनंजय पियली बरुआ धनुधर उदय सिंह	पिथली फुकन के सहकर्मी
कर्नल कूपर	अंग्रेजों का नायक शिवसागर का जूनियर कमिश्नर
न्यूविल मेथी	अंग्रेजों के सहायक अधिकारी
पादरी	अंग्रेज धर्म प्रचारक
टाम	नीग्रो नौकर

खासिया सियम, गारो गाम, मिरि गाम, चिंफौ गाम, नगा लड़का, भक्त, बंगाली पेशकार, सिपाही, जनता, भड़ैत, ढोल बजाने वाला, मृदंग बजाने वाला, ओजा पाली, तोपची, तीर चलाने वाला आदि।

सुचिता	पियली फुकन की पत्नी
लवणी	पियली की बिटिया

पियली फुकन की मां, गुड़गांव की नचनी आदि।

खासिया, गारो, मिरि, चिंफौ	असम की जनजातियां
सियम - खासिया राजा	गाम - मुखिया

राजा-मैदाम (कब्रगाह)

(कृष्ण एकादशी! राजा की कब्रगाह! दूर पीछे की ओर दिखौ नदी। कब्रगाह से सटकर एक बकुल का पेड। दो-चार बकुल फूल कब्र पर पड़े हैं। कब्रगाह एक ओर से टूटी है। कब्रगाह खोदकर सामान चुरा ले जाने की निशानी है।

परदा उठने से पहले ही किसी की रुलाई की आवाज आती है। परदा उठते ही आवाज दूर चली जाती है। समय– रात का आखिरी पहर। नारायण और पियली फुकन का प्रवेश। नारायण के हाथ में एक मशाल है। चेहरे पर आतंक का भाव। नारायण के पीछे उद्विग्न-चित्त पियली फुकन! दोनों का प्रवेश लगभग साथ-साथ होता है। नारायण सिर्फ कुछ आगे है। पियली फुकन अपंग है। दो बैशाखियो के सहारे चलता है। रंगमंच पर प्रवेश करते ही नारायण पियली के पीछे खडा हो जाता है - और गरदन उठा कर कब्रगाह की ओर कुछ देखता है।)

पियली : नारायण, कहां? इस कब्रगाह में तो कोई है नहीं। हालांकि मैंने अपने कानो से सुना यहां कोई रो रहा है। नारायण, क्या तूने नहीं सुना?

नारायण : सुना क्यों नहीं मालिक। गांव के लोग भी यह बात जानते हैं कि आज दो-चार दिनों से राजा की कब्रगाह पर कोई आधी रात को रोया करता है।

पियली : हां, मैंने तो खुद साफ-साफ सुना- मानो किसी औरत की रुलाई हो। नहीं-नहीं नारायण-तू जरा ठीक से देख न। (दोनों एकटक दूर नजर डालते हैं) वह.. वह आखिर क्या है? (दोनों कुछ दूर आगे बढ़ जाते हैं) वह पेड़ के नीचे... छाया की भांति। जरा अच्छी तरह देख तो नारायण--मुझे कोई भ्राति निश्चय हो नहीं हुई है।

(दोनों एकाग्र मन से उस ओर बढ़ते है। नारायण कुछ और आगे बढ़ जाता है।)

नारायण : मालिक! डर लगता है कि कुछ बुरा न कर डाले। (नारायण और दो कदम आगे बढ़ाता है। खड़े होने की जगह से पियली संदेह से देखता रहता है। अचानक किसी चीज पर नजर पड़ते ही नारायण झट से दौड़कर पियली के पास आ जाता है) मालिक, मालिक! वही-वही देखिये न! लग रहा है हिल-डुल रहा हो। वही... वही... दूर हटता जा रहा है।

पियली : सचमुच, नारायण! वह तो छाया नहीं, आदमी है।
(नारायण छुटकारे की सांस लेकर पीछे की ओर मुड़-मुड़कर देखता हुआ डरता-डरता आगे बढ़ता है)
नारायण, तू मशाल लेकर तेजी से उसका पीछा कर! वह देख, हमें देखकर भाग रहा है।

नारायण : आखिर यह आदमी है या नहीं, मालिक!

पियली : हां, हां, आदमी है, आदमी। तू जा तेजी से। (नारायण तेजी से आता है। नारायण के जाने की दिशा में कुछ देर वह देखता रहता है। उसके बाद दुविधा में पड़ा हुआ लगता है) रात के आखिरी हिस्से में राजा की कब्रगाह में रुलाई।
(दो कदम आगे बढ़ते ही, किसी चीज से ठोकर लगती है। वह बैशाखी से अच्छी तरह से कुरेद कर देखता है।)
अरे, देखता हूं कि राजा की कब्रगाह खुदी हुई है। हां-हां समझ गया। नारायण का कहना सच है। नारायण उसे पकड़ नहीं पायेगा। उसकी सामर्थ्य ही नहीं। कब्रगाह में सेंध मारी। कब्रगाह पर व्यभिचार। कब्रगाह पर म्लेच्छ फिरंगियों के कदम। छह सौ साल पहले कब्र में सुलाये गये इंद्रवंशी स्वर्ग देवों[1] की आत्माओं की चिरंतन वेदियो वाली कब्रगाह को आज अपवित्र कर गोरों ने व्यभिचार किया। लोगों ने एक बार भी विरोध नहीं किया। एक उंगली तक नहीं उठायी; इसी कारण आज देवी असंतुष्ट है। देवी की रुलाई है--
(तेजी से नारायण का प्रवेश)

नारायण : पकड़ नहीं पाया मलिक।

पियली : हां, तू तो पकड़ पायेगा ही नहीं नारायण।

नारायण : मैं उसके समीप पहुंचकर जितनी तेजी से जाता, वह छाया उतनी ही छिप जाती। मशाल के उजाले में अचानक एक झलक भर दिखाई पड़ी, काले कपड़ों में एक औरत - उसके बाल बिखरे-से हैं। उसे पकड़ने के लिए मैं दौड़ तो गया, मगर हाथ उस तक पहुंचने के पहले ही वह दिखौ में कूदकर ओझल हो गयी। मालिक मुझे तो ऐसा लगता ही नहीं कि वह कोई आदमी है।

पियली : आदमी नहीं रे नारायण, वह है देवी।

नारायण : (डर के मारे चौंक कर) देवी! अशरीरी! ओ हरि-हरि।

पियली : हां, देवी है। देश में महामारी- व्याधि के समय में आकाश से अगर

---

1. आहोम राजाओं के लिए संबोधन!

पुच्छल-तारा गिरता है, फिर गोरे विदेशी जब इंद्रवंशी स्वर्ग-देवों की कब्रें अपवित्र करें, तो भला देवी क्यों न रोयेगी? नारायण, देश में- अमंगल छा गया है? यह अमंगल और ज्यादा होगा।

(कुछ देर सोच कर) सुन नारायण, तू अभी-अभी घर लौट जा।

नारायण : और मालिक, आप?

पियली : मैं कुछ देर बाद आ रहा हूं। तू घर पहुंचकर नैवेद्य की एक शराई[1], दान-दक्षिणा और पान-तंबूल से अच्छी तरह सजाकर एक दीपक के साथ देवालय ले जाना। बड़े ठाकुर से कहना, बरफुकन के यहां से आया है।

नारायण : और आप यहां अकेले! (अचरज से)

पियली : हां, मैं यहां कुछ क्षण अकेले रहना चाहता हूं, तू जा- मैं जो कह रहा हूं, कर।

नारायण : नहीं मालिक, ~ड़ दस देवताओं का राज्य है न, इसी कारण कह रहा हूं।

(नारायण का प्रस्थान। पियली व्याकुलता से इधर-उधर घूमकर अचानक कब्रगाह के सामने हाथ जोड़कर कहता है)

पियली : इद्रवंशी आहोम के वंशज, स्वर्ण-भूमि असम के अंतिम स्वतंत्र स्वर्ग-देव; तुम्हारे राज्य में हमारे पितृ-देव बदन ने बर्मियों को बुलाकर खुली छूट दे दी थी। देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक उन सबने अशांति की आग जलाकर घर-घर में हाहाकार मचा दिया। उस देशद्रोही पापी को अपने जीते-जी दंड न दे सके, इसी कारण तुम्हारी अतृप्त आत्मा उस बदन के बेटे-बेटियों के वंशजों को दंड देने हेतु आज भी खोज रही है। स्वर्ग-देव मैं आया हूं, अगर पिता बदन सजा पाने योग्य हों, तो वह सजा मुझे ही दो। गड़गांव के न्यायासन पर विराजमान होकर देश के प्रभु, स्वर्ग-देव; अपनी इस विद्रोही प्रजा का न्याय-विचार करो; मेरा उद्धार करो!

(दूर से गीत गाते भक्त का प्रवेश)

भक्त (गीत)

सोने के असम में छोड़ा बर्मियों को
छोड़ा नंदन में हाथी–

---

1. एक असमिया पात्र, जिसमें देवता आदि के लिए नैवेद्य आदि दिये जाते है।

बड़े राज भवन में छोड़े नाग- अजगर
आ घेरते घोर रात आधी–
रे बदन, कैसी की तूने बरबादी!

पियली : कौन हो तुम, रात के इस अंतिम प्रहर में कब्रगाह में आकर बदन की बदनामी गा रहे हो?

भक्त : बदन की बदनामी नहीं गा रहा, बेटे! इस कब्रगाह मे एक आह ही छोड़े जा रहा हूं। (पियली के पास जाकर) बेटे, देख रहा हूं कि तुम भी रो रहे हो। रोओ- जितना हो सके रोओ। मगर सिर्फ अकेले एक आदमी के रोने से ही नहीं होगा - दो के रोने से नहीं होगा, समूचे देश के सैकड़ों प्रजाजनों को युगों-युगों तक रोना पड़ेगा। एक आदमी के आंसुओं की एक बूंद से स्वर्ग-देव की आत्मा शांत नहीं होगी। मेरी दुखिया जननी का दुख नहीं मिटेगा।

पियली : भक्त! (कुछ पास जाकर) कब्रगाह मे कभी किसी की रुलाई तुमने सुनी है? कौन रोता है?

भक्त : रुलाई तो सुनी है। मगर बेटे, यह कौन बता सकता है कि कौन रोता है, क्यों रोता है?

पियली : (कुछ सोचकर) क्या बर्मियों को लाने का अपराधी केवल बदन ही है, भक्त?

भक्त यह कैसे हो सकता है बेटे! सिर्फ एक ही आदमी के कारण कोई पूरा देश नहीं डूबता। देश के मुख्य स्तंभ(खभे)अगर मजबूत बने रहें तो क्या एक बदन के एक कुठार की चोट से वह बड़ा घर थोड़े ही गिर सकता है? मगर क्या करोगे बेटे? इस दुर्दिन के लिए सभी तो बदन पर ही दोषारोपण करते हैं।

पियली : भक्त! बाढ़ की तरह से सारे बर्मी आये और निकल गये। परंतु इस बार जो गोरे विदेशी आये हैं, वे बाढ़ की टहनियां ही पेड़ बनकर चारों ओर अपनी जड़ें फैलायेंगी, ऐसा ही लग रहा है।

भक्त : भला यह भी कोई कहने की बात है? इस बारे में संदेह करने का कोई

---

1 मूल गीत- सोणर असमते- मान मेलि दिलि
नंदनत मेलिलि हाती
बर कारे डाते- फेटि गोम मेलिलि
बेढे माजे निशा राति
ऐ बदन तई करिलि कि।।

कारण ही नहीं है। उन दिनों असम के नौजवानों ने लोहित को अपने खून से लाल कर विदेशी दुश्मनों को खदेड़ दिया था। मगर आज के असमिया लोगों ने सिर पर छतरी धरकर विदेशियों को स्वागत करते हुए अपने बड़े घर में बसा दिया है।

पियली : भक्त! कब्रगाह में रुलाई सुनकर यहां आकर क्या देखा, बता सकते हो? देखा कि राजा की कब्रगाह तोड़ी हुई है?

भक्त : अरे बेटे! कब्रगाहों को तो कभी का उजाड़ डाला गया है। शायद तुम्हें आज ही पता चला है? बेटे--

गोरे सौदागर ने मेला लगा दिया
गोरे लोहित की रेत पर
(तूने) सूद भी खोया, पूंजी भी खोई--
क्या होगा अब बाल नोच कर![1]

पियली : सुन रहे हो न स्वर्ग-देव, इन धोखेबाज सौदागरों ने तुम्हारे देश के सोने-चांदी, सामान आदि सेध मारकर उस पार ले जाकर ही नहीं छोड़े हैं, आज तुम्हारे देश पर सुदृढ़ रूप से अपना शासन जमाकर अटल हो जाना चाहते हैं। स्वर्ग-देव, इस दुर्दिन से तुम देश की रक्षा करो। अपने अंगरक्षक सेनाओ को आगे बढाकर फिरंगी विदेशियो को करतोया के उस पार खदेड़ आओ।

(नारायण बदहवास दौडा आता है।)

नारायण : मालिक! मालिक!

पियली : नारायण! क्या हुआ?

नारायण : बात तो गंभीर ही है मालिक! धनंजय और उसके साथियों ने बर्रे के छत्ते में हाथ डाल दिया।

पियली : अरे, तू सीधी बात क्यों नही कहता?

नारायण : अब वे ही लोग बतायेंगे मालिक! वही, वे लोग आ ही पहुचे हैं। मैं चला। देवालय में वह पूजा की शराई भी तो चढ़ानी है।

(नारायण का प्रस्थान)

(धनंजय, धनुधर, उदय सिह, पियली बरुआ और जन्मि का प्रवेश। जन्मि

---

1. शुकुला साउदे मेला पातिलेहि
शुकुला लुइ तरे बालि।
(तइ) सुदो हेरुवाली मूलो हेरुवाली
किहब छिंडि. ले चुलि!

के सिवा और सभी ने पोशाकें मजबूती से पहन रखी हैं। पियली फुकन आगे बढ़कर उत्सुकता से पूछता है)

पियली : धनंजय! क्या हुआ? तरातली छोड़कर क्यों चले आये?

धनंजय : तरातली से नहीं आया हूं फुकन। रिपुवा की जबान से पता चला कि गुवाहाटी से अंग्रेजों की बारूदी नाव कल दिखौ मुख पहुंचने ही वाली है। हम तुरंत तरातली से पचीस लोगों को जुटाकर लोहित तट पर पहुंच गये। देखा कि अंग्रेजों के झंडे वाली नाव लोहित में है।

उदय सिंह : हम लोगों ने अंधेरी रात में उस नाव की बारूद लूट ली।

पियली : बारूद! बारूद! – उसके बाद क्या हुआ?

पि. बरुआ : बारूद, फुकन बारूद! उसके बाद एक अजीब सी घटना हुई। जैसे ही हम बारूद लेकर दिखौ नदी से होकर भागने लगे, तभी बिजली जैसी तेजी से एक पांचै नाव आ पहुंची और अजीब चतुराई से अंग्रेजों की उस खाली नाव को मल्लाहों समेत लोहित के अंदर डुबो दिया। उस नाव से एक महिला की ऊंचे स्वर की आवाज सुनायी पड़ी, "अगर काम करना तो पूरा करना, अधूरा न छोड़ना। साप मारकर उसकी दुम मे जहर न छोड़ना।"

पियली : महिला? अद्भुत! वह पांचै नाव थी किसकी?

उदय सिंह : मगर फुकन जी, बारूद रखने का इंतजाम आज रात के अंदर ही करना होगा।

पियली : अभी है कहां?

धनंजय : नाव पर।

पियली : नाव पर किसे रख आये हो?

पि. बरुआ : गंभीर तोपची और उसके साथ बारह तोपची हैं।

उदय सिंह : फुकन जी! अगर एक नाव बारूद जमा रखकर भी दुश्मन को खदेड़ न सके, तो फिर तरातली में भला सीखा क्या? कंपनी के साथ कैसे लड़ेंगे?

जन्मि : पियली, और भी सुन। कल सुबह से ही यहां अनेक लोगों का जमावड़ा होगा। रात भर के अंदर ही बारूद की नाव को यहां से हटाने का इंतजाम करना होगा।

पियली : जी हां, हटाना ही होगा भैया। सुनो, तरातली के उदय सिंह के शिविर के उत्तर की ओर जो जरी का पेड़ है न, उसी की जड़ में गहरा गड्ढा खोदकर रात भर के अंदर ही गाड़ आओ। उदय सिंह यह जिम्मा तुम्हें

ही सौंप रहा हूं। तुम जाओ। जबकि बारूद हाथ की मुट्ठी में है, तुम नये उत्साह से हमारे तोपची लड़ाकुओं की मंडली को और निपुण बना डालो।

उदय सिंह : जबकि असली चीज हाथ की मुट्ठी में है, उदय सिंह का कलेजा अब मजबूत है। इस काम का पूरा जिम्मा मैं ले रहा हूं। फुकन जी, कांटे से ही कांटा निकालना होगा।

(उदय सिंह का प्रस्थान)

पियली : कांटे से ही कांटा निकालना है। ठीक कहा! धनंजय, धनुधर, जिस बारूद की कमी के कारण हम अब तक काम में आगे नहीं बढ़ सके थे, वही बारूद जबकि देवी की कृपा से हमारे हाथ की मुट्ठी मे है, तो अब चिंता नहीं। अब सभी कमर कसकर तैयार हो जाओ। अंग्रेजों के बारूद-घर को उड़ा देना होगा। उसके बाद उनसे लडकर हमारे देश की सीमाओं से बाहर खदेड़ने में ज्यादा समय नहीं लगेगा।

धनंजय : लेकिन यह कितने अचरज की बात है फुकन, कि हमारे ही देश के कुछ ऐसे ही बहके हुए खिताब चाहने वाले लोगों ने, उन्हीं का स्वागत करने के लिए अर्जुन गुरी में एक मेले का आयोजन किया है। क्या आपने – (धनजय की बात पूरी होने के पहले ही)

पियली : ओ, अर्जुन गुरी में मेला है? उसका उद्देश्य क्या है, कुछ जानते हो तुम?

धनंजय : क्या तुमने नहीं सुना? मणिराम काकति बरुआ ने अर्जुन गुरी में एक मेले का आयोजन किया है। मेले का उद्देश्य है, जनता की तरफ से कप्तान साहब की सराहना करते हुए धन्यवाद देना।

पियली : अर्जुन गुरी में मेला? हां मणिराम ने अच्छा जाल फैलाया है। आयोजन बड़ा सुंदर है।

धनंजय : मगर फुकन जी, क्या उस मेले में आपको आमंत्रित नहीं किया गया है?

पियली : हो सकता है कि मुझ जैसे बेकार आदमी की वहां कोई जरूरत ही न हो?

धनंजय : बेकार आदमी। आप हो गये बेकार आदमी और ये देश के दुश्मन हो गये सरदार! वाह! फुकन जी, एक खास समाचार और है।

पियली : और कौन-सा समाचार है?

धनंजय : मुझे संदेह है – शायद मणिराम को हमारे तरातली वाले समाचार का पता है।

पियला : पता है? मणिराम को तरातली का समाचार किसने दिया है?

धनुधर : मेरा जहां तक अंदाजा है, हरनाथ दारोगा ने ही यह समाचार दिया होगा।

पियली : हरनाथ दारोगा? क्या वही उन फिरंगियों का जासूस है?

पि. बरुआ : मेरे विचार से हरनाथ बरुआ हमारी गतिविधि पर नजर रखे हुए हैं। हम भी इधर आपसे मिले हैं, यह समाचार भी फिरंगियों के कानों में पड़ना असंभव नहीं है।

पियली : धनंजय, धनुधर, बरुआ! हमारे सामने भयंकर समय आ पहुंचा है। अगर इस समय हम होशियारी न बरतें तो हमारा सारा परिश्रम बेकार हो जायेगा। हमारी पूरबी और पश्चिमी सीमाओं के काम बहुत जल्द पूरा कर तलातली का शिविर उठा लेने का समय हो गया है। अब तुम लोग जाओ। उसका इंतजाम करो।

जन्मि : और तू पियली?

पियली : मुझे कुछ देर एकात में रहने दो।

जन्मि : कब्रगाह में अकेले-अकेले? आखिर तुझे हुआ क्या है पियली?

पियली : डरने की कोई बात नहीं भैया! कब्रगाह के भूत-प्रेत इस अपंग को गला दबाकर मार नही सकते।

जन्मि : तू क्या नहीं समझता है, पियली?

पियली : समझता हूं, भैया, समझता हूं। तुम्हारा प्यार, भाभी का आदर, दादी का स्नेह सब कुछ समझता हूं। और यह भी समझता हू कि मैं ही परिवार के सभी लोगों की अशांति का कारण बन चुका हूं। मगर रात को मुझे नींद न आये, बिस्तर पर लेटने पर शांति न मिले, घर में रहना भी कठिन हो जाये, तो भला कहिये, मैं करूं क्या भैया?

पियली : परंतु फुकन! आज कुछ दिनों से मैं देख रहा हू कि आप कुछ और ही हो गये हैं। रात को आपको नींद नहीं आती। भला कहिये तो जिसके हाथ में पतवार हो, अगर वही अस्थिर हो जाय, तो नाव सीधी कैसे चल सकती है?

पियली : आशंकित न होओ बरुआ! धारा के विपरीत नाव को संभाल न पाकर भले ही वह नाव को घाट से लगा न सके, पर वह ऐसे चला ले जायेगा जिससे कि नाव डूबे नहीं। हो सकता है कि पतवार वाले की मौत हो जाय, पर नाव डूबे नहीं।

धनुधर : फुकन जी, हम मरने से नहीं डरते। मैंने अनेक बार मौत का सामना किया है। (लंबी सांस लेता है)

धनंजय : यह बात सच है। मरने से जो डरता है, वह ऐसे कामों में कदम नहीं बढ़ाता।

पियली : मुझे सब कुछ पता है धनंजय। लेकिन सारे असम के लोग जिसे जहरीले नाग का बच्चा कह रहे हैं, उस सांप के बच्चे को हाथों में पाकर भी तुम लोगों ने, गोमधर की मडली ने उस दिन रात को हमें मार क्यों नही डाला?

पि., बरुआ : फुकन, असम के वन- जंगलों में बिना जहर के डेढ़ह सांपों की तादाद इतनी बढ़ गयी है कि उनमें अगर कम से कम एक दो जहरीले नागों के बच्चे भी रहें, तो लोग उन पर पैर रखने में हिचकेंगे।

जन्मि : अब यह सब चर्चा छोडकर, चलो हम सभी घर चलें।

धनंजय : हां, फुकन जी, इतनी देर तक यहां रहना उचित नहीं। आप भी चलिये।

पियली : ठीक है, तो फिर चलो। हां - जाने से पहले तुम लोगो को कुछ दिखला जाऊ! कब्रगाह की इस ओर आकर तुम लोग देखो।

(सभी कब्रगाह के पास जाकर देखते हैं)

जन्मि . अरे, कब्र तो टूटी हुई है? किसने तोड़ा है यह?

पियली : उन्हीं लुटेरे फिरंगियों का काम है भैया। सिर्फ कब्र तोडी ही नहीं है, कब्र की सारी चीजें, धन आदि लूट ले गये हैं। पवित्र कब्रगाह को अपवित्र कर डाला है। कब्र को मलेच्छों ने अपवित्र कर डाला। हमारे स्वर्ग-देव की आत्मा की चिर शांति के विश्राम में खलल डालकर देश में प्रेतों का नर्तन शुरू कर दिया है।

धनुधर ओह, असमिया लोगों के कैसे दुर्दिन आ गये हैं।

पियली : इसके अलावा मैंने आज क्या देखा, जानते हो? यहा आकर देखा कि दूर उस पेड के नीचे काले कपड़ो में विखरे बालों वाली एक औरत।

धनंजय, धनुधर,
पि. वरुआ : (एक साथ) औरत? काले कपडों मे?

धनजय : काले कपड़े पहने? लोहित मे दो खेल-नावे लेकर जिसने हमारी मदद की थी, वह भी शायद काले कपड़ों वाली औरत ही थी।

जन्मि · बात बड़ी अजीब-सी लग रही है। यह अज्ञात शुभाकांक्षी नारी आखिर है कौन?

पियली : वह कौन है, जानने के लिए नारायण दौड़ गया। पर नारायण के पास पहुंचने के पहले ही वह कगार से दिखौ के पानी मे कूदकर गायब हो गयी। तुम क्या सोचते हो धनुधर? तुम लोग क्या सोच रहे हो? भूत-प्रेत की जगह मानकर जिस कब्रगाह में रात की तो बात ही नहीं, दिन में भी कोई चरवाहा लड़का तक नहीं आता, वहां एक औरत भला अकेले

कैसे आ सकती है? अगर वह सचमुच औरत ही है, तब तो वह असाधाारण है, और अगर वह देवी है, तब तो वह देवी असंतुष्ट है।

धनंजय : देव-देवालय में पूजा-पाठ बंद हो गया है फुकन जी! स्वतंत्र स्वर्ग-देव के जमाने में जो देवालय धूप-धूने की सुगंध से दमकते रहते थे, आज उन देवालयों में देवी को फूल तक चढ़ाना बंद हो गया है, उनके सम्मुख एक दीपक कभी नहीं जलता। भला देवी नाराज क्यों नहीं होगी?

पि. बरुआ : छह सौ साल जिन स्वर्ग-देवों ने राज-पाट भोगा था, अगर उनके दिन सचमुच बीत गये हों, अगर उस पावन सिंहासन पर सचमुच मलेच्छ, फिरंगी आ बैठे हों, तो देखना इस देश में महामारी, अकाल आदि का राज होगा।

धनुधर : बरुआ जी, प्रजा अगर मिट जाती है, तो मिट जाये, देवालयों में अगर कोई लगती हो, तो लगा करे, केचाइखाती[1] देवी अगर आहोम स्वर्ग-देवों को उस सात स्तरों वाले सिंहासन से उतारकर, मलेच्छों को उस पर बिठाती है; और वैसा ही हो तो देवी रोती-चीखती फिरती रहे!

पियली : ऐसा न कहो धनुधर! आरती के मंगल-वाद्य से देवालय मुखरित हों, असम के खेत हरे-भरे हो उठें, गड़गांव नगर पुनः प्रजाजनों से भरपूर होकर समारोह-मुखरित हो उठे, हमारी कामना यही होनी चाहिए। असम-सोने का असम- प्रकृति की लीलाभूमि देवों के लिए भी दुर्गम, स्वर्गादपि गरीयसी- जन्मभूमि यह असम- जिसके लिए धर्म छोड़ा- भाषा छोड़ी, स्वजाति- स्वजनो को भूलकर नदी, वन, पर्वत, पार किये, हृदय-रक्त से स्नेहमयी जन्म-भूमि को उर्वर बनाकर फसलों के खेत बनाये, पत्थर तोड़कर देवालय बनाये- उस असम को फिरंगियों- मलेच्छों के हाथ छोड़कर उनकी सेवा करते रहने की अपेक्षा गले में फांसी लगाकर मर जाना सौ गुना वांछनीय है। नहीं, तुम सब लोग सुनो, देश-उद्धार की सुनहली योजना बनाने भर से ही कुछ होने वाला नहीं है। इस कब्रगाह में हमारे पूर्वजों के नाम पर आज हमें शपथ ग्रहण करनी होगी। आओ, आज हम सब इंद्रवंशी स्वर्ग-देवों के पावन नामों को स्मरण करते हुए-केचाइखाती भवानी के नाम प्रतिज्ञा करें–

(सभी घुटने टेकते हैं)

पियली : देश के लिए हम जीवन उत्सर्ग करेंगे।

सभी : देश के लिए हम जीवन उत्सर्ग करेंगे।

---

1. केचाइखाती या ताम्रेरबरी- पूर्वी असम की प्रसिद्ध देवी। कहा जाता है कि वह कच्चा मांस खाती है।

पियली : हम विश्वासघात नहीं करेंगे।

सभी : हम विश्ववासघात नहीं करेंगे।

पियली : हम फिरंगियों को खदेड़कर ही रहेंगे।

सभी : खदेड़कर ही रहेंगे।

पियली : स्वर्ग-देव, अपनी इस रंक प्रजा को स्वर्ग से आर्शीवाद दो कि इनका उत्सर्ग बेकार न जाय। हमारे जीवन का बलिदान ग्रहण करो–परंतु उस जीवन के बदले तुम असम में फिर स्वतंत्रता का गौरव वापस ले आओ। (सभी कब्रगाह को सिर नवा प्रणाम करते हैं। दूर गीत-वाद्य की आवाज सुनायी पड़ती है। आवाज क्रमश· समीप आती जा रही है। सभी उसी ओर देखते हैं।)

(नारायण का प्रवेश)

नारायण : मालिक, मालिक, इधर बहुत सारे लोग आ रहे हैं। हमारा छिप कर रहना ही अच्छा है।

(नारायण जिधर दिखता है, सभी उसी ओर देखते हैं)

पि. बरुआ : उस झाड़ी-जंगल की ओट में छिपे रहकर, चलो, हम इनकी गतिविधि पर नजर रखें।

पियली : चलो!

(नारायण के सिवाय और सभी का प्रस्थान)

(कब्रगाह के एक पेड़ के नीचे सिर निकाले नारायण बैठ जाता है और नाम गाने लगता है। बीच-बीच में उल्लू आदि की आवाज से चौंक उठता है)

नारायण : कृष्ण एक देव भयहारी
कालमाया रूप के अधिकारी!

(पुरानी असमिया ढंग की पगड़ी बांधे, चोगा-चपकन पहने, कतारो में कुछ प्रजाजनों का प्रवेश एवं प्रस्थान। कहारों के कंधों पर एक पालकी है। उसमें सगर मणिराम उस कब्रगाह को सम्मान प्रदर्शित कर पैदल जाता है। उसके साथ है दुतिराम)

दुतिराम : दीवान जी, यह कब्रगाह बड़ा सूना लगता है। है या नहीं?

मणिराम : कब्रगाह सदैव सूना होता है। शास्त्र में भी कहा गया है- 'श्मशानमेव रौद्रम'।

दुतिराम : परंतु एक बात है। पहले के कब्रगाह खड़े होकर मानो रजोगुण का प्रभाव

ही विस्तार किये हुए थे। आज के कब्रगाह तो लगता है कि रो ही रहे हैं।

मणिराम : भला रोयें क्यों नहीं? कब्रगाहों में दिवंगत स्वर्ग-देवों की प्रेतात्माएं ही विचरण करती रहती हैं। जीवन-काल में आत्मा का जैसा प्रभाव रहता है, मरने के बाद कब्र देने पर भी आत्मा के वैसे ही प्रभाव की छाया पड़ती है। (मणिराम की बात सुन नारायण डर के मारे चारों ओर नजर दौड़ाकर खड़ा हो जाता है) पहले के स्वर्ग जितेंद्रिय, प्रजावत्सल होते थे-परंतु आज के स्वर्ग-देव अक्षम, अकर्मण्य और स्वार्थी हैं। नहीं तो क्या आहोम राज्य का ऐसा परिणाम होता? भला आज प्रेतात्माएं बिना रोये कैसे रह सकती हैं? आहोम राज का सूरज अब डूब चुका है। अब आहोम लोगों का राज पाट पर बने रहना संभव नहीं।

दुतिराम : सच कहते हैं दीवान जी! न वह राम है न वह अयोध्या!

मणिराम : हां, अब चलो। देर करने की जरूरत नही। जाना भी काफी दूर है। (नारायण की खांसी की आवाज सुन) अरे, यह कौन है?

नारायण : जी, मैं हूं।

दुतिराम : अरे, कौन है रे तू?

नारायण : ए मै कौन हूं, अब कैसे समझाऊं? मैं पास के गांव का रहने वाला हू।

मणिराम : अरे तू भला यहां कर क्या रहा है। लोग अगर तुझे यहां देखें तो भूत-प्रेत समझकर डर जायेंगे।

नारायण : क्या आप भी डर गये हैं, मालिक? भला डरने की बात क्या है? आप लोग राजा बहादुर ठहरे, हिम्मत की भला कमी कहां है?

दुतिराम : अरे, तू यहां कर क्या रहा है?

नारायण : अजी, मेरी एक काली बछिया खो गयी है, उसे ही खोजते-खोजते यहां पहुच गया हूं। मगर कहां है वह? भूत-प्रेत की जगह ठहरी। बेचारी बछिया को कहीं उन सबने ही तो मार नहीं डाला?

दुतिराम : अरे, बछिया को मार डालना कौन-सी बड़ी बात है? अब कहीं तुझे भी गरदन मरोड़कर मार न डालें।

नारायण : अरे, यह आदमी उससे डरता नहीं। ईश्वर-कृपा से सब कुछ इसी धोती की गाठ में ही है। सिर्फ एक फूंक मारने भर की बात है। नहीं तो, ऐसे समय में इस तरह से अकेले ऐसे भंयकर स्थान में चक्कर लगाने वाले लोग भला हैं ही कितने?

मगर महाशय गण, आप लोग किस तरफ चले हैं? यहां तो बड़े-बड़े मालिक भी हैं, देखता हूं।

दुतिराम : अरे क्या तुझे पता ही नहीं? आज अर्जुन गुरी मे मेला है न!

नारायण : मेला? कैसा मेला?

(मणिराम और दुतिराम की बातों के बीच-बीच में नारायण 'हां, हां, ठीक है', आदि शब्द कहकर उनका भेद लेने के लिए सरल भाव से प्रशंसा करता जाता है।)

दुतिराम : दरबार है जी, दरबार! वहां साहब बहादुर लोग आयेंगे, बड़े-बड़े मालिक लोग जायेंगे और पर्वतीय मुखिया राजा लोग भी आने वाले हैं। साहबों को संतुष्ट करने के लिए नचनी के नाच-गानो का इंतजाम भी किया गया है।)

नारायण : ठीक है, होने दो। होने दो। असमिया लड़किया नाच-गाने कर अगर साहबो को खुश कर सकें, तो अपना सौभाग्य ही है। उन साहबों की हिम्मत- हौसला भी बढ़ेंगे। अच्छा बताइये तो किस कारण से दरबार लगाया जा रहा है।

दुतिराम : साहब सरकार को धन्यवाद देने के लिए। हमे तो इन साहबों ने ही उन नाचीज कुत्तों-बर्मियों के हाथों से उबारा हैं।

नारायण : तब तो हो गया –

मणिराम : अगर वे न आते तो असमिया लोगों की अर्थी उठती।

नारायण : अर्थी उठती, यह बात सच होने पर भी अगर हम सब में एकता होती, तो हमारे बीच भी बर्मियो को खदेड़ने वाले लोगो की वैसी कमी नहीं होती। आज भी जबकि हाथों में हेंदन[1] लिये मरघट में अकेले घूमने वाले लोग है, ईश्वर कृपा से अशरीरी भूत-प्रेत जिनकी राह छोड़ देते है। भला बर्मियों की बात ही क्या है? अरे, वे तो सामान्य आदमी ही ठहरे।

दुतिराम : तुम्हारा कहना सही है। मगर हमारे अपने बीच जो गड़बड़ी हो रही है, वह देखते हो या नहीं। हालांकि हमारे बीच भी आदमी हैं, फिर भी ये साहब जैसे गोरे हैं, मोटे ताजे हैं, अरे उन्हें तो देखते ही सलाम करने की इच्छा हो आती है, क्यों?

नारायण : हां- हां- सलाम करने की इच्छा तो होगी ही! अपने गुहाल की गाय और अपने बाड़े की घास में थोड़े ही मेल होता है? लेकिन एक बात पर तुम्हारी

1. तलवार

नजर गयी है या नहीं? साहबों की गोरी चमड़ी पर फोड़े-फुंसियों खुजली आदि का अड्डा है, यह तो उनके जरा पास जाकर ही देख सकते हो। ये फोड़े-फुंसियां बड़ी छुतहा बीमारियां है। हालांकि साहबों का कहना है कि फोड़े-फुंसियों में खुजलाहट होने पर खुजलाने में बड़ा मजा आता है। मगर डर है कि ये लोग यहां न जाने कितने दिन जमे रहें। यह तो सच है कि बर्मियों को इन लोगों ने खदेड़ दिया। मगर बाली के लिए जो बाण हैं, सुग्रीव के लिए भी वह ही बाण है— ऐसा ही लग रहो है।

मणिराम : अरे तू कहां का है रे! बातें तो तू बड़ी चुभने वाली करता है।

नारायण : जी हां, घर देखते-देखते बूढ़ा हो गया, अब क्या दो एक चुभने वाली बात भी कहना नहीं जानूंगा।

दुतिराम : अरे, सुनते हो या नहीं, बातें करते समय कुछ देखभाल कर, आदमी को पहचान कर बातें कहा करो! भले ही देश में राजा न रहे, पर क्या उसी से बडे अधिकारियों, मंत्रियों आदि की भी कोई मान-मर्यादा नहीं रह गयी?

(नारायण दुतिराम को झुक कर प्रणाम करता है)

नारायण : मालिक, मुझे कोई दोष न दें। 'अंधा आदमी ठहरा, जरा-सा समझा कर बताने पर ही जान पाता हूं। हमारी सात पीढ़ियों के घुटनों की चमडी अधिकारियों-मंत्रियों, रजवाड़ों को प्रणाम करते करते छिल गयी, तो अब और एक-दो को करने पर कौन-सी नाक कट जायेगी? मगर सही-सही समझ नहीं पा रहा हूं (मणिराम को दिखाकर) कि ये हैं कौन?

दुतिराम : ये हैं हमारे मणिराम दीवान! कलिता राजा!

नारायण : ओ! हरि-हरि। (प्रणाम करता है) जब वहां मालिक भी जा रहे हैं तब तो लगता है, लोगों का जमावड़ा भी कुछ ज्यादा ही होगा! तो फिर हम भी घर से जरा हो आते हैं। लगता है, मेला देखने लायक होगा। अच्छा, मालिक! अब और... (पैर पर गिरकर प्रणाम करता है)

मणिराम : अरे सुन, गोरे साहबो के बारे में जिन बातों का तूने आभास दिया है, हमारे मन में भी वैसी ही बातें जग रही है। मगर ये साहब तो हमसे सचमुच बहुत ऊपर हैं। उनको छेड़ना बहुत खतरनाक है, समझा?

नारायण : अब क्या कहें मालिक। जबकि आप लोग जैसे मूर्ख लोग ऐसी ज्ञानभरी बातें करते हैं तो फिर हम जैसे नीचे के लोगों का और क्या रह जाता है। अब तो यह शख्स भी जरूर अर्जुन गुरी के मेले में जायेगा।

(नारायण प्रणाम करता है। मणिराम और दुतिराम का प्रस्थान। नारायण कुछ देर मणिराम के जाने की दिशा में देखता रहता है।)

नारायण : साहबों को छेड़ना खतरनाक है। देखा, आज असम के इन बड़े-बड़े लोगों की जबान से भी यह बात निकल रही है। अरे, जिनकी आंखों के संकेत भर से लोगों के घुटने की हड्डी, आंखों की पुतलियां निकाल ली जाती थीं, जंगल के शेर भी जिनकी राह छोड़ देते थे, जंगली हाथी जिसके संकेत से वश हो जाते थे, पांचै नावें जिनकी आंखों के इशारे से चिड़िया की भांति पानी में उड़ती चलती थी, उनकी जबान से ऐसी भद्दी बातें! थू- थू- उ –

(पियली, धनुधर, जन्मि, धनंजय और पियली बरुआ का प्रवेश)

पियली : बात क्या है नारायण।

धनंजय : शरीरी थे या अशरीरी।

नारायण : जीते-जागते शरीरधारी ही थे (पियली फुकन से) जब तक ऐसे लोग रहेंगे, हमें लगता है कि सारी बाते विफल ही होंगी। ऐसे लोग- हुह, देश के कलंक! ऐसा गुस्सा आता है इन पर कि मन में आता है कि एक ही थप्पड़ से इंसान से शैतान बना दूं।

पियली : नारायण, तू यह सब किसके बारे में कह रहा है? क्या हुआ है?

नारायण : मालिक, और किसके बारे में कहू? यह कलिता राजा है या सलिता राजा, उसी के बारे में कह रहा हूं।

पियली : कौन कलिता राजा?

नारायण : अभी-अभी मणिराम दीवान, अपने नौकरों-कर्मचारियों के साथ मयुरा-पगड़ी लगाये, अर्जुन गुरी के मेले में जा रहा था- कहता है कि साहब को सलाम देने के लिए। यह भी कहता था कि साहब ऊचे होते हैं, बड़े हैं, गोरे-गोरे हैं- वे ही हम पर शासन करने के योग्य हैं। कहता है कि उन्हें छेड़ा नहीं जा सकता। कहता था कि असम का सूरज डूब चुका है। अरे मैं कहता हूं- "काल का काल आया विपरीत काल। हिरणा चाटे बाघ का गाल।" अरे, वे लोग भला कौन-सी लंका टापू से आये हैं? अरे, क्या ये साहब कोई अशरीरी भूत-प्रेत हैं? हुंह!

पियली : हम सब कुछ समझते हैं नारायण! मगर कोई भी बात हमें अपने कर्त्तव्य से विमुख नहीं कर सकती।

धनुधर : अच्छा मणिराम जा रहा है; और कौन-कौन जाने वाले हैं?

नारायण : सुना है कि सभी पर्वतीय गाम राजा भी आने जाने वाले हैं। हमारे देश के बड़े-बड़े मंत्री-पदाधिकारी भी जाने वाले हैं। और बाहर संप्रदायों के लोगों को भी आमंत्रित किया गया है। लगता है मेला कुछ बड़ा ही होगा। अब मेले में कौन आदमी कौन-सा अभिनय करे, सिर्फ यही बता नहीं सकता।

पि. बरुआ : घाटी में रहने वाले भेड़ों की तो बात ही नहीं- ये साहब पर्वतीय घात लगाये जंगली भैसों को भी नकेल लगाकर हाथ में करना चाहते हैं।

धनंजय : तब तो जाल बड़ा बनाकर ही फैलाया है।

नारायण : जाल बड़ा तो है ही, और घना भी है। रोहू बरारी की तो बात ही नहीं, पोठिया-मोकवा भी बचकर निकल नहीं सकतीं।

पियली : फिर भी प्रयत्न में कोई त्रुटि नहीं रखी जायेगी। धनंजय, धनुधर! तुम सभी तैयार हो जाओ। अगर जरूरत हो तो अर्जुन गुरी के मेले में ही विद्रोह करने में पीछे नहीं रहेंगे। तुम जरूर मेरी बात से असहमत नहीं होओगे। मणिराम दीवान जैसे लोग भी जबकि गोरे विदेशियो के सामने घुटने टेकने दौड़ गये हैं, तब तो समझ गया कि असमिया लोगों का और निस्तार नहीं है। फिर भी मशाल बुझने से पहले देश को इस तरह से प्रचंड रूप से प्रदीप्त कर दूंगा जिससे भले ही मेरे जैसे एक अभागे अंधे का जीवन भस्म हो जाय, तुम लोग बने रहोगे... फिर से इस देश को अंधा अपंग कभी नही बनने दूंगा।

(पर्दा गिरता है)

अर्जुन गुरी का मेला

(समय-अपराह्न। विशाल अर्जुन पेड़ के तले अनेक लोगों का समावेश। लोग जहां-तहां बैठे अपनी गांठों में बंधे सुपारी बांट-बूंट कर खा रहे हैं। पेड़ की एक ओर एक चंदोवा टंगा है। उसके नीचे ऊंचे-ऊंचे चबूतरों पर कई 'तामुली पीढ़े'[1] लगाये गये हैं। पीढ़ों पर गलीचे बिछे हैं। हर पीढ़े के सामने तामोल-पान की शराई रखी हुई है। हरनाथ बरुआ और दुतिराम बरुआ लोगों से पूछताछ कर रहे हैं और आवश्यक निर्देश दे रहे हैं। संप्रदायों के लोग अलग-अलग मंडलियों में आ रहे हैं। गायन-बायन[2], स्वांग भरने वाले, बिहु नाचने वाली नचनियां, ढोल बजाने वाले, ओजापालि[3] गड गांव की नर्तकियां, सभी एक ओर बैठे हैं। दूसरी ओर खासी-सियम[4] और गारो-गाम[5] बैठे हैं। इनके पास ही दो नगा लड़के खड़े हैं।)

हरनाथ : बरुआ, मिरि-गाम[6] तो अब तक यहां पहुंचे नहीं।

दुतिराम : हां, सीमाओं पर के राजाओं में तो हमारे सिंफौ-गाम भी अब तक पहुंच नहीं पाये।

हरनाथ : हां, हमारे भोग राम गाव बूढ़े को जरा दिखौ घाट तक आगे बढ़ जाने को जरा कहिये न। साहबों के पहुंचने में तो और ज्यादा देर नहीं है। उन लोगो के आने के पहले ही हमारे सभी लोग आकर अपने-अपने आसन पर बैठ जायें, इस पर आप जरा नजर रखें, बरुआ।

दुतिराम : ठीक है; मैं इतजाम करूंगा। (दुतिराम का प्रस्थान)
(दूर गायन-बायन के झांझ-मंजीरे, मृदंग आदि बजने की आवाज सुनायी देती है। साथ ही मणिराम का प्रवेश)

मणिराम : दारोगा साहब। वह देखिये, अधिकारी भी आ गये हैं। अलग-से उन्हें बिठाने का इंतजाम कर दे।

---

1. एक तरह का बड़ा पीढ़ा जिस पर सम्मानित लोगो को बिठाया जाता था।
2 गाने-बजाने वाले।
3. असम का प्रसिद्ध लोक नृत्य।
4 खासी राजा।
5. गारो मुखिया।
6 मिरि मुखिया।

(कुछ अधिकारियों का प्रवेश। हरनाथ और मणिराम उन्हें बड़ी आवभगत के साथ बिठाते हैं। अधिकारियों के साथ आये सेवक उनके बैठने के लिए गद्देदार गलीचे बिछा देते हैं। अधिकारीगण बैठ जाते हैं।)

हरनाथ : दीवान जी, साहबों के आने का समय हो गया है। आप अगवानी के लिए कुछ आगे बढ़ जायेंगे क्या?

मणिराम : हा- आगे बढ़ जाना उचित होगा।

(दो-तीन सेवकों के साथ मणिराम का प्रस्थान। कुछ ही देर बाद साहब के नीग्रो सेवक टाम का प्रवेश। लंबी काली ट्राउजर, काला वेस्ट कोट, सफेद लंबे हाथों वाली कमीज, गले में काली गुलबंद, जेब में चेन लगी जेब घड़ी। मेले में नयी-नयी चीजें, विविध पहनावों में सजे लोगों को देख, कौतूहल की दृष्टि से जापि[1], ढोल आदि को छू-छूकर देखता फिरता है। फिर साहब के लिए सजाकर रखी कुर्सियों को हिला-डुलाकर देखता है।)

टाम : आल राइट।

(तभी पर्वतीय सिंफौ गाम और मिरि गाम का प्रवेश। उनके साथ है दुतिराम। टाम तुरत सिंफौ गाम के पास जाता है। हरनाथ मिरि गाम को बिठाता है।)

हरनाथ : आइये, आइये गाम[2] जी! (मिरि गाम निश्चित आसन पर बैठता है।)

टाम : आर यू रेड इंडियन? (गाम के गले की मणिमाला दबाकर देखना चाहता है) हवाट् इज दिस? गोल्ड? गिव मी, गिव मी... (मणिमाला पकड़कर खींचता है। सिंफौ गाम को गुस्सा आता है, टाम को थप्पड़ मार, उसे पकड़ कर कहता है)

सि.गाम : धत् काला बिलाव कहीं का। गले में हाथ क्यों डालता है? हम सिंफौ गाम हैं; राजा हैं।

टाम : नो फियर। (हाथ बढ़ाकर) गिव मी माई फ्रेंड।

(गुस्से में गाम भाला तानता है। बात बिगड़ती देखकर हरनाथ बरुआ आकर बीच बचाव करता है।)

हरनाथ : यह क्या करते हैं, क्या करते हैं गाम जी। यह तो मजाक ही कर रहा है। आपकी चीज तो यह लेना नहीं चाहता न। यह नयी तरह की चीज देख रहा है, इसीलिए दबाकर देखना चाहता है। आगे-पीछे कभी ऐसी चीजें तो इन लोगों ने देखा ही नहीं हैं न।

(गाम बात समझकर खिल-खिलाकर हंस पडता है और मणिमाला

1. पत्तो आदि से बनायी असमिया छतरी।

2. मुखिया।

उतारकर टाम के गले में पहना देता है। टाम भी गाम का हाथ पकड़कर हंसता हुआ बिठला देता है। तभी एक बंगाली पेशकार का प्रवेश)

पेशकार : **देखुन, साहेबेरा** एइ आसछे। एदिके सब ठीक आछेत? एदेर के एकटु **सरे बसते** बलुन ना। आ- तोमरा कि जंगी रास्ता टा छेड़े बस ना... (हरनाथ से) लाल कपड़ा टा ठीक आछे त? दिनना एखनइ ठिक करे रेखे दिच्छि।[1] (दुतिराम साहबों के आने की राह में लाल कपड़ा बिछा देता है और पेशकार कपड़ा बिछाने में मदद करता है।)

टाम : (पेशकार से)मिस्टर! लो! साब कमिंग।

(पेशकार जल्दी-जल्दी चला जाता है।)

(नेपथ्य में झांझ-मंजीरे, ढोल, मृदंग आदि बजने की आवाजें आती हैं। गायन-बायन मृदंग, झांझ-मंजीरे बजाते हुए साहबों को अगवानी कर लाते हैं। गायन-बायन पहले प्रवेश कर बाजों की समाप्ति-सूचक सगीत लगाते हैं। साथ ही चार सशस्त्र सैनिक सैनिक-चाल से प्रवेश कर निश्चित स्थान पर सतर्क मुद्रा में दोनों ओर खड़े हो जाते हैं। उसके बाद मणिराम के साथ कर्नल कूपर, न्यूविल, पादरी और मेथी का प्रवेश। साहबों के आते ही सभा के सारे लोग खड़े हो जाते हैं और साहब लोग सबको नमस्कार कर सजे हुए आसनों पर बैठ जाते हैं।)

हरनाथ : (मणिराम से) दीवान जी! साहबों की अनुमति लेकर अब हमारा कार्यक्रम आरंभ करना ही अच्छा होगा।

मणिराम : ठीक है, दारोगा जी।

(अपने आसन से खड़े होकर कूपर को संबोधित कर)अब कर्नल साहब की अनुमति हो तो हम सभा का काम आरंभ कर सकते हैं।

कूपर : यस् यस् - बाइ आल मीन्स।

मणिराम : (निर्देश सूचक ढग से) दारोगा जी।

हरनाथ : सबसे पहले बिहु नृत्य। हमारे नौजवान शुरू करें।

(ढोल, पेंपा[2], टका[3], ताल ले बिहु नाचने वाले लड़के आते हैं)

मणिराम : कर्नल साहब, यह है असमिया जातीय उत्सव बिहु के अवसर पर गाया जाने वाला आनंद-उल्लास का नृत्य-गीत।

---

1. देखिये, साहब लोग अभी आ रहे है- इधर सब कुछ ठीक है न? इन्हें जरा हटकर बैठने को कहिये न। आह! तुम लोग कैसे जगली हो। राह छोडकर बैठो न। (हरनाथ से) लाल कपडा ठीक है न? दीजिये न अभी ठीक से लगा देते हैं।
2. असमिया तुरही।
3. बांस या लकडी का बना दो फट्टो वाला बाजा।

(लड़के ढोल, पेंपा, टका, ताल बजा-बजाकर बिहु गीत आरंभ करते हैं और ढोल की एक-एक ताल पर एक नौजवान बिहु नृत्य करता है। नृत्य-गीत समाप्त होने पर कूपर के निर्देश से पेशकार बिहु-मंडली को इनाम देता है। सभी प्रणाम कर अपनी-अपनी जगह बैठ जाते हैं।)

मणिराम : इसके बाद।

हरनाथ : इसके बाद बहुवा-गीत[1]। हां, तो बहुवा काई[2]!
(बहुवा उठकर बहुवा गीत गाता है। खत्म होने पर इनाम ले अपनी जगह जा बैठता है।)

हरनाथ : अब ओजापालि होगा। ओजा काई[3]।
(ओजापालि उठ कर हाथ जोड़ प्रणाम कर खड़े हो जाते हैं)

मणिराम : कर्नल साहब। यह ओजा हमारे देश में गीत और भंगिमा से ईश्वर का गुण-गान करता है।
(ओजापालि ओजा गाना शुरू करता है। खत्म होने पर इनाम ले अपनी जगह बैठ जाता है।)

हरनाथ : अब सत्रीया नाच दिखाया जायेगा।
(सत्रीया नृत्य होता है। नृत्य समाप्त होने के पश्चात)

हरनाथ : नगा लड़के। अब तुम लोग आओ।
(दो नगा लड़के हाथों में भाले लिये आते हैं)

मणिराम : कर्नल साहब। ये लोग नगा लड़के हैं। नगा पर्वत से आये हैं। ये अपने यहां के जातीय नाच दिखायेंगे।

कूपर : दैट इज वेरी नाइस। लैट दैम बिगिन।
(नगा लड़के नृत्य करते है। बीच बीच में सारे साहब 'नाइस', 'ब्रेवो', 'स्पलैंडिड' आदि कह कर प्रशंसा का भाव प्रकट करते हैं। नाच के अंत में नगा लड़कों को पुरस्कार दिया जाता है।

मणिराम : इसके बाद?

हरनाथ : अब गड़गांव की नचनी का गीत होगा।

मणिराम : ये हैं गड़गांव की नर्तकी। स्वर्ग-देवों के जमाने में उन्हें अपने नाच-गानों से ये हमेशा संतुष्ट करती थीं।
(ढोल बजाने वाला अपनी जगह पर रहकर ढोल पर ताल शुरू करता है। नर्तकी धीरे-धीरे गीत गाने लगती है और अंग-भंगी से नाच शुरू करती है।)

---

1. हास्य-रस के गीत।
2. हास्य रसिक भाई।
3. ओजा पालि लोक नृत्य-गीत का मुख्य व्यक्ति।

नाचनी : (गीत)

ढोल की धुन से नाच नहीं सकती ओ
उल्लास न नाचे शरीर-
केतेकी चिड़िया नहीं अब पुकारती
मलय- वायु करे न अधीर!
मेरे मीत- मलय वायु करे न अधीर!
हरिणी कहां है रोती
झरने के समीप हरिणी न आती ओ,
पड़ती न पानी में परछाई।
मेरे मीत- पानी में न पड़ती परछाई!
रंघर[1] की फर्श पर नचनी के
बजते नहीं नुपूर-
कालिया की तुरही में बजते नही
अब विलास के सुर-
देवालय की वेदी पर दीपक न जलता
सुनायी न देता है नाम[2]-
मेरे मीत- सुनाई न देता है नाम-[3]

---

1 रघर - आहोम राजभवन।

2 नाम - कीर्तन।

3 गीत (मूल असमिया)

ढोल रे छवते नाचोने जुठे ऐ
उलाहत ने नाचे गा,
केतेकी चगये बिननि नोजोरे
न वले मलया बा,
मोर वाधे- नबले मलया बा,
हरिणी क'त नो कान्दे-
जुरि रे पार लै हरिणी नाहे ऐ
न परे पानी ते छाँ
रघरर मजियात नाचनीर ने बाजे नुपूर
कालियार पे' पाते ऐ नेबाजे बिलासर सुर
दौलट थापनात बन्ति न ज्वले,
नामरे नुशुना रा,
मोरै वाधै नामरे नुशुना रा।।

(नृत्य-गीत आदि चलने के बीच ही कूपर खड़े होकर दूरबीन से दूर-दूर तक देखता है। दूर एक पालकी आती देख न्यूविल को दूरबीन थमा देता है और उंगली से संकेत कर पूछता है--)

कूपर : हू इज दैट कमिंग आन दि पालांकिबन?

(दोनों उठकर अच्छी तरह से देखते हैं। साथ में मणिराम और हरनाथ भी जाते हैं।)

न्यूबिल : मस्ट बी सम वन आफ हाई सोशल पोजीशन
व्हाट इज दैट कमिंग साधुनियर?

मणिराम : (भलि-भांति देखकर) शायद यह पियली फुकन है।

कूपर : पियली फुकन।

मणिराम : यही बर्मियों को लाने वाले बदन का बेटा है पियली। यह अपंग है। पालकी के बगैर चल-फिर नहीं सकता।

कूपर : (न्यूबिल से)
आई सी, वी मस्ट कीप एन आई आन दिस मैन।

(कूपर और न्यूविल बैठ जाते हैं। मणिराम हरनाथ को एक ओर बुलाकर पूछता है–)

मणिराम : दारोगा जी, क्या पियली फुकन को यहां बुलाया गया था?

हरनाथ : मुझे पता नहीं। मेरी योजना में तो उसका नाम तक नहीं था। (पियली फुकन आकर जनता में मिल जाता है।)

हरनाथ : दीवान जी! नृत्य-गीत का आयोजन यहीं समाप्त करते हैं। अब हमारे पर्वतीय राजा गण साहब सरकार को अपनी-अपनी भेंट देंगे।

मणिराम : अच्छी बात, कर्नल साहब; ये लोग हमारे असम की सीमाओं पर के पर्वतीय राजा हैं। असम के विशाल वक्ष की संतानें। हर आदमी ऊंचे-ऊचे वंश का वंशज है।

(कूपर उठकर हर पर्वतीय राजा से हाथ मिलाता है। मणिराम क्रम से सबका परिचय करवाता है। कूपर के साथ न्यूविल और मेथी भी जाते हैं। उसके बाद सब लोग अपने-अपने आसन पर विराजमान होते हैं।

मणिराम : साहब, ये लोग आप लोगों से दोस्ती करने के उद्देश्य से दूर-दूर से इस मेले में पधारे हैं। आप लोगों के लिए अपने-अपने यहां से कुछ खास-खास उपहार भी लेते आये हैं। मान्यजनों को उपहार प्रदान करना हमारे देश का दस्तूर है। आशा है, इन लोगों की भेंट स्वीकार कर कर्नल साहब राजा गणों का आनंद बढ़ायेंगे।

कूपर : दैट इज आलराइट। लेट देम कम। टाम!
(टाम आकर कूपर के सामने खड़ा हो जाता है।)

टाम : यस सर!

कूपर : हैव नॉट वी ब्राट द कास्केट ऑफ सिगरेट्स।

टाम : यस सर!
(सिगरेट की पेटी लाकर टाम कूपर के समीप खड़ा हो जाता है)

मणिराम : दारोगा जी! खासिया सियम को आने दें।
(हरनाथ खासिया सियम को कूपर के पास आगे बढ़ा ले जाता है और मणिराम कूपर का परिचय देता है।)
ये खासिया राजा हैं। खाइराम के सियम।

कूपर : (हाथ मिलाकर) हाउ डु यू डु?

खा.सियम : खुबलाइ[1], सरकार बहादुर। हम खासिया सियम हैं! खाइराम से आया है। हम बहोत सुख-शांति से रहता था, पर मनमाने बरमी लोग आकर हमारा ऊपर बहोत जुलुम किया। गोरा पलटन न आता तो हम बिलकुल मारा जाता। हम सरकार बहादुर का बहोत सालाम देता है। बहोत बहोत खुबलाइ।
(एक बूटेदार खासिया कपड़ा, कुछ फल-मूल, मधु, धनुष-बाण, कूपर की ओर आगे बढ़ा देता है। कूपर ग्रहण करता है।)

कूपर : थैंक यू वैरी मच। खासी चीफ! वी शैल नैवर फारगैट योर ग्रेटफुलनैस। बहुट धन्नबाद! हमि टुमारा ऊपर बहोट खुशी हुआ। टाम!
(टाम तुरत सिगरेट की पेटी खोल उसके सामने कर देता है। कूपर उससे कुछ सिगरेट निकालकर खासिया राजा को देता है। इसी बीच मेथी और न्यूविल सामानों को दबा-दबाकर देखते हैं। मेथी बूटेदार कपड़ा फैलाकर कहता है)–

मेथी : दिस इज ब्यूटीफुल। हैंड वुवन।
(मेथी कपड़े को और साहबों को भी दिखाता है। सभी प्रशंसा-सूचक दृष्टि से देखकर 'नाइस, ब्यूटीफुल' आदि कहते हैं।

मणिराम : अब आप पधारें, गारो-गाम जी।
(हरनाथ गारो गाम को आगे बढ़ा ले जाता है। कूपर गाम से हाथ मिलाता है। गारो गाम एक बघछाला और बांस के तीन डोंगे, जिनके मुंह पर

---

1. (खासी शब्द) नमस्कार!

ढक्कन लगा है, उपहार देता है। न्यूविल बघछाला अपने शरीर से लपेटकर कूदने फांदने लगता है। सब हंस पड़ते हैं।)

न्यूविल : आई एम ए टाइगर, हामि रायल टाइगर आछे- हामि भेरा, गरु सब साफा करिब पारे।

(इसी बीच मेथी एक डोंगे का ढक्कन खोलकर उलटकर देखता है और प्रसन्न होकर कहता है)

मेथी : लुक हिअर कैप्टेन। व्हाट आर दीज? लुक, दिस इज कोल।

(कूपर डोंगा लेकर निकालकर देखता है।)

कूपर : ए लैंड आफ मिनरल्स! वि हैव डिस्कवर्ड एन एसेट टु दि कंपनी।

गारो गाम : यह "नाग माटी" है साहाब। हमारा पहाड़ का नागमाटी।

मेथी : टुमारा पाहाड़ में नागमाटी मिलटा हाय?

मणिराम : जी हां कप्तान साहब! गारो पहाड़ में नागमाटी की खान है।

मेथी : क्या हाम को रास्टा बातलाने सेकेगा?

मणिराम : जी हां- बताया जा सकता है।

(मेथी और दो चोगों से थोड़ा-थोड़ा लोहा और लाख निकालता है।)

मेथी : एंड लो! दिस इज आयरन एंड दिस इज लैक।

टुमारा डेरा पाहाड़ में हाय? यह सब चीज टुमारा पाहाड़ मे मिलटा हाय?

गारो गाम : जी, हां सरकार।

मेथी : बाई जोव! व्हाट ए रिसोर्सफुल कंट्री।

बहोट भरा पूरा डेश हाय। कर्नल, डू व्हाटएवर 'यू' लाइक विद योर मिलिट्री आपरेशंस; बट प्लीज, गिव मी ए चांस टु अनअर्थ दीज हिडन ट्रैजर्स।

न्यूविल : डोंट यू बी इंपेशेंट लैफ्टिनैंट मेथे।

(सिंफौ गाम से) आप क्या लाया हाय राजा बाहाडुर।

मणिराम : सिंफौ गाम जी, आप आइये।

(सिंफौ गाम चाय का एक छोटा-सा पौधा लाकर कूपर के सामने रख देता है। सभी साहब उस पौधे को पहचान न सकने के कारण मजाक के स्वर में व्हाट इज दैट! व्हाट इज दैट। कह कर हंसते हैं।)

सिंफौ गाम : यह फिनाप है। हाम सुना है, तुम लोग फिनाप बड़ा पसंड करता है। इसी से हाम तुम लोग के लिए फिनाप लाया है।

कूपर : यह फिनाप क्या हाय ?

मणिराम : कर्नल साहब! यह चाय का पौधा है। टी-टी-टी (सुनते ही सारे साहब उछल पड़ते हैं।)

मेथी : गुड गॉड! टी!! टुम लोग का पाहाड़ में टी मिलटा हाय? कांहां मिलटा हाय। किस पाहाड़ में हाय?

मणिराम : कुछ दिन पहले हम जब सिंफौ और ढापलिका पर्वत पर गये थे, तो वहां जंगली चाय के पौधे मिले थे। चेलें और चेनी मरा में मैं तो दो छोटे-छोटे चाय बागान खोलने का कदम भी उठा रहा हूं।

न्यूविल : दैन यू आर दि डिस्कवरर आफ टी?

मेथी : हाम को टुमारा टी गार्डन दिखलाने सकेगा?

मणिराम : ठीक है साहब, मौका मिलने पर जरूर दिखलाऊंगा।

मेथी : थैंक यू, थैंक यू वैरी मच। लुक हिअर जेंटल मैन! इफ वी कैन समहाउ स्टार्ट सम टी गार्डन्स हिअर- बाई जोव। व्हाट एन एंटरप्राइज!

कूपर : बट लैट अस फिनिशि दि बिजनैस फर्स्ट।
डीवान, आभी हमारा सभा खत्म कर सकटा हाय?
(टाम इसी बीच सारे उपहारों को समेट-सहेज लेता है)

हरनाथ : दीवान जी, अब उपस्थित जनों की ओर से आप ही कुछ कहें।
(मणिराम तैयार होकर सम्मानपूर्वक साहबों के उद्देश्य सबको सुनाते हुए कहता है)

मणिराम : अंगरेज अधिकारी गण। आप सब लोगो का यहां स्वागत है। असमिया जनता की ओर से हम आप लोगों के प्रति आज आभार प्रकट कर रहे हैं। छह सौ वर्ष शाति से निवास करने के बाद, शांति-प्रिय असमिया प्रजाजनों पर कच्चा मास भोजी बर्मियों ने अत्याचार की जो तांडव-लीला चलायी, वह वर्णन के परे हैं। अब उनके अत्याचारों से पीड़ित देश पूरी तरह उबर नहीं पाया है, लोगों की रीढ़ की हड्डी सही नहीं हो पायी है। आप लोगो से हमारा निवेदन यही है कि बर्मियों को लड़ाई मे हरा कर ग्वाल पाड़ा से ब्रिटिश ने जिस घोषणा-पत्र का प्रचार किया था, उस घोषणा के अनुसार असम में शांति स्थापना एवं स्थानीय शासन की व्यवस्था कर आप लोग प्रजाजनों के प्रीति भाजन बनें।

कूपर : लौंग लिंव ब्रिटेनिया।
(कहने के साथ ही कूपर सिर से टोपी उतार लेता है। दूसरे साहब भी टोपी उतार कर खड़े हो सम्मान प्रदर्शित कर फिर बैठ जाते हैं।)
दो विक्टर्स,वी नो हाउ टु ट्रीट दि वैंक्विश्ड।
हम टुम लोगों का खाटिरडारी डेख के बड़ा खुश हुआ हाय। टुम लोगों का सब बाट हाम कंपनी आउर गवर्नर जनरल का पास पेश करेगा।

बिलकुल जानायेगा। यू नो दि ब्रिटिश पोलिसी; स्टेटेड इन दि प्रोक्लेमेशन इशूड फ्राम गोलपारा एंड वी हैव ओनली डिस्चार्ज्ड अवर लॉफुल ड्यूडीज। हाम लोग हमारा काम कर रहा हाय। हमारा गवर्नर जनरल यानी बड़े लाट साहब ने जब सुना कि निर्दोषी असमिया आदमी का ऊपर बार्मिज लोग अत्याचार करता हाय, जुलुम करता हाय, तब हामारा गोरा फौज भेज दिया। कंपनी का गोरा-फौज सारा हिंदुस्तान को ठांडा बनाय दिया। बार्मिज लोग बहुत चोट्टा हाय। हामारा गोरा पलटन का साथ पंजाब लड़ाई किया, माराठा लड़ाई किया, निजामशाही फौज लड़ाई किया, हां-बंगाल भी लड़ाई किया, एक-एक बार में सारा हिंदुस्तान लड़ाई किया। लेकिन हमारा गोरा पलटन सब लोग को हाराय दिया। हाम लोग का एक-एक तोप डागने से दुश्मन लोग दस-दस माइल हाट जायगा। बट जैंटलमैन! आभि इस देश से हाम लोग दुश्मन लोगों को निकाल दिया। देश में शांति ला दिया। परजा का भी कोई दुख नहीं। आभि टुम लोग सब हाम लोग का साथ निरापद आउर शांति के वास्ते दोस्त होके सहायता करना चाहिए।

हरनाथ : सच है, बिलकुल सच। साहब! गोरे पलटन के आते ही सारे बर्मी नौ दो ग्यारह हो गये। आप लोगों के ही भरोसे तो हम अब शांति से सांस ले पा रहे हैं। आप लोगों का सुनाम, सुयश हमेशा के लिए रह जायेगा।

न्युविल : नाऊ फादर! योर टर्न प्लीज। एनलाइटन दि हीदन्स विद सर्मन्स।

पादरी : थैंक यू। गुड ग्रशियस—गॉड बी विद यू।

अहमिया प्रजागन। इंगलिश सोलजरों ने डुश्मन बार्मिजों को हटा दिया। अब टुम लोग सुख शांति से रह सकेगा। बट माई फ्रेंड्स! हाम आपना प्रान में बहुत दुख पाया है। टुम लोग का कोई-कोई आडमी पात्थर पूजा करटा हाय, कोई कोई ट्री गाछ पूजा करटा हाय। आउर दूसरा सब सांप भी पूजा करटा हाय। भगवान पात्थर नेही हाय! सांप नेही हाय। गाछ भी नेही हाय। ही इज दि क्रिएटर ऑफ आल।

टुम को बानाया हाय, हाम को बानाया हाय—आउर सारा डुनिया भी बानाया हाय। वोह क्रिएटर हाय, एक ईस्सर! वोह एक ईस्सर का उपासना करना चाहिये। यीसू हामारा प्रेम जानता हाय, यीसू त्रान करने वाला हाय!

(इसी बीच जनता की भीड़ को धकियाते हुए पियली आगे आकर कुछ हटकर अपनी बैसाखियों से टिके रहकर सुनता रहता है। लोगों में से सिर उठा कर नारायण स्वयं साहब से पूछता है)

नारायण : साहब, तुम लोगों के यीसू की उपासना करने से क्या होता है? (बंगाली पेशकार तुरंत नारायण की ओर दौड़ता है।)

पेशकार : एइटा के असभ्य रे! बसे पर! बसे पर! (नारायण अपनी लाठी के सहारे बैठने की जगह से खड़ा होकर पेशकार की ओर तर्जनी दिखाकर कहता है)

नारायण : रे, मैं तेरा नाच-कूद देखता ही रहा हूं। ओ, जूठन खाकर दिमाग चढ़ गया है। एक ही थप्पड़ से आसमान के तारे गिनने लगेगा। (पियली फुकन और कुछ कदम आगे आकर बाघ की भांति पादरी की ओर देखता रहता है। मन के आवेश को मानों उसने जबरदस्ती रोक रखा हो।)

पादरी . यीसू की उपासना करने पर सैल्वेशन मिलेगा। मुक्ती मिलेगा। हाम को मालूम हाय, टुम लोग का धरम का अभाव हाय। हामारा गोरा फौज लौट जायगा लेकिन हाम तो टुमारा डेश में रह जायगा। टुम लोग का आंधा देश का हमारा बहोत दुख होटा हाय। हामि टुम लोग को सरग का रास्टा बाटला डेगा। हाम तुम लोग को भी देगा ''ग्रेस बी टु यू एंड पीस फ्राम गॉड। दि फादर एंड फ्राम अवर लॉर्ड जीसस क्राइस्ट। टु हूम बी ग्लोरी फार एवर एंड एवर आमीन''। (पादरी साहब के कथन से यह झलक मिलने पर कि ''असमिया लोगों में धर्म का अभाव है'' पियली के धीरज का बांध टूट जाता है। वह अपनी बैसाखी के सहारे पादरी के समीप तेजी से पहुंचकर कहता है--)

पियली . (उत्तेजित होकर) पादरी साहब! बस, बस, हो चुका। असमिया प्रजाजनों को स्वर्ग की राह दिखलाने के लिए तुम्हे इतना परेशान होने की कोई जरूरत नहीं। तुम्हारी कंपनी की दुहाई। हमारी मुक्ति के लिए असम में तुम्हे आश्रम खोलने की कोई जरूरत नहीं। तुम जिस राह आये हो उसी राह सीधे वापस चले जाओ। (पियली को उत्तेजित देखकर अंग्रेज पहरेदार बंदूक तानकर मानो कूपर के संकेत की ही बाट जोहता है। फिर बंदूक नीचे कर पहले की स्थिति में आ जाता है।)

न्यूविल : दि ट्रेटर्स सन स्पीकिंग।

कूपर . कैप्टेन! वाच पेशेंटली, माइंड व्हाट ही सेज। (पादरी से कोई जवाब न मिलने पर पियली कुछ दूर खड़े मणिराम से उत्तेजित स्वर में पूछता है--)

पियली : मणिराम! तुम दुवरा काकति वंश के समझदार नौजवान हो! सम्मानित कुल में जन्म लेकर, गोरे विदेशियों को आसन पर बिठाकर अपने घर की अंदरूनी बातें दूसरों के सामने प्रकट करना कितना समीचीन है, भले ही दूसरे यह बात समझ न सकें, पर कम से कम तुम्हें तो इसे समझना चाहिए था, क्योंकि तुम शिक्षित हो, बुद्धिमान हो। असम की इस दुर्गति का मूल कारण थोप रहे हो मेरे स्वर्गीय पिता पर। तुम इतिहास भूल गये हो, भूल गये हो कि इससे पहले बर्मियों से भी कई गुणा अधिक युद्ध-निपुण मुगल सेना असम पर आक्रमण करने के लिए कुत्ते की भांति आकर असमिया तीरंदाज, पैदल सेना, गोलंदाज सेना के सामने ठहर न पाकर उल्लू की भांति लौट जाने को लाचार हुई थी। वह भी एक-दो बार नहीं, पूरे सत्रह बार।

(न्यूविल, कूपर आदि हालांकि कुछ बोलते नहीं पर सावधानी से पियली की गति-विधि पर नजर रखे हुए हैं)

हरनाथ : फुकन! इस सभा में ये बातें कहकर इस तरह से झगड़ा-विवाद करने की कोई जरूरत नहीं। साहबों के सामने हम इससे हंसी के ही पात्र बनेंगे। इस विषय में शोध करने के लिए तो यह बैठक नहीं बुलायी गयी है न। आप बैठ जाये।

पियली : बैठ जाऊं? कहां बैठूं। यह तो कोई स्वर्ग-देव का दरबार नहीं कि वहां पर फुकन के लिए अलग से आसान रहेगा। यह तो असमिया लोगों के अधःपतन की सभा है। यहां तुम लोगों ने मणिकुट[1] के मुख्य खंभे पर फिरंगियों को आमंत्रित कर बिठलाया है।

रूप सिंह वोङाल[2] के हाथों षड्यत्र कर मेरे पिता की हत्या करवाने के बावजूद तुम लोग संतुष्ट नहीं हुए हो। मान लिया कि बदन बर्मियों को लाया था, मगर जो लोग बैठे-बैठे खिताब लेते हैं, सिर पर मथुरा पाग बांधते हैं, वे बूढ़ा गोहांइ, बर गोहांइ, बरुआ हजारिका--ये सारे बड़े-बड़े अधिकारी भला बर्मियों को रोक क्यों न सके? यह बड़े शर्म की बात है कि इसके बावजूद अपनी कमजोरी छिपाने के उद्देश्य से बदन की बदनामी फैलाकर अब अपने देश की रक्षा के लिए खुले आम कंपनी. की फौज की मदद ले रहे हो—(पियली पागल की भांति उत्तेजित होकर

1. नाम घर, मंदिर आदि के इष्ट देव की वेदी वाला वह भाग जिसका ऊंचा, नुकीला शिखर होता है।
2. विदेशी।

घूम-घूमकर सबसे पूछता है) किसलिए? बताओ किसलिए? क्या हमारे देश में बंदूक नहीं है, तोप नहीं है? नौजवान नहीं हैं कि अब गोरों की फौज को हमारे देश की रक्षा करते रहना होगा? हमारे देश में क्या महंत नहीं, गोसांई नहीं; संत नहीं, धर्म नहीं कि अब विधर्मी पादरी आकर असमिया लोगों के स्वर्ग की राह खोले?

कूपर : व्हाट डज ही मीन बाई आल दीज थिंग्स? व्हाट इज दिस लेम मैन एक्साइटेड फार, सधानियर?, हेई, टुम काहे कू गरम होटा हाय?

पियली : हेइ, टुम काहे कू गरम होटा हाय? सभ्यता का झंडा उठाकर आने वाले तुम लोगों जैसे फिरंगियों का अभद्र आचरण देखकर, और तुम लोगों के उजाले से बड़े तारे बनना चाहने वाले कुछ सिरफिरे लोगों का हीन अचारण देखकर! कर्नल साहब, अंग्रेजों की फौज के तुम नायक हो?

कूपर : हां-हां, जरूर!

पियली : तो तुम सुन लो, शांति स्थापना का तुम लोगों का उत्साह इतना प्रबल है कि भारत के एक सिरे से लेकर पंजाब, राजस्थान, मैसूर, अवध और बंगाल का शासन-सुधार पैरों से कुचल कर शांति-स्थापना के बहाने यहां व्यापार का जाल फैलाया है। ऐसी स्थिति में असम के प्रति भी तुम लोगो की प्रीति बहुत ही स्वाभाविक है। चूंकि असम में खनिज है, सोवन-सिरी में सोना है, असम के जगलों में चाय के पौधे हैं।

कूपर : बटवयरवी नाट इनवाइटेड ? टुम लोग हाम कू निमंत्रण देकर लाया है।

पियली : हां, हा - सात समुद्र तेरह नदी के पार से गोरे विदेशियों को असमिया लोग बड़ी शराई आगे बढाकर मित्रता करने के लिए स्वागत कर बुला लाये हैं। और असम राजा के महामित्र ब्रह्मा राजा ने असम के स्वर्ग-देव के बदले यांदाबू के समझौते में मुहर लगाकर उस मित्रता के खत पर सही की है और यह भी शर्त रख दी है कि असम के स्वर्गीय स्वर्ग-देवों की कब्रों में सुरक्षित धन-सोने, मणि-मुक्ता, माइहां[1]-हेंदां[2] लूट-लूटकर अपने जहाजों में भर-भर अपने देश को रवाना कर दो और उसके बदले उधर से अफीम के लड्डू ला-लाकर असम की प्रजा में बांटो, खूब!

मेथी : वी वांट टु प्रिजर्व दैम इन दि ब्रिटिश म्यूजियम। अजायब घर में हाम रखने का इंटजाम करेगा।

1 राजकीय वस्त्र।

2. असमिया तलवार।

पियली : ओ, अजायब घर में रखने का इंतजाम होगा। परंतु तुम लोगों का वह अजायब घर असम की धन-संपदा का भंडार है, ऐसा खत किसने लिख दिया? वह व्यवस्था असम के प्रति असम के स्वर्ग-देवों के प्रति अपमानजनक है और तुम लोगों को यह अपमान करने का मौका स्वर्ग-देवों के वर्तमान बेटे-पोतों की दुर्बलता के कारण मिल रहा है। क्या तुम्हारी शिक्षा-सभ्यता ने तुम्हें इतना भी ज्ञान नहीं दिया है कि स्वर्गीय राजाओं की कब्र में दान की हुई सामग्रियां परम पवित्र हैं! जाति को अपमानित किये बगैर उन सामग्रियों पर हाथ नहीं लगा सकते। तुम लोग क्या यह सोच रहे हो कि इस लूट के खिलाफ आवाज उठाने वाला कोई नहीं है? सिर्फ आवाज उठाने की बात ही नहीं, तुम लोगों को--

(मणिराम पियली को रोककर धमकी के स्वर में कहता है)

मणिराम : फुकन, बिना निमंत्रित किये आप यहां आकर यह सब क्या बक-झक कर रहे हैं?

(बात में बाधा पड़ने और मणिराम के डांटकर कहने के कारण पियली अपमानित-सा होकर दुगुने क्रोध से कहता है--)

पियली : तुम चुप रहो, मणिराम! गोरे विदेशियों को राह दिखलाकर, यहां लाकर तुम सोच रहे हो, इस देश में तुमने शांति-स्थापना कर ली है? कर्नल साहब कलिता राजा मणिराम दीवान तुम लोगों को असम में आने की राह दिखलाकर लाया था। पर बदन का बेटा यह अपंग पियली तुम्हे वापस जाने की राह दिखला देगा।

मणिराम : कर्नल साहब। हमारी सभा का काम समाप्त हो गया है--हमें अब सभा भंग कर देनी चाहिए।

कर्नल : आलराइट, लैट अस ब्रेक अप दैन।

पियली : अच्छी बात है। जाओ, जाओ, जितनी जल्द हो सके तुम लोगों का यहां से चला जाना ही मंगल जनक है।

(संतरियों के साथ साहबों का प्रस्थान। साथ ही मणिराम, हरनाथ, दुतिराम और कुछ लोग जाते हैं। सभा के शेष लोग जाने के लिए उठने लगते हैं। कुछ लोग जमा होकर पियली की बातें सुनते हैं। नारायण तेजी से पियली के पास पहुंचता है।)

नारायण : मालिक, अब हो गया, रहने दें। यही काफी है। चालिए अब लौट चलें। समूचे देश ने जो शराई चढ़ाई है, उसे भला आप अकेले कैसे लौटा सकते हैं?

पियली : देश ने नहीं चढ़ाई है नारायण। ये ऊपर आ बैठने वाले ही देश नहीं है। असमिया जनों ने गोरे विदेशियों को आसन बिछाकर बैठने के लिए नहीं बुलाया है। (गाम के पास जाकर) गाम, तुम कहते क्यों नहीं? क्यों जबान खोल कर नहीं कहते? जिन स्वर्गदेवों के साथ पिछले छह सौ सालों से कर-लगान, भेंट-उपहार दे देकर अपना महामित्र मानकर जिनसे संपर्क रख अधीनता स्वीकार करते आये हो, अभिषेक के समय जिनके शिडरी घर[1] की सीढ़ियों पर बैठ वफादारी स्वीकार की थी, उन्हीं स्वर्ग-देवो के पूर्वजों के पवित्र सिंहासन पर सात-सागर तेरह नदी पार से आये गोरे विदेशियों को बिठाकर तुम सब, तुम सब क्या घुटने टेकोगे?

खाः सियम : हां, ये बात तो हाय! हाम को दीवान बुलाया, इसीलिए हाम आया। (गाम लोग उठकर चले जाते हैं)

पियली : (एक बूढ़े के पास जाकर) तुम तो बूढ़े हो, तुम्हीं बताओ, तुम लोगों के मन की बात समझते हो। देश की बात भी मालूम है तुम्हें! तुम्हीं कहो—असम में राजा कौन थे और असम में राजा कौन होगा? तुम किसे सिर झुकाओगे—तुम्हारे बेटे-नाती किसे सिर नवायेंगे?

(बूढा मौन रहता है)

नहीं बोलते, तुम जानते हो, मगर बोलना नहीं चाहते। नारायण! आज कोई भी बोलता नहीं, देखते हो न।

(बूढ़ा सिर झुकाये चला जाता है, पियली को एक झलक दिखा कर नर्तकियां चली जाती हैं।)

पियली : स्वर्ग-देव, जो लोग कभी तुम्हारे सामने घुटने टेक कर कृपा की भीख मांगते थे, तुम्हारे संकेत को ही आदेश मानकर सिर पर लेते थे—आज देश के इस दुर्दिन में वे तुम्हारे लिए जबान खोलकर कुछ भी नहीं कहते। उंगली तक नहीं उठाते। आज वे तुम पर कठोर कुठार का प्रहार कर रहे हैं।

(कहते कहते आवेश में अचेत-सा हो जाता है। नारायण उसे पकड़ लेता है। संयत होने का प्रयास करते हुए वह फिर कहता है)

पियली : नारायण!

नारायण : मालिक!

पियली : नारायण! आज रात को हम फिर जायेंगे—

नारायण : कहां जायेंगे मालिक?

---

1. राज्याभिषेक स्थल

पियली : देवी की खोज में!

नारायण : कहां की देवी की खोज में? आपने भला देवी को कहां देखा? देवी तो अशरीरी है।

पियली : शरीरी हो या अशरीरी हो, देवी हो, मानवी हो—मुझे तो उनसे मिलना ही होगा नारायण! मेरी अंतरात्मा छाती पर खड़ी होकर जैसे मुझसे कह रही है, नारायण, तुम्हें कब्रगाह में निर्णय मिल जायेगा! सहस्त्रों सेनाओं की छाती के रक्त से शराइघाट[1] को लाल कर जिस देश का गौरव अटूट रखा, मेरी उस स्वर्ण भूमि में घुस आये इन जहरीले सांपों को भगाने के लिए, कब्रगाह की चिरंतन पवित्रता नष्ट करने वाले वेदी को अपवित्र करने वाले, छाती के कलेजे को नोच कर तोड़ने वाले दुष्ट म्लेच्छों को भगाने का निर्णय मिलेगा।

वहां हमारे फुरा तारा आलम हैं, वे स्वर्ग-देव की हड्डियों का जंतर पहनाकर मुझे राह दिखाते ले जायेंगे; मुझे कब्रगाह में ही हल मिल जायेगा।

(मंत्रमुग्ध चित्त से पियली का और उसके पीछे-पीछे विस्मित भाव से नारायण का प्रस्थान।)

(पर्दा गिरता है)

1. गुवाहाटी के पास ब्रह्मपुत्र तट का वह स्थान जहां आहोम और मुगल सेना में युद्ध हुआ था।

संधान

(पहले दृश्य की भाँति सजाया हुआ कब्रगाह। समय—आधी रात। कब्रगाह के सामने एक दीपक जल रहा है। एक केले के पत्ते पर लाल अड़हुल के कुछ फूल रखे हैं। परदा उठने से पहले एक भयावह धुन में बाजे बज रहे हैं। परदा उठते ही दिखाई पड़ती है कब्रगाह के सम्मुख स्तुति-नृत्य भंगिमा से काली वेश-भूषा में एक नर्तकी। बाजे बजने लगते हैं। नर्तकी ताडव नृत्य करते लगती है। नाचते-नाचते आवेश में आकर वह कब्रगाह के सामने साष्टांग पड़ जाती है। भयावह सन्नाटा छा जाता है। नर्तकी की सिसकी सुनायी पड़ती है। एक करुण धुन बजती रहती है।

मंच के सामने से धीरे-धीरे पियली फुकन का प्रवेश। पियली के संकेत से बुलाने पर नारायण धीरे-से आ जाता है। पियली नारायण को आगे बढ़ जाने का संकेत देता है। नारायण डरता हुआ नर्तकी के पास जाकर उसके सिरहाने खड़ा होकर अपना दाव[1] उठा लेता है। नर्तकी सिर उठा सामने नारायण को देख, डरकर उठ, पीछे की ओर हट जाती है। डर के मारे नारायण का भी शरीर कांप उठता है।

नर्तकी : कौन है तू?
(नारायण पर नजर डाले नर्तकी पीछे हट जाती है और मंच के बीच पहुंचते ही तुरंत दौड़ जाना चाहती है। दौड़ कर पियली उसे सामने से रोक लेता है। रंगमंच पर उजाला हो जाता है।)

पियली : कौन है तू?
(नर्तकी पीछे हट रही थी तभी पीछे खड़े नारायण के शरीर से धक्का खाकर वह सहमी-सी रह जाती है। नर्तकी भाग न सके, इसके लिए नारायण और पियली उसे घेरे रहते हैं।)

नारायण : बचकर कहा जायेगी?

पियली : कौन है तू?

नारायण : बता-कौन है तू?
(नर्तकी कभी नारायण की ओर और कभी पियली की ओर देखती है)

---

1. एक तरह का हथियार

नर्तकी : मैं नर्तकी हूं

पियली : कहां की नर्तकी।

नर्तकी : ठीक से देखिये, पहचान जायेंगे।

(पियली नर्तकी को पैर से सिर तक देखता है। नारायण भी देखता है)

पियली : यह तू है?

नारायण : मालिक। क्या पहचानते हैं आप इसे?

नर्तकी : जी हां—मैं गड़ गांव की नर्तकी हूं।

नारायण : तू यहां क्या कर रही है?

नर्तकी : नाच रही हूं।

नारायण : नाचती है—डायन कहीं की।

पियली : भला आधी रात को तेरा यह नाचना कैसा?

नर्तकी : क्यों? क्या इन्हें पता नहीं कि नाचना ही हमारा काम है?

पियली : समझ गया, मगर इस मरघट में तो मेरा साहब नहीं है न!

नर्तकी : मरघट नहीं कब्रगाह। यहां साहब नहीं, यह सच है, मगर हमारे पूर्वज स्वर्ग-देव लोग हैं। उनके सामने ही तो नाचना है।

पियली : मगर यह रोती कौन है?

नारायण : यही रोती है, मालिक।

नर्तकी : हां, मैं ही रोती हूं—मैं ही नाचती हूं।

नारायण : भला तू गांव के लोगों को इस तरह से डराती क्यों है? इस डायन को शूली पर चढ़ा देना चाहिए, मालिक! शरीर वाली डायन कहीं की।

पियली : भला तू रोती क्यों है?

नर्तकी : (सूखी हंसी हंसकर) रोती क्यों हूं? आप ही के पिता बदन ने पाटकाई पर्वत पार कर अपनी दुरभि संधि पूरी करने के लिए बर्मियों को लाकर देश की जैसी दुर्दशा कर डाली—उसके परिणामस्वरूप भला देश मे रुलाई उठे बगैर कोई चारा है? इसीलिए आज राज-भवन में रुलाई है, कब्रगाह में भी रुलाई है, बूढ़े-जवान सबके दिल में आज उत्पीड़न की वेदना है, बहू-बेटी के चेहरे पर विषाद भरे नेत्रों के पानी का निर्झर है। इतने पर भी आप मुझसे पूछते हैं—तू रोती क्यों है? (पास आकर) बताइये, आपकी आंखों में आंसू क्यों है? आपका चेहरा विषाद से भरा क्यों है?

पियली : सावधान नर्तकी! मेरे सामने, मेरे पिता के नाम पर एक सामान्य नर्तकी का सवाल-जवाब करना मैं माफ नहीं करूंगा।

नारायण : मालिक!

(पियली हाथ के संकेतों से नारायण को चुप करने को कहता है।)

पियली : मैं रोऊं—या न रोऊं, तू मुझ पर इस तरह से दोष मढ़ने न आना। तू...तू फिरंगियों की गुप्तचर है। कब्रगाह में—मरघट में सामान्य लोग तेरे जैसे नहीं नाचते। तेरे जैसे रोते नहीं। नारायण, इसे पकड़ ले। इसे मार डालना ही अच्छा होगा।

नर्तकी : आज के बड़े अधिकारियों का मरघट में अपने नौकर चाकरों द्वारा एक सामान्य नारी को मरवाने की अपेक्षा और बड़ा कौन-सा काम हो सकता है? उसके लिए तो तरातली मे सेना-शिविर बनाने की भी जरूरत नही है।

(गोपनीय शिविर की जगह तरातली का नाम सुनते ही नारायण और पियली चकित हो जाते हैं)

नारायण,

पियली : (एकसाथ) तरातली?

पियली : बता, तरातली के शिविर की बात का पता तुझे किस तरह से लगा? मै निश्चित रूप से समझ गया तू जासूस है।

नर्तकी : हां, जासूस तो हूं फुकन देवता! और इसी कारण यह भी जानती हूं, भरे लोहित की छाती पर से फिरंगियों की नाव की लूट कौन लाया था। आप अचरज से क्या देख रहे हैं? (नारायण से) लो, बांध लो! ऐसे टहरे क्यो हो? फुकन देवता, मैं स्वीकार करती हूं—आपके संगी-साथी साहसी हैं जरूर, पर वे चतुर नहीं है।

पियली : (विमूढ़ भाव से) नर्तकी!

नर्तकी : जी, फुकन देवता।

पियली : बता कौन है तू?

नर्तकी : मैं तो नर्तकी हूं।

पियली : नहीं, तू नर्तकी नहीं है।

नर्तकी : तो मैं जासूस हूं।

नारायण : री, तू यों ठठोली न कर! बता-कौन है तू?

पियली : बता, कौन है तू।

नर्तकी : कौन हूं मैं? मैं स्वर्ग-देव की दासी हूं। बर्मियों के साथ में दुभाषिया हू, फिरंगियों के सामने मै नर्तकी हूं और आपकी नजरों में मैं जासूस हू।

नारायण : मालिक! यह डायन है, डायन।

नर्तकी : और आपके सेवक के लिए मैं डायन हूं।

नारायण : ऊंह! अभी-अभी दासी, अभी-अभी दुभाषिया, अभी-अभी नर्तकी बनती है। मालिक! बातों की इतनी दांव-पेंच अच्छी नहीं। यह अभी-अभी एक चक्कर मार कर कुम्हड़ा बनकर साहबों के बड़े पीढ़े के तले जा घुसेगी। इसे इतने ही पर हमें भी खत्म कर डालना चाहिए।

पियली : हां, अब पहेली बुझाना छोड़कर सच बतला, कौन है तू?

नारायण : यह जासूस है, मालिक!

नर्तकी : हां, लेकिन किसकी जासूस हूं?

पियली : और किसकी जासूस होगी? उन्हीं विदेशी गोरों की। फिरंगियो की।

नर्तकी : बदन ने विदेशी बर्मियों को बुलाकर इस देश को धूल में मिला दिया, तब उसका कोई दाय-दोष नहीं, परंतु--

पियली : (नर्तकी की बात पर टोकते हुए) पिता बदन ने बर्मियों को बुला लाकर जो पाप किया था, उनका लड़का पियली फुकन उसी का प्रायश्चित्त करेगा। तरातली में सेना का शिविर उसी का आयोजन है। जा, बता दे अपने साहबों को, कि पियली फिरंगियों को देश से निकाल कर ही दम लेगा।

नर्तकी : समझती हूं। पर देखने के बाद ही पता चलेगा।

नारायण : तेरी जबान से इतनी बड़ी-बडी बातें शोभा नहीं देती। यह सब तेरी धोखेबाजी है। इन वेकार की बातों से हमें कोई वास्ता नहीं। मालिक, इसको किसी ठिकाने लगा देना चाहिए।

नर्तकी : उस दिन अगर उस अनजानी नाव ने आकर फिरंगियों की नाव को लोहित के बीच में डुबो न दिया होता, तो कुछ ही समय में बारूद लूट ले जाने की बात फिरंगियो के कानों में पड़ जाती और आपके साहसी सहचर जब तक उसे छिपा रखते, उसके पहले ही फिरंगी उस बारूद को फिर अपने अधिकार में कर लेते। फुकन देवता!

पियली : नारायण! इसकी बातों ने मुझे वडा विमूढ़ कर दिया। नहीं-नहीं नारायण! यह चाहे जो भी हो, अभी इसे बांधे रखे बगैर कोई और चारा नहीं है।

नारायण : बांधकर और क्या रखना है मालिक! इसे एक ही वार मे खत्म कर डालना ही अच्छा है।

(नारायण दाव उठा लेता है। नर्तकी अविचलित रहती है)

नर्तकी : सच कहा--खत्म कर डालना ही अच्छा है। नहीं तो आप लोगों के सुनाम पर कलंक लगेगा। अनेक बड़े-बड़े पदाधिकारियों को मार डाला, भांग खिलाकर मतवाले हाथियों से लोगों को रौंदवा कर बहुत यश अर्जित

किया। अब सिर्फ यही काम बाकी रह गया है। मगर हत्या करने से पहले आपसे क्या एक बात पूछ सकती हूं?

पियली : कौन-सी बात?

नर्तकी : तरातली में जो आयोजन कर रहे हैं, अगर उस आयोजन का उद्देश्य गोरे विदेशियों को खदेड़ना ही है, तब तो नारी होने पर भी उस काम में जितना हो सके आपकी मदद करूंगी? क्या आप मुझ पर विश्वास कर सकते हैं?

नारायण : इसकी बात पर विश्वास न करें मालिक।

पियली : जब तक परिचय जान न लूं मैं तुझ पर विश्वास नहीं करता।

नर्तकी : मैं नृत्य करती हूं, यह तो आपने खुद देखा है। मैं नर्तकी हूं। इससे ज्यादा परिचय देने मे मैं असमर्थ हूं।

पियली : अच्छा–एक नर्तकी ऐसे महत्वपूर्ण कार्य में भला पियली फुकन की मदद कैसे कर सकती है?

नर्तकी : नाच-नाच कर! नृत्य-भंगिमा से, नूपुरों की ध्वनि से, तरातली की सेना बल से आप लोग भला फिरंगियों को किस तरह से खदेड़ सकेंगे? आपकी सेना तो सिर्फ मुट्ठी भर है। इस मुट्ठी भर सेना से क्या फिरंगियों की बड़ी गोरी-सेना को यहां से आप लोग हरा सकते हैं?

पियली : हो सकता है कि हमारे लड़ाकुओं की संख्या बिलकुल कम हो। मगर उनमें से हर एक, एक-एक चिनगारी है। उनमे से हर व्यक्ति स्वर्ग-देव के नाम पर प्रतिज्ञाबद्ध है। भले ही हम आमने-सामने की लड़ाई न कर सकें, पर इन्हीं मुट्ठी भर लड़ाकुओ की मदद से किस तरह से गोरे विदेशियों को खदेड़ा जा सकता है, उसका इंतजाम मैं करूंगा।

नर्तकी : अगर गोरे विदेशियों की लाल आंखें देखकर और उन फिरंगियों के साथ हिले-मिले ऊपर से बड़े बने पदाधिकारियों के प्रलोभन में पड़कर आपके ही साथी–सहचर पिछड जायें, तब क्या होगा?

नारायण : ओह, भला इसकी बातों का जाल तो देखिये?

पियली : नर्तकी! पियली फुकन की मंडली आज जिस मत्र में दीक्षित है–सैंकड़ों लाल आंखें–सैकड़ों प्रलोभन भी उन्हें कभी पीछे नहीं हटा सकते।

नर्तकी : अगर ऐसी ही बात है, तब तो फुकन देवता, मुझे भी वही दीक्षा दीजिये।

पियली : नर्तकी।

नर्तकी : मुझे गलत न समझें, फुकन देवता! मेरे अंतर में जो आग धधक रही है, उसे शात करने का कोई उपाय मुझे नहीं मिल रहा है। फिर भी कभी

देश के किसी काम आ सकती हूं, इसी आशा से आज इतने दिन तक इधर-उधर नाचती-गाती रही हूं। शायद फिर कभी यह देश सजग हो उठे, खोयी शांति वापस आ जाय। मैं फिर स्वर्ग-देव के सामने नाच-गा सकूंगी। मुझे आज वह राह मिल गयी है। उसी राह से मैं आगे बढ़ती जाऊंगी।
(दौड़कर कब्र के सामने घुटने टेकती है।)
स्वर्ग-देव, मुझे शक्ति दो! स्वर्ग से तुम साक्षी रहना, ताकि मैं अपनी बात कायम रख सकूं!
(पियली के पास आकर घुटने टेक, पैर छूकर कहती है) धर्म के नाम पर, मेरे पूर्वजों के नाम पर, स्वर्ग-देव के नाम पर आपके चरण छूकर मैं शपथ खा रही हूं—जीवन-मरण में मैं आपके कार्यो में सहायता करूंगी। मुझे उस महामंत्र से दीक्षित करें—हृदय के रक्त से देश की रक्षा करने का मौका दें—मौका दें मुझे—फुकन देवता!
(अधीर होकर नर्तकी रो पड़ती है।)

पियली : हृदय का रक्त! हृदय का रक्त! नारायण-नारायण! नारी के तप्त रक्त के प्रभाव से सारे असम के फिरंगी भस्म हो जायेंगे। देश में कोई भी गोरा-विदेशी नहीं रहेगा। असमिया प्रजा फिर लहलहा उठेगी। ....देश में शांति आयेगी.... धन धान्य से चारों ओर भर जायेगा। देश में चेतना लौट रही है नारायण। देश की देवी-शक्ति जग उठी है।
(पियली अधीर हो उठता है।)

नारायण : मालिक-मालिक—

नर्तकी : फुकन देवता।

पियली : नारायण, नर्तकी! नर्तकी, बता-तू कर सकेगी?

नर्तकी : कर सकूंगी फुकन देवता।

पियली : सबसे पहले हमें गोरों की फौज के बारूद-भंडार में आग लगाकर उड़ा देना है। और जरूरत हो तो तभी उनके साथ लड़ाई करनी है। तू उस काम में मेरी कौन-सी मदद करेगी, बता!

नर्तकी : मुझे जिस तरह से नचायेंगे—मैं वैसे ही नाचूंगी। धनुष के बाण में जोड़कर जहां भी चलायेंगे, वहीं गिरकर धूमकेतु की भांति दावानल धधका दूंगी। फुकन देवता!

पियली : क्या है?

नर्तकी : अगले शनिवार को मैं साहबों के बारूद-घर के शिविर में नाचने जाऊंगी। नाच में मैं उन्हें तल्लीन रखूंगी। उसी मौक पर आप लोग बारूद-घर में आग लगा दें तो सुफल मिलेगा।

पियली : मगर पक्के मकान में आग लगाने का कोई तरीका समझ में नहीं आया।

नर्तकी : वह तरीका मैं बताऊंगी फुकन देवता। आग लगाने की बत्ती का इंतजाम मैं ही करूंगी।

पियली : तू बत्ती का इंतजाम कर सकेगी?

नर्तकी : जी हां, कर सकूंगी। जो आंसू अब तक कोई राह न देख अंतर में ही जमे हुए हैं, उन्हीं आंसुओं से मैं बत्ती को तर कर दूंगी। और जिस आग को अपने हृदय में समेटे आज अपनी जन्मभूमि के उद्धार के लिए जीवन-प्रण किया है, उसी आग की चिनगारी से आपको उस बत्ती में आग जलानी होगी। तब आप देखियेगा फुकन देवता, उस बत्ती की आग फिरंगियों के बारूद-घर में खांडव-दाह करेगी।

पियली : बात सही है नर्तकी। असम के सर्वप्रथम विद्रोह का दावानल धधकाने के लिए बत्ती तुझे, एक अनजान नर्तकी को जुटानी होगी, और उस बत्ती में यह अपंग पियली आग लगायेगा।

नारायण : ठहरें-ठहरें—अगर कहीं कोई अनहोनी हो जाय तो क्या होगा?

नर्तकी : तब, तब दिखौ की धारा में छलांग लगा देगे। नदी के घाट में जो पांचे नावे होंगी, उनमें के हर मल्लाह को निर्देश दिया हुआ रहेगा। कुछ दूर तैरते हुए भावी की ओर जाने पर वे आप लोगों को नावों पर चढ़ा लेंगे।

पियली : हूं! तू कब तक नाचने जाने वाली है?

नर्तकी : अगले शनिवार की रात को।

पियली : बस, वैसा ही होगा। अच्छा, क्या इसके पहले भी तू कभी वहां नाचने गयी थी?

नर्तकी : जी हां, गयी थी!

पियली : तुझे वहां कौन ले जाता है?

नर्तकी : हरनाथ दारोगा!

नारायण : ओ, वह जूठनखोर हरनाथ दारोगा! हरामी, शरीर में कीड़े लगकर मरेगा।

पियली : तू रहती कहां है?

नर्तकी : नदी पर वह जो पांचे नाव है न, उसी में। फुकन देवता, मुझ पर विश्वास करें—मैं कभी छलती नहीं। आप इस बार अच्छी तरह से पतवार संभालें--नाव सही चलती रहेगी। अच्छा मैं अब चलती हूं। हां—आपसे एक अनुरोध कर जा रही हूं। फुकन देवता! कब्रगाह में मैं नाच रही थी, यह बात आप किसी से न कहें। हो सकता है कि वे लोग मुझे डायन मान लें।

(नारायण को सामने पाकर नर्तकी आंखें उलट कर दोनों हाथ को चेहरे के सामने हथौड़ी जैसे बनाकर, मुंह विकृत कर दिखाती हुई डराती है।)

नर्तकी : मैं डा - य - न - हूं - ऊं!

(नारायण डर कर पीछे हट जाता है। नर्तकी का प्रस्थान। हिम्मत बांध कर नारायण एक कदम आगे बढ़, नर्तकी जिस ओर से गयी है, उसी ओर देखते हुए हाथ का दाव हिला-हिला कर कहता है--)

नारायण : हे - हे — तू डायन हो या कोई और अशरीरी, मैं तेरा पीछा छोड़ने वाला नहीं हूं। समय पर तू अगर डुबकी भी लगा जाय, तो भी इसी दाव से तेरी बोटी-बोटी उड़ा दूंगा!

पियली : पतवार सही रहे तो नाव सही-सही चलेगी। नारायण - नारायण! क्या मैं पतवार थाम सकूंगा? बता - नारायण - बता! मुझे कभी-कभी बडा डर लगने लगता है। नारायण, क्या जाने सब कुछ गलत न हो जाय। नारायण, क्या मैं...थाम सकूंगा पतवार?

नारायण : जरूर थाम सकेंगे मालिक! आप जरूर थाम सकेंगे यह पतवार!

(दूर भक्त का गीत सुनायी पड़ता है। गीत की आवाज क्रमशः पास आती है। परदा गिरने पर भी नेपथ्य में भक्त का गीत चलता रहता है--कमलानंद भट्टाचार्य रचित इन दोनों में से कोई भी गीत गाया जा सकता है।)

गीत

सख्ती से संभाल पतवार ओ नाविक
सख्ती से संभाल पतवार
वर्षा की आंधी डुबो सकती न नाव को
दे उड़ा पाल इस बार!
पतवार तो है मुट्ठी में तेरी
शुभ अशुभ भी तेरे हाथ
चढ़ने-उतरने में रहना सावधान
डूबे न नाव लाचार!

2

थामे पतवार राजा तू है नाविक–
थामे राजा है पतवार
हहराती धारा के ऊपर ले आया पनसुइया–
भंवरों को कर पार!

ऊपर गरजती आंधी बादल घोर
नीचे नदिया तोड़ती कगार
तू है नाविक राजा, थामे पतवार!

मूल असमिया

गान

1

भाल के धरिबि गुरि नावरीया
भाल के धरिबि गुरि,
बारिषार धुमुहाइ नोवारे बराव
दे ऐ पाल तोर तरी।
गुरिर बरे बठा तोरे मुठि ते
अशुभ अघटन तोरे हातते
उठोते नामोते हबि ऐ सावधान
नाओ याब पारे बुरि।

2

राजा गुरियाल तइ नावरीया
राजा गुरियाल तइ
उबारे ओपरे पांचै आनिलि
चाक नैया पारे हैं।
ओपरे बारिषार गाजनि धुमुहा
तले पारे भंग नै–
नावरीया! राजा गुरियाल तइ।

बाहर की बैठक

(तालोल की शराई, बटा, चटाई, पीढ़े आदि पुराने संपन्न असमिया जनों के सामानों से कमरा अत्यंत सुंदर ढंग से सजाया हुआ है। भक्त घोषा[1] पाठ कर रहा है। पास बैठी पियली की मां पाठ सुन रही है। उसके पास ही नन्हीं नातिन लवणी बैठी हुई है। सुचिता कुछ हट कर बैठी पाठ सुन रही है और सास के लिए तामील कूट रही है लवणी के हाथ में दुल्हा-दुल्हन खेल के पुतले हैं।)

भक्त : (पाठ करता हुआ)

हर पद सेवा करता नहीं इस कारण
माया बांध घुमाती ...
तब तक माया से होता नहीं छुटकारा
जब तक शरण ली नहीं जाती![2]

(भक्त ग्रंथ समेट कर, प्रणाम कर, दीप-दान और रेहल को जरा हिला देता है।)

पियली की मां : बिटिया! भक्त जी को जल्दी कुछ खाने को देकर सोने का इंतजाम कर दे! भक्त जी, अंदर जायें। कुछ खा-पीकर आज रात यहीं बितायें!

भक्त : जी, अच्छा रानी मां!

(सुचिता और भक्त चले जाते हैं।)

पियली की मां : नन्हीं मुन्नी लवणी! तुम कुछ देर खेलती रहो। मैं यह ग्रथ पूजा-घर में रख आऊं।

(रेहल के साथ ही ग्रंथ को उठाकर पियली की मां चली जाती है। लवणी दुल्हे-दुल्हन के पुतले लेकर खेलती रहती है और नाम गाती है।)

---

1. शंकरदेव रचित 'कीर्तन घोषा' या माधवदेव रचित 'नामघोषा'
2 मूल असमिया– हरिपद सेवा न करे निमित्ते, मायाये बांधि फुरावे!
ताबत मायाक न कर रहित, शरण न लवे यावे!।

लवणी : बीजू केले के पात छोटे-छोटे
जाति के केले के पात!
नहा धोकर मेरे लाल मणि के गुड्डे को
खाने को मिला नहीं भात![1]

अय यो, मेरे लाल मणि के गुड्डे! तुम नाराज न होओ' पिताजी के आने पर मैं भी खाना खाऊंगी। तुम भी खाना खाना!

(नारायण का प्रवेश)

नारायण : साथ ही मैं भी खाऊंगा खाना, ओ लवणी मैया! (लवणी के पास आकर बैठ जाता है।) हां, हां, मुझे जरा दिखाओ न अपना लाल मणि का गुड्डा। (लवणी के हाथ से नारायण झट से एक पुतला ले लेता है। लवणी तिरछी निगाह से नारायण को देखती है। नारायण लवणी को खुश करने के लिए उस पुतले को लवणी के चेहरे के सामने इस तरह से पकड़ कर नचा-नचा कर गाता है जिससे कि लवणी का हाथ इस तक न पहुंच सके!)

एंडी[2] का सूत कात मेखला बना मुन्नी
एंडी का सूत कात मेखला बना।![3]

लवणी : देखते हो—यह क्या क्या कर रहा है। दे-दे मेरा पुतला, दे दे! खुद ले आ नहीं सकता, दूसरे का ही ले जाता है।

(लवणी झपट कर पुतला छीन ले जाती है। नारायण झट से लवणी को गोद में लेकर प्यार करते हुए कहता है)

नारायण : मेरा पुतला तो यह है!

(नारायण लवणी को चूमता है। लवणी परेशान होती है। वह नारायण के बाल पकड़कर नोचने लगती है।)

नारायण : उफ्! उफ्! उफ्! छोड़ दो, छोड़ दो। धान के पौधों की भांति अब सारे बाल हाथ में ही चले जायेंगे।

(लवणी बालों से हाथ हटा लेती है। नारायण उसे गोद से उतार देता है। लवणी मुंह फुलाये खड़ी रहती है।)

---

1. मूल असमिया : आठिया कलरे पात सरू सरू
जाति कलरे पात!
गा धुई उठि मोर बाखरर टेमेकाइ
खाबलै नेपाले भात!!
2. एक तरह की रेशम!
3. मूल असमिया—एरि काटि मेखेली ल हंय बानची-बानची एरि काटि मेखली ल'

नारायण : अरी मैया! हमारी लवणी बुरा मान गयी। बुरा न मानो मुन्नी लवणी! कल नामघर में 'भओना'[1] होने वाला है न! उसमे मै हनुमान बनूंगा। पूछ में आग जलाकर सारे नगर को किस तरह से भस्म कर डालूगा, देखोगी?

(नारायण उछल-उछल कर हनुमान का अभिनय करता है और गाता है।)

केला मधु खा—खा बूढे हनुमंत ने
नगरी को किया उजाड़
ओ गोविंद राम

(लवणी हसने लगती है।)

उस नाटक मे अभिनय करने वाले ऐसी लड़ाई का नाच नाचेगे, ऐसी लड़ाई का नाच नाचेगे कि क्या कहना।

(कहकर नारायण मुंह से ही मृदंग की सी आवाज करता हुआ नाच-नाचकर अभिनय करता है।)

ता-ता-ताओं-रा-ता-ताओं, रा-ता ताकृ-थेइ।
रि-ति-ताओं-ति-ति-ताओं खिटि ताक थेइ।

(नारायण ठहाका लगाकर हंसता है और लवणी भी हसने लगती है। फिर लवणी हाथ के पुतले की ओर उंगली दिखाकर नारायण कहता है) अच्छा, लवणी मुन्नी! इस लाल मणि के गुड्डे की गुड़िया कौन है?

लवणी : और कौन होगी! मेरी वह नन्हीं मुन्नी!

नारायण : हां-हां- यही नन्हीं मुन्नी (लवणी की ठोढ़ी पकड़कर) यह है नन्हीं मुन्नी की अम्मा! और मैं, मान लो कि मैं चेरी हूं!

(कहकर धोती की गांठ खोल कर ओढ़नी-सी डाल चेरी बन जाता है।)

लवणी : (खुशी से भरकर ताली बजाती हुई) दादी, दादी, इस नारायण भैया को देखो न! (नारायण की पूछ की ओर संकेत कर) तुम्हारा यह सब क्या है? क्या चेरी का भी यह सब होता है? हुह, औरत की भी कहीं दाढ़ी होती है?

नारायण : (महीन आवाज से) गोरी-गोरी मेमों की लेकिन रहती हैं।

(दोनों हंस देते हैं। हंसी के बीच ही पियली का प्रवेश)

---

1. पौराणिक नाटक अभिनय।

पियली : नारायण!

(पियली की आवाज सुनकर नारायण चौंक-सा पड़ता है और ओढ़नी उतार कर खड़ा हो जाता है।)

नारायण : जी, मालिक, सब कुछ ठीक ही है!

पियली : तुझे यहां आये कितना समय हुआ?

नारायण : पूजा-घर में डबा[1] की आवाज के साथ-साथ ही आ पहुंचा था, मालिक!

पियली : तो फिर चल मेरे साथ!

(दोनों जाना चाहते हैं! तभी सुचिता का प्रवेश)

सुचिता : भला आने के साथ-साथ इसी काल-संध्या के समय फिर कहां जाने का काम पड़ गया?

पियली : सुचिता! दो-चार दिन तुम मुझसे यह सवाल न करना। तुम क्या नहीं जानती, मैं गलत राह नहीं जाता। चल नारायण।

(दोनों जाना चाहते हैं। तभी लवणी कहती है।)

लवणी : पिताजी, आप जल्द आ जायें! आपके साथ खाना खाने के लिए मैं बाट जोहती रहूंगी।

पियली : (लवणी को दुलारते हुए) अच्छा-अच्छा मैं आऊंगा लवणी बेटी! तुम खाना खा लेना! मैं तुम्हारे खाने के बाद ही आ पाऊंगा।

(नारायण और पियली का प्रस्थान)

सुचिता : समय-असमय कुछ भी विचार बिना कर कहां जाते है, क्या करते हैं, सिर्फ हरि ही जानता है। मैं तो जानती हू कि वे गलत राह नहीं जाते, मगर जरा भी आराम न कर, अपने अपग शरीर से वे दिन भर चक्कर लगाते रहते हैं, मेरा मन भी कैसा-कैसा करने लगता है।

लवणी : पिताजी कहा गये? अम्मा!

सुचिता : किसी काम से बाहर गये है, लवणी बेटी! जाओ, अब तुम खेलती रहो।

(पियली की मां आती है। लवणी खेल रही है।)

पि. मां : बहू! इस बच्ची को कुछ खिला-पिलाकर सुलाने का इंतजार करो। मुझे पियली की आवाज सुनायी पड़ी थी—कहां गया वह?

सुचिता : वे कहां चले गये, पता नहीं अम्मा। आते ही फिर नारायण को साथ लेकर फिर कहीं निकल गये। कह गये है कि भोजन के समय आ जायेंगे।

पि. मां : हूं इन सबको क्या हो गया है, पता ही नहीं। बेटा दिन-ब-दिन सूखा

---

1. बड़ा नगाड़ा।

जा रहा है। चेहरा देखते ही लगता है कि किसी गहरी चिंता में खोया हुआ है।

सुचिता : वे इस तरह से रात को देर तक बाहर रहते हैं तो मन न जाने कैसा-कैसा करने लगता है। आप बेटे से जरा कहिये न कुछ!

पि. मां : भला एक ही बात मैं उनसे कितनी बार कहूं बहू!
(जन्मि का प्रवेश! सुचिता घूंघट खींच कर चली जाती है। साथ ही लवणी को भी ले जाती है।)

जन्मि : किससे क्या कहने को कह रही हो, मां!

पि. मा : तेरे भाई की बात कह रही हूं! क्या तुम लोगो के मन में अब तक चेतना नहीं आयी? पिताजी को तो जो भी करना था किया। तुम सबके मारे तो मुझे कोई चारा नहीं रहा है।

जन्मि : मां, तुम यह क्या कह रही हो? तुम किससे यह मान कर रही हो?

पि. मां : पियली का इतनी रात तक घूमते-फिरते रहना मुझे बिल्कुल पसंद नहीं। अगर तुम सब मेरी बात सुनोगे नहीं, तो मैं घर-बार छोड़कर निकल जाऊंगी।

जन्मि : अम्मा! तुम लोग ठहरी औरत, जरा-सी बात पर मान कर बैठती हो। वह तो दुधमुंहा बच्चा नहीं है न! वह कोई कच्चा काम नहीं करता। अगर वह कुछ कर रहा है तो जरूर लोगों के उपकार के लिए ही कर रहा है—लोगों के हित के लिए ही कर रहा है।

पि. मां : जन्मि! मैंने बहुत कुछ सहा है। अब इस बूढ़े शरीर से आगे बढ़ा नहीं जाता। लोगों की मति-गति भी मुझे सीधी नहीं लगती। नासमझ को समझाना और ढेरुवा ठारी[1] को सिझाना एक ही बात है। लोगों का उपकार करने जाकर आग मे छलांग लगाना मुझे अच्छा नहीं लगता।

जन्मि : अम्मा, अच्छे-बुरे का अभी-अभी पता चल पाना कठिन है। परतु एक दिन ऐसा आयेगा, जब लोग खुद ही सब कुछ समझ सकेंगे।

पि. मां : तुम लोगों की इन बातो से मेरा मन शांत नही होने का। अब जाकर हाथ-मुंह धोकर कुछ खा-पी लो।
(जन्मि और पियली की मां का प्रस्थान। तभी नारायण आता है।)

नारायण : अम्मा जी, अम्मा जी!

सुचिता : (अंदर से) कौन? नारायण हो क्या?

---

1 मूर्ख को समझाना समय की बरबादी करना है।

नारायण : अम्मा जी! पेट में चूहे दौड़ रहे हैं। आंतें सूख गयी हैं– पेट पीठ एक हो गये हैं।

(पियली की मां आती है)

पि. मां : नारायण, तुम लोग इतनी रात तक कहा गये थे? राजा के साथ वजीरा!

(नारायण संकोच में पड़ जाता है।)

नारायण : न ... हीं. ... आं. ... आ. ....

पि. मां : नही-नहीं– तो समझ गयी। पर इतनी रात को उस अपग लड़के को इस तरह से साथ लेकर चक्कर लगाना मुझे जरा भी पसंद नहीं। इसी घर में रहकर तेरे बाल सफेद हो गये, पर अब तक तुझे कोई ज्ञान नहीं हुआ।

(नारायण अनसुने का भाव दिखाकर दूसरी बात छेड़, पियली की मां की बात से किनारा हट जाना चाहता है।)

नारायण : हां-हां दादी मां! बाट-घाट में जितने अशरीरी मारे घूम रहे है, किसी ओर भी चारा नहीं है।

पि. मा : अपनी यह सब बक-झक छोड़। आज से अगर मै...

नारायण : हरि-हरि, ओ मेरे गुरुदेव! आज किस्मत में कोई असमय अनहोनी ही लिखी थी। ओह–वह! वहीं क्षण मे कुम्हड़ा बन जाता था–क्षण में बदल कर उल्लू बन, मिऊं-मिऊ करने लगता।

पि. मा : नारायण, मैं कहती हू, राज्य-विनाश की बात और तू कहता है, केले चमगादड खा गये।

(नारायण अदर देखता हुआ सुचिता को सुनाकर कहता है)

नारायण : अम्मा जी, अम्मा जी, पेट की जलन के मारे और ...

(सुचिता आती है)

सुचिता : भात वन चुका है। जा, चामांइ से कह कर खा ले!

नारायण : नही-नहीं अम्मा! खाना खाने के पहले जरा जलपान हो जाय। हा, इसी बीच मालिक भी आ जाये। भात-खाना उसके बाद भी होगा!

सुचिता : ठीक है, ठहर... (सुचिता अंदर चली जाती है)

नारायण : दादी मां, अगर खाना-पीना हो चुका हो तो अब जाकर बिस्तर पर लेट जाना ही अच्छा है। अब तो बुढ़ापा आ चुका है।

पि. मा : बिस्तर पर लेटने पर भी मुझे नींद नहीं आती–और जब तक तुम लोगो की यह अंट-संट गड़बड़ सडबर खत्म न हो, तब तक आयेगी भी नहीं।

नारायण : हां-हां, बात तो सही है। फिर भी एक बार कोशिश तो करें जाकर सोने की।

(पियली की मां झट से अंदर चली जाती है। सुचिता एक लोटे में पानी और एक बड़े कटोरे में जलपान लेकर आती है। नारायण जलपान का कटोरा देखकर खुद ही एक चटाई बिछाकर बैठ जाता है और हाथ बढ़ा कर कटोरा ले आता है।)

नारायण : दीजिये–दीजिये मां जी! (जलपान का कटोरा नीचे रख, उसमें उंगली घुसेड़ जलपान का अंदाजा लगाकर कहता है।) अम्मा जी, आज तो जलपान पूरा है। (जलपान सान-सान कर कहता है।)

कृष्ण देव,
हुसू हुसायं सकला-मकलि
मिठैयेन रक्त वर्ण
दुग्धेन गन गलाय नमः

(जलपान खाता है। सुचिता मुस्करा कर अंदर चली जाती है। पियली की मां फिर आती है। पियली अब तक नहीं आया, इससे वह गुस्से में है। चतुर नारायण उसकी ओर देख ही नहीं रहा है, ऐसा भाव दिखाकर जलपान खाने में जुटा रहता है।)

पि. मां : सुन नारायण! आज से दिन भर चाहे जो भी करते रहो, पर शाम होते ही तुम लोगों को घर पहुंचना ही होगा। रात को मैं किसी को भी घर से बाहर निकलने नही दूंगी! पियली को भी।

(तमक कर चली जाती है। नारायण धीरे-धीरे सिर उठाकर उसके जाने की ओर देखता रहता है और उसके ओझल होते ही कहता है)

नारायण : दादी मां, अंदर की ज्वाला भला तुम क्या समझ सकती हो? कोमल चावल, दही-दूध का ऐसा जलपान उन गोरे विदेशियों की दाढ़ी-मूंछ पर जब तक पोत न सकें, तब तक दिन-रात बराबर बने रहेंगे। हू–तुम्हे दिखाकर कहीं जायें, तभी दोष लगता है! आज से शाम को ही पलायुद्ध, अति प्रत्यूषे पाटी धारणम्[1]; मालिक को तो कभी अकेला छोड़ा नहीं जायेगा। गोरे विदेशियों के भिड़ों के छत्ते में आग लगाये बगैर छोड़ा नही जायेगा। शरीरी ही हैं वे कोई अशरीरी थोड़े ही हैं?

(खाना-पीना खत्म कर जमीन पर गिरा जूठन उठाकर कटोरी में ले, जगह को लीप-पोंछ कर, लोटा-कटोरा ले नारायण चला जाता है। कुछ देर बाद पियली का प्रवेश।)

1. शाम को ही भाग जायेंगे, भोर आने के पहले ही बिस्तर पर आ जायेंगे।

पियली : नारायण।

(अंगोछे से मुंह पोछता हुआ नारायण आता है।)

पियली : घर के सब का खाना-पीना हो चुका है न? मां सो गयी या नहीं?

नारायण : दादी मां अभी-अभी गयी हैं। मगर बिलकुल आग-बबूला हैं। "हरि भले ही छोड़े रसरी न छोड़े", मैं ही किनारा कर निकल जाना चाहता हूं, मगर वह रस्सी तो बार-बार घुमा-घुमाकर जकड़ लेती है।

पियली : अच्छा अच्छा, समझ गया। धनंजय, धनुधर, उदयसिंह और पियली बरुआ सभी ठीक हो चुके हैं। नर्तकी, पनसुइया नाव और तू मेरे साथ, समझ गया न?

नारायण : जी, मालिक!

पियली : हां, तो अब तू जा—खाना खा ले।

(नारायण जाता है। सुचिना आती है। पियली अपना कपड़ा एक-एक कर उतार कर बैठता है।)

पियली : सुचिना, मुझे थोड़ी देर हो गयी न? तुम्हें शायद बड़ी परेशानी हो रही है। क्या लवर्णी मुन्नी सो गयी?

सुचिना : आपके लिए बाट जोह-जोह कर आखिर सो गयी। स्वामी! अब अंदर चलें।

पियली : हां, चलो।

(सुचिना और पियली का प्रस्थान। नारायण प्रवेश कर फर्श पर बिखरे सामानो को सहेज देता है। बटा से एक तामोल लेकर खाता है।)

नारायण : ओह— अभी-अभी एक कटोरा जलपान खाना-पीया, मगर इतने मे ही पेट में चूहे दौड़ने लगे। आज कई दिन से मुझे यह कैसी भूख लग रही है, पता नही। यह तो भूख नहीं, खख[1] आ घुसा है। पेटूपन है। यह खख, यह पेटूपन मेरी भलाई के लिए नही है। इस वार तो लगता है, कुछ मुसीबत आनेवाली है पर यह शख्स पीछे हटने वाला नहीं। मारे हरि तो राखे कौन,राखे हरि तो मारे कौन?

लेकिन, हां, मालिक ने तो यह काम अच्छा नहीं किया। ऐसे महान काम में एक औरत को खीच तान कर लाना मुझे तो बिलकुल पसंद नहीं आया। हालांकि हमारे देश की नारियों मे साहस, हिम्मत नहीं है, ऐसी बात नहीं—मगर वह नर्तकी तो दूसरों से और बढ़-चढ़ कर है। लगता

---

1 बुभुक्षा, खाते रहने की इच्छा।

है जैसे बाघ के कलेजे का तेल खाने वाली हो। फिर भी शास्त्रों में कहा गया है कि– हजार हो, नारी जाति तो हमेशा रहती पत्ते के तले ही! मालिक ने भी आगे बढ़ कर काम हाथ में लिया है जरूर, मगर ऐसे कामों में समूचा देश एक जाति, एक आवाज, एक खाना, एक निशाना होता तो काम और ज्यादा आसान हो गया होता।

सुना है शास्त्र मे यह भी कहा गया है कि कलिकाल में कलि औरत के बालों में और जमीन की सरहद में निवास करता है। इन गोरे विदेशियों को तो बालों का वैसा कोई डर-वर नहीं है। उनका कलि तो अब सरहद में ही है। सरहद धकेल कर आगे बढ़ जाने वाली भला यह कैसी जाति है? अरे–तुम्हें अगर सरहद, धकेल कर बढ़ानी ही है, तो दूसरे देशों में जाओ, हमारे यहां क्यों आये हो? वहां जाकर जितना हो सके धकिया कर बढ़ा लो, सेंध मारो, हमारे यहां क्यों आये हो? हमारे यहां तो तुम्हें कोई मौका नहीं मिल सकेगा। हमारे पूर्वजो ने जिस तरह से घर की चोटी की तरह सरहद बांध रखी है, उसमें तुम कहां सेंध मार सकते हो? तुम लोगों के साथ भला हमारी दोस्ती कैसी? तुम्हारे साथ हमारा मेल कैसा? अरे–क्या तुम्हारे रूप-रंग से हमारा मेल है? बोली-वचन से मेल है? खान-पान से मेल है? सोने-जागने से मेल है? अरे–तुम लोगों के साथ तो हमारा सपने में भी मेल नहीं। भला तुम लोग सपना भी कैसा देखा करते हो?

(खखारने की आवाज सुनकर)

ओ, मालिक के खखारने की आवाज है। अन्न प्रसन्न[1] हो चुका है शायद। (जल्दी-जल्दी गुड़गुड़ी हुक्का लाकर पियली के बैठने की जगह रखकर चला जाता है। पियली प्रवेश कर बिस्तर पर बैठ तामोल खाता है। इसके बाद हुक्के की नली हाथ में लेकर धीरे-धीरे तंबाकू पीता है। कुछ देर चुपचाप चिंता मे डूबे रहने के बाद मन की भावनाएं प्रकट कर अपने-आप कहता जाता है--)

पियली : नर्तकी, उससे कोई जान-पहचान नहीं, फिर भी कोई उपाय भी तो नहीं है। सब कुछ ठीक ही है, अगर कुछ और गड़बड़ी न हो जाय। नर्तकी, काम सफल हो जाय तो तुझे उचित इनाम दूंगा। सोने के गहने दूंगा। जमीन-जायदाद दूंगा, तेरे नाम पर सड़क बनवा कर, देवालय बनवा कर,

1. भोजन

ऊपर सोने का कलश लगाकर तुझे बड़ा खिताब दूंगा। तुझे और भी बहुत कुछ देकर सम्मानित करूंगा (कुछ देर रुककर)

इधर मुट्ठी भर सेना, दूसरी ओर अनगिनत अंग्रेज शिक्षित सिपाही! ईश्वर! किस महापाप से तुमने मुझे अपंग बनाया? देश के लिए लड़ते हुए मरूंगा, उस गौरव से भी तुमने मुझे वंचित किया। उफ् मैं तो अपंग ठहरा! मैं– मैं क्या यह काम कर सकूंगा? नारायण- नारायण!

(मानसिक उत्तेजना से पियर्ली उठने की कोशिश करता है, पर उठ न पाकर फिर बैठ जाता है। तभी सुचिता का प्रवेश।)

सुचिता : स्वामी! स्वामी!

(सुचिता पास जा बैठती है और हाथों से पकड़ती है।)

पियर्ली : ओ–सुचिता, तुम...

सुचिता : आप नारायण को क्यों पुकार रहे थे?

पियर्ली : ओ– नहीं-नहीं, सुचिता! क्या नारायण सो गया?

सुचिता : सोने गया है, परंतु।

पियर्ली : तुम्हारा खाना-पीना हो गया?

सुचिता : जी, स्वामी!

(गहरी चिंता में डूबा पियर्ली तंबाकू पीता है। उसके बाद कहता है--)

पियर्ली : कल तो कृष्ण चतुर्दशी है, है न, सुचिता?

सुचिता : स्वामी, आपने यह क्यों पूछा?

(पियर्ली बाहर आकाश की ओर देखता है।)

पियर्ली : नहीं, नहीं, यों ही। बाहर घना अंधेरा देख रहा हूं। अंधेरी रात को मैं बाहर रहता हूं, तो तुम्हें बड़ा डर लगता है न? अपंग आदमी ठहरा, क्या जाने कहीं नाले-टाले में गिरकर चल न बसूं! क्या करोगी? तुम्हारी किस्मत ही ऐसी है, कि इस अपंग के साथ तुम्हें विधाता ने जोड़ दिया। मेरा यह अपंग शरीर तुम्हें बीच-बीच में सोच में डाल देता है, क्यों? सुचिता, पता नहीं तुम्हारी किस्मत में और न जाने कितना दुख लिखा है!

सुचिता : स्वामी! इस रात को आप भला इस तरह से ये अशुभ बातें क्यों कह रहे हैं? मुझे बड़ा डर लगता है। दिन भर तो ऐसे ही जहां-तहां चक्कर काटते फिरे हैं। अब जरा जल्द ही लेट जाना अच्छा है।

पियली : लेट जाऊं? सुचिता, लेटने पर भी तो मुझे शांति नहीं मिलती। तुम्हारी किस्मत में सुख लिखा नहीं है, और मेरे अदृष्ट में आराम नहीं लिखा

है। यह पूर्वजन्म का कर्म-फल है और पिताजी का सौंपा हुआ पैत्रिक ऋण है। बेचारी लवणी मुन्नी। वह शायद मेरी छाती से लगकर सोना चाहती है। उस बेचारी को तो यह पता नहीं कि जब तक पिता का वह ऋण चुका न दूं, तब तक मुझे चैन नहीं है। मै तो जीवन-मरण का मेला लगा रहा हूं।

सुचिता : आप आज यह सब क्या कह रहे हैं, स्वामी! आज कई दिनों से देख रही हूं आप बड़ी ही चिंता मे पड़े हैं! क्या बात है?

पियली : सुचिता! मेरे अंतर में बहुत बड़ा दुख है। अनेक जगह अनेक लोगों के सामने मुझे अपार कटूक्तियां, लाछनाएं सहनी पड़ रही हैं। लोग हमारे साथ बात नहीं करते, पड़ोसी हमें देखकर मुंह मोड़ चले जाते है। कोई संगी-साथी न होने के कारण बेचारी लवणी मुन्नी को अकेले-अकेले मन-मार कर खेलना पड़ता है। और तुम ॰ सारी अवहेलना, लांछना चुपचाप सहती हुई मेरे इस अपंग शरीर की संतुप्टि के लिए अपने को न्यौछावर किये हुए हो। तुम लोगो के चित्त में हमेशा बेचैनी बनी रहती है।

सुचिता : स्वामी, आप बहुत ज्यादा सोच-विचार न करें।

(पियली कुछ देर चुप रह कर कहता है--)

पियली : आज बाहर की ओर देख रही हो, सुचिता। आकाश कैसा लाल हो रहा है। लगता है, जैसे सारे आकाश में खून के धब्बे पड़े हुए हैं। बीच-बीच में ऐसा लाल है कि लगता है खून जमा हुआ है।

सुचिता : कभी-कभी आसमान ऐसे रग का हो जाता है स्वामी।

पियली : पर तुम्हें तो यह पता नहीं ... यह किसकी सूचना देता है।

(कुछ देर चुप रहकर फिर कहने लगता है)--

सुचिता, मैं कल दीपावली मना रहा हूं।

सुचिता : दीपावली! मगर कल तो दीपावली का दिन नहीं है, स्वामी!

पियली : श्रीरामचंद्र ने देवी दुर्गा का अकाल-बोधन किया था, राक्षसों के हाथों से जानकी के उद्धार के लिए और मैं यह अकाल में दीपावली मनाने जा रहा हूं, फिरंगियों के चंगुल से अपनी मातृभूमि के उद्धार हेतु।

सुचिता : मुझे तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है स्वामी!

पियली : बाद में समझ पाओगी। मैंने जो दीपावली मनाने का इंतजाम किया है, उसे देखना। उस दीपावली के दीपों के उजाले में देवालय के कलश जगमगा उठेंगे, दिखौ का पानी लाल हो उठेगा, हमारे पटाखों, फुलझड़ियों

की आवाज से कब्रगाह में सोये हुए हमारे स्वर्ग-देवता जाग उठेंगे। तुम ऐसे एकटक देख क्या रही हो सुचिता? मैं सच कह रहा हूं। इतनी बड़ी दीपावली मनाऊंगा कि उसके बाद बरफुकन के घर का नाम सुनने पर और कोई कभी असम्मान नहीं करेगा। कल जिस दीपावली का आयोजन करूंगा, उसका रंग, उसका उजाला, मेरे मरने के बाद भी चिरंतन बनकर रह जायेगा। भविष्य में हमारे देश के नौजवान पियली फुकन की इस दीपावली का अभिनय लगातार करते रहेंगे।

सुचिता : आप कौन-सी दीपावली मनाने का आयेजन कर रहे हैं? यह सब आप क्या कह रहे हैं। ऐसी बातों से मुझे बड़ा डर लगने लगता है।

पियली : डरो मत, सुचिता, डरो मत! तुम सुबह नहा-धोकर देवालय में जाकर देवता को प्रणाम कर एक दीपक जला देना, ताकि तुम्हारी मांग का सिंदूर अविचल बना रहे!
(नन्हें बच्चे को दुलराने की भांति पियली सुचिता का सिर अपनी छाती से लगाकर प्यार करता है।)

(पर्दा गिरता है।)

बारूद-घर

(बारूद-घर के पास झाड़ियों का जंगल। दूर अंग्रेजों का बारूद-घर! समय–रात। बारूद-घर की ओर के अंग्रेज शिविर से संगीत की आवाज तैरती आ रही है।

कुछ लोग झाड़ियों की ओट में और बड़े पेड़ों के तने से सटे, ठहरे दिखाई पड़ते हैं। सबने काले कपडे मजबूती से बांध कर पहन रखे हैं। दूर दिखों नदी का पानी दिखाई दे रहा है। उदयसिंह बहुत ही आहिस्ते, चुपचाप प्रवेश कर बड़ी सावधानी से इधर-उधर देखता है और एक झाड़ी के पास छि कर उल्लू की बोली की तरह आवाज कर संकेत देता है। पहले से छिपे हुए लोगों की ओर से भी वैसा ही संकेत आता है। उदय सिंह खड़ा होकर एक अंगोछा हिलाता है और उसके साथ ही पेड से उतर कर धनंजय, धनुधर, पियली बरुआ और झाड़ियों की ओट में छिपे सभी लोग उदय सिंह के पास आकर एक पेड के नीचे इकट्ठे होते हैं। दिखाई पड़ता है कि वे आपस में किसी विषय में कानाफूसी कर रहे हैं।

तभी नारायण की पीठ पर सवार पियली फुकन आता है। पियली की दोनों बैसाखियां नारायण के हाथ में हैं। नारायण पियली को अपनी पीठ पर से धीरे से उतारता है। पियली बैसाखियों के सहारे आगे बढ़ता है। इसी बीच सभी लोग चुपचाप सावधानी से आगे बढ़ पियली के पास आ जाते हैं।)

पियली : बरुआ, बारूद-घर में संतरी कितने हैं?

पि. बरुआ : (उगली से "दो" दिखाकर बताता है)

पियली : और संतरी कहां गये?

धनजय : नाच-घर में हैं।

(पियली फुकन नारायण को संकेत देता है। नारायण जंगल में चला जाता है और छह लोगों को साथ ले फिर पियली के पास आ जाता है। उनमें से चार के हाथों में बंदूकें हैं, और दो के हाथों में धनुष-बाण। नारायण को हाथों में एक छोटी-सी बारूद की पेटी है। पियली फुकन बंदूकधारियों के मुखिया को हाथ पकड़, पास लाकर कहता है–)

पियली : तू कितने दिनों से बदूक चलाता है?

बंदूकची : जब से मैं धोती पहनने लगा, तभी से चला रहा हू बदूक!

पियली : बंदूक-तोप चलाना तूने कहां सीखा था?

बंदूकची : मैं स्वर्ग-देव के अंगरक्षक दल का प्रधान बंदूकची था।

पियली : समझ गया। अच्छा- सुन! यहां से तीन सौ हाथ दूरी पर बारूद-घर का संतरी पहरा दे रहा है। तू सही निशाना लगाकर बंदूक चला सकेगा?

बंदूकची : चला सकूंगा हुजूर!

पियली : चला सकेगा? तुम सब अब बारूद भरकर तैयार हो जाओ। मेरे संकेत देने के साथ ही तू और तेरे साथ के बंदूकची सभी लगातार बंदूक चलाते रहना।

(बंदूकची दूसरों के साथ खड़ा रहता है। पियली दोनों तीरंदाजों को पास बुलाकर कहता है--)

पियली : तुम दोनों धनुष पर बाण चढ़ाये तैयार रहो। बड़ी सावधानी से गोरे सिपाहियों पर निशाना साधकर बाण छोड़ना, समझा न? (सभी सिर हिला कर बात मान लेते हैं।)

(बारूद-घर के उधर से नृत्य-गीत की आवाजें तैरती आ रही हैं। पियली कुछ कदम आगे बढ़कर इधर-उधर देख कुछ ऊबा-सा कहता है..)

पियली : नारायण, कहां वह नर्तकी तो अब तक नहीं आयी!

नारायण : मालिक! मुझे तो मामला ठीक दिखाई नहीं देता! लगता है कि वह हमें किसी मुसीबत में ही फंसा देने वाली है। औरत-जात का कुछ विश्वास नहीं।

पियली : नहीं-नहीं- नारायण, उसने स्वर्ग-देव के नाम पर, पूर्वजों के नाम पर मेरे चरण पकड़ कर शपथ खायी है, वह हमसे धोखा नहीं कर सकती!

(नारायण और पियली उत्कठा से बारूद-घर की ओर देखते रहते हैं।)

पियली : वही-वही- नारायण, देख, वह आ रही है।

(सभी उद्विग्न होकर नर्तकी के आने की दिशा में देखते हैं। इसी बीच हाथ में लंबी पलीता लिये बिजली की तेजी से नर्तकी का प्रवेश। आते ही पलीते का सिरा पियली के हाथों में दे देती है।)

नर्तकी : फुकन देवता! मैं वापस जाकर नृत्य की भंगिमा से नाच-घर के दरवाजे के पास बत्ती का उजाला दिखाकर संकेत दूंगी। आप लोग तुरंत काम शुरू कर दें। मैं अब चली।

पियली : हम सब तैयार हैं। सिर्फ तेरे संकेत की बाट जोहते रहेंगे, तू जा! (नर्तकी का प्रस्थान! पियली सहचरों की ओर देखकर कहता है)—इस काम में हाथ डालने के पहले अब हम शपथ लेंगे! तुम सभी घुटने टेक लो! (सभी पियली के पास पहुंच कर अर्ध-चंद्राकार हो, घुटने टेकते हैं।)

पियली : हम स्वर्ग-देव के नाम पर शपथ ले रहे हैं...

सभी : हम शपथ ले रहे हैं...

पियली : विश्वासघात नहीं करेंगे।

सभी : विश्वासघात नहीं करेंगे।

पियली : हम यह काम करके ही रहेंगे!

सभी : हम यह काम करके ही रहेंगे!

पियली : देवी! गोरे विदेशियों को खा डालो!

सभी : देवी! गोरे विदेशियों को खा डालो।

(सभी उठ जाते हैं)

पियली : अब जाओ! तुम लोग निश्चित स्थान में छिपे रहकर हमारे संकेत की प्रतीक्षा करो।

(सभी झाड़ियों की ओट में जाकर अपनी अपनी जगह तैयार रहते हैं। पियली और नारायण पलीते को पकड़े रहकर आग लगाने के लिए तैयार हो, तल्लीनता से बारूद-घर की तरफ देखते रहते हैं।)

नारायण : मालिक! वह देखिये, नर्तकी बत्ती से संकेत दे रही है।

(पियली उधर देखता है। बत्ती के उजाले का संकेत देखकर कहता है--)

पियली : नारायण! आग ला-आग ले आ!

(पियली पलीता पकड़े रहता है। नारायण उसमें आग लगा देता है। पलीते की बारूद जलाती हुई आग आगे बढ़ती है। पियली और नारायण स्तब्ध-से उस ओर देखते रहते हैं। गहरा सन्नाटा, सिर्फ बारूद-घर के शिविर से नाच-गाने की धीमी-सी आवाज तैरती आती है। कुछ देर बाद बारूद-घर में आग लग जाती है और बारूद के विस्फोट की भयंकर आवाज होती है। साथ ही पियली दूसरों को बंदूक और बाण चलाने का संकेत देता है। बंदूक के गगनभेदी शब्द से रंगमंच कांप उठता है। पियली खुद भी जमीन पर बैठकर बदूंक चलाने लगता है। नारायण पियली को बारूद देता रहता है। तीरंदाज बाण चलाता है। बारूद-घर की ओर शोर सुनायी पड़ता है। नेपथ्य में खतरे के संकेत का बिगुल बज उठता है। साथ ही घंटी बजने की आवाज आती है। बारूद-घर की आग के उजाले से रंगमंच के बीच-बीच में उजाला हो उठता है। (रंगमंच पर उजाला होने पर लोग स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं। चारों ओर शोरगुल, बंदूक की आवाजें, और बीच बीच में आग की लपट के उजाले से पूरा दृश्य भयावह हो उठता है।)

(तभी उदय सिंह दौड़ता हुआ पियली के पास आ जाता है।)

उदय सिंह : फुकन जी, बारूद-घर में आग क्या खूब लगी है! अब तो गोरी पलटन आकर हमें घेर लेगी। हमें तुरत इस जगह को छोड़ देना चाहिए।

पियली : उदय सिंह, लोगो को साथ लेकर तुम तेजी से भाग जाओ। दिखौ नदी में पनसुइया नाव तैयार है। तुम लोग तुरंत चले जाओ। मैं और नारायण उस खेल-नाव से जायेंगे।

नारायण : मालिक! आप भी चलिए।

उदय सिंह . जी हा, फुकन जी, आप भी चलिए।

पियली : तुम लोग जाओ। मै बदूक चलाते रह कर अंग्रेजों को रोके रखूंगा। समय पर मै और नारायण भी निकल जायेंगे। जाओ ..

(उदय सिंह के साथ सारे लोग चले जाते है। पियली और नारायण रह जाते हैं। पियली अकेले बदूक चलाता रहता है। बारूद-घर की ओर से भी गोलियां आती रहती है। नारायण बारूद देता रहता है और सिर उठाकर इधर-उधर देखता रहता है। कुछ देर बाद ही धनंजय और धनुधर दौड़ते हुए आते है।)

धनंजय : फुकन जी, सर्वनाश हो गया।

पियली . क्यों, क्या हो गया?

धनंजय . किसी ने पनसूइया नाव की रस्सी काट कर नाव को बहा दिया। अब सिर्फ वह खेल-नाव ही कुछ दूरी पर है। उदयसिह दूसरे लोगों के साथ तैर कर पार चला गया है। पियली बरुआ घाट पर ही हैं।

पियली तुम लोग...

धनुधर · आपको अकेले छोडकर हम नही जायेंगे!

पियली · बात मानो! खेल-नाव लेकर तुम लोग अभी अभी निकल जाओ। नारायण, तू भी जा। मैं अकेले इन गोरे फिरगियो का मुकाबला करूगा। तुम सभी भाग जाओ।

नारायण : नही-नही, मालिक! आप भी चलिए।

पियली · हम सब तो उस नाव से जा नही सकेंगे। नारायण, मेरे बारे मे सोचने की जरूरत नही। मुझ अपग के मर जाने पर भी तुम लोगो को जिंदा रहना ही है। जाओ... चले जाओ!

धनुधर : नही फुकन जी, यहां मैं ही रहूंगा ... आप चलिये!

नारायण : मालिक! आप आइये, मेरी पीठ पर चढ़ जाइये!

पियली : सुन, ज्यादा बहस न कर! मै जो करने के लिए कह रहा हू, वही कर! जा- जा- नारायण- चला जा!

नारायण नहीं मालिक! आपको जाना ही होगा। चढ़िये पीठ पर। बचपन से ही सेवक बने रहकर, पीठ पर चढ़ाकर बड़ा किया। अब जान भले ही जाय पर आपको छोड़कर नहीं जा सकता। मालिक, आप चढ़िये, मेरी पीठ पर चढ़ जाइये।

(नारायण पियली को पीठ पर चढ़ाने के लिए झुकता है। तभी कूपर की गोली उसके शरीर में आ लगती है। नारायण 'उफ!' चीखकर गिर पड़ता है। धनंजय, धनुधर धीरे-धीरे पीछे हट जाते हैं। मगर गोरों की फौज उन्हें चारों ओर से घेर लेती है। सिपाही 'बेयोनेट' लगी बंदूकों की नोक से उन्हें धकियाते ले जाते है। वे कैद हो जाते हैं। फौज के साथ पीछे की ओर से न्यूविल प्रवेश करता है। पियली, धनजय और धनुधर दंग-से खड़े रह जाते हैं। तभी हाथ में पिस्तौल लिये कर्नल कूपर का प्रवेश। साथ ही दो सिपाही पियली बरुआ को पकड़ कर ले आते हैं।)

कूपर : कैप्टेन न्यूविल! प्लीज टेक चार्ज आफ दि लेम मैन एंड हिज गैग एंड टेक दैम टु अवर कैंप। लैट मी फाइंड आउट दि अदर्स।

(कूपर का प्रस्थान)

न्यूविल : प्रोसीड आन, क्विक।

(पियली उसकी बात पर कान न दे एकटक नारायण की ओर देखता रहता है।)

पियली : नारायण!

न्यूविल : क्विक- क्विक-

(रिवाल्वर की नोक से पियली की पीठ पर कोंच देता है। गिरे हुए नारायण की ओर देखता हुआ पियली एक लंबी आह भरकर धीरे-धीरे आगे बढ़ जाता है। साथ ही सबका प्रस्थान।)

(पर्दा गिरता है)

न्यायालय

(शिव सागर की कचहरी। न्यायालय का कमरा। न्यायासन पर कर्नल कूपर बैठा है। कागजात लिये बंगाली पेशकार बैठा हुआ है। एक ओर असामी का कठघरा। एक ओर न्यायविचार देखने के लिए आये लोग कतारों में बैठे हैं, कुछ लोग खड़े हैं। दूसरी ओर हरनाथ बरुआ, दुतिराम, न्यूविल, मेथी अदि बैठे हैं। पेशकार के पास ही एक चपरासी खडा है। न्यायालय के कमरे के विभिन्न हिस्सों में गोरे सिपाही सावधान मुद्रा में खडे हैं। मुकदमें का संक्षिप्त वर्णन कर रहा है। तभी परदा उठता है।)

न्यूविल : लेकिन माननीय महोदय, मैं यह कहने की अनुमति चाहता हूं कि पियली फुकन ने जिस षड्यंत्र का कार्यक्रम बनाया था, उसके साथ जरूर एक बड़े दल का हाथ रहा है। क्योंकि एक दल अगर इसके साथ न होता तो ऐसा साहसपूर्ण काम पियली फुकन जैसे एक अपंग व्यक्ति के लिए कर पाना संभव न होता।

कूपर : ऑलराइट। पेशकार बाबू—आसामी से जबानबंदी लेना चाहिए।

पेशकार : दारोगा बाबू। आसामी लोग से जबानबंदी लिया जाय।

हरनाथ : फुकन! अब आप लोग अपनी जबानबंदी दें।

पियली : हम जबानबंदी नहीं देंगे।

हरनाथ : पर जबानबंदी देने का नियम है।

सभी : हम नही देंगे जबानबदी।

कूपर : तब ठीक है, इंस्पेक्टर। हमें इन पर दबाव डालने की जरूरत नही। पियली फुकन! मैगेजिन में आग लगाया टुम? (दूसरे अभियुक्त से) टुम लोग फुकन का मदद किया?

धनंजय : हमें कुछ भी नहीं कहना है।

धनुधर : और कहने को होने पर भी कहेंगे नही।

पि. बरुआ : अगर कुछ कहना हो, तो फुकन जी ही कहेंगे।

कूपर : पियली फुकन! टुम आग लगाया था?

पियली : हां, लगायी थी आग हमने।

कूपर : (कागज पर जबानबदी लिखता जाता है।) वेरी गुड। लेकिन टुम नेम

		हाय, लंगरा आडमी हाय, जरूर टुमारा साठ आउर भी आडमी आलबट् राहा हाय!
हरनाथ	:	फुकन जी, यही मौका है, आपको किस-किसने आगे बढ़ाया था— बता दीजिये उनके नाम!
पियली	:	(हरनाथ की ओर तिरछी निगाह डालकर उसके बाद मुंह मोड़ कर कहता है) साहब, मेरे इस काम में किसी ने मदद की भी है, लेकिन उसका नाम मैं नहीं बताऊंगा।
कूपर	:	हां-हां, लेकिन मरने का वास्टे टुमारा डर नेही लागटा?
पियली	:	मरने का डर? मरने का डर लेकर हमने इस काम में हाथ नहीं बढ़ाया है।
कूपर	:	टब किसका लिये?
पियली	:	याद रखिये साहब — हालाकि मेरी ऐसी हालत है, मै अपग हू, फिर भी मुझमें बुद्धि, परामर्श और साहस की कोई कमी न थी।
न्यूविल	:	माननीय महोदय! इसकी देशभक्ति ने इसकी सामान्य बुद्धि को अधा बना दिया था। यह बात इसे याद नहीं रही कि बारूद-घर लपटों मे चारों ओर उजाला भी हो सकता है।
कूपर	:	इसे मूर्ख बनाया गया है। (पियली से) लेकिन पियली फुकन, टुमारा आडमी सबको हाम मेगेजिन का लाइट मे देखा पाया हाय! इढार-उढार भाग लिया। उन लोग का नाम बतला डो।
पियली	:	मेरी जबान से तुम दूसरों का नाम सुन नहीं पाओगे साहब। इस काम के लिए सिर्फ मैं ही उत्तरदायी हूं।
हरनाथ	:	फुकन! अपने पांव पर खुद कुल्हाड़ी न मारिये। साहब की बात मान लीजिये। आप लोगो की भलाई होगी।
पियली	:	हरनाथ, गोरे विदेशियों की दारोगा-पदवी पाकर अपने अस्तित्व, अपने आत्मसम्मान की तिलांजलि न दो।
कूपर	:	टुम लोग कसूर मानटा है या नहीं?
पियली, धनंजय आदि सभी	:	कसूर? कैसा कसूर?
न्यूविल	:	मैगेजिन में फायर डेने का कसूर। लोगों को मारने का कसूर.. बगावट करने का कसूर! हा... माननीय महोदय! 'कमता राजकुमार' के नाम लिखा पियली फुकन का यह पत्र है। इसमें 'कमता राजकुमार' से मदद मांगी गयी है। ये भी कसूर है।

पियली : (व्यंग्यात्मक हंसी हंसकर) कसूर! बगावत! कैसा कसूर, कैसा विद्रोह! अगर देश को स्वतंत्र करना भी दोष हो, तो पियली फुकन जरूर दोषी है। मगर इसका इसका विचार करने का अधिकार तुम लोगों में कहां है साहब? मैं अगर सचमुच विद्रोही हूं, तो मेरा न्याय करेंगे असम के राजा ... असमिया जनता – तुम लोगों का वह अधिकार नहीं हैं।

कूपर : कैप्टेन न्यूविल! प्लीज कंटीन्यू योर प्रोसीक्यूशन।

न्यूविल : योर ऑनर! बर्मीज को हटाने के वास्टे गोरा पलटन- असम देश के निमंत्रण पर असम आया, हाय! गोरा पल्टन बर्मीज को हटाय दिया। देश में शांटि ले आया। हा– लेकिन अभी भी देश का खटरा है। असमीया आडमी का जोर भी बहुत कमटी हाय। उसी वास्टे प्रजा को निरापड के लिए इंराज सरकार गोला बारूड का मैगेजिन बनाया। गोला-बारूड देश का खटरा के लिए रखा हाय। नेही तो डुश्मन साब अटैक करके मारेगा। लेकिन पियली फुकन आउर ये आडमी सब अपना स्वार्थ को वास्टे प्रजा का बहोट अन्याय किया। आज मैगेजिन में गोला बारूड नेही हाय। दुश्मन को केइसे मारा जायेगा? आज फिर बर्मीज अटैक हो जायेगा टो हमारा टोप केइसे चलेगा? पलटन सब लड़ाई केइसे करेगा?

माननीय महोदय, मैं यह कहना चाहता हूं कि यह केवल पहली बार की बात नहीं है। पियली फुकन और उसका परिवार पहले भी देश से विश्वासघात कर चुका है। जब, माननीय असम के राजा शांति से देश पर शासन करते थे पियली फुकन का पिता बदन बरफुकन, ऐसा ही करतूत कर असम के इतिहास में जो कुछ किया उसकी तुलना नहीं। बदन बरफुकन ने देश को बरबाद कर दिया। ... शैतान और दानव दोनों मिलकर जैसा कर सकते हैं, उस एक आदमी ने वैसा ही किया था।

पियली : अब पियली का न्याय होगा। मेरे पिता बदन के नाम पर कलंक लगाकर असत्य की अवतारणा न करो साहब! उनके कामों की आलोचना करने का तुम लोगों को कोई अधिकार नहीं।

अभियुक्तगण: हां- हां, कोई अधिकार नहीं।

कूपर : आर्डर! आर्डर!

न्यूविल : माननीय महोदय, यहां इस षडयत्र का नायक पियली फुकन खड़ा है जिसने अपने दल के साथ हमारे बारूद-घर को नष्ट कर दिया और इस तरह से इस देश को दुश्मन के लिए खुला छोड़ दिया। यह व्यक्ति असम

के कोने-कोने में विख्यात है। उसकी वीरता के लिए नहीं, उसकी चतुराई के लिए नहीं, उसकी देशभक्ति के लिए नहीं, परंतु कुख्यात है उसकी लगातार अनुशासनहीनता, भयंकर षड्यंत्र और सबसे ऊपर उसके जघन्य कार्यकलापों के कारण।

कूपर : क्या आपका कोई ऐसा गवाह है, जिससे जिरह किया जाय?

न्यूविल : येस - योर ऑनर। दारोगा बाबू! साखी को हाजिर करो।

हरनाथ : पेशकार बाबू। नर्तकी को हाजिर कराया जाय।

पेशकार : चपरासी। ओ चपरासी। नाचने वाली को ले आओ।
(चपरासी जाता है और कुछ देर बाद नर्तकी को लेकर आता है। नर्तकी को कठघरे में खड़ा कराया जाता है।)

न्यूविल : माननीय महोदय, इसके बाद का मुकदमे का हिस्सा मेरी ओर से इंस्पेक्टर आगे बढ़ायेंगे। दारोगा बाबू साखी की जबानबंदी लीजिये।

हरनाथ : ठीक है, साहब! नर्तकी - तू शपथ कर कि मैं जो कहूंगी सच कहूंगी।

नर्तकी : जो कहूंगी, सच कहूंगी।

हरनाथ : ठीक है। तू इन असमियों को पहचानती है? (नर्तकी सभी की ओर देखती है) देख ले—अच्छी तरह से देख ले!
(नर्तकी पियली फुकन की ओर देखती है)

नर्तकी : मैं सिर्फ एक को ही पहचानती हूं।

हरनाथ : किसे? पियली फुकन को?

नर्तकी : जी हां!

हरनाथ : अच्छा। हां, तो पिछले शनिवार को अंग्रेजों के बारूद-घर में आग लगी थी, वह बात तू जानती है न?

नर्तकी : जी हां, जानती हूं!

हरनाथ : जानती है? अच्छा, बता तो तुझे यह कैसे पता चला?

नर्तकी : मैं उस समय बारूद-घर के शिविर में थी।

हरनाथ : बारूद-घर में आग कैसे लगी?

नर्तकी : किसी ने आग लगायी थी, इसीलिए।

कूपर : यह कोई दुर्घटना नहीं है।

न्यूविल : और इसके लिए कोई उत्तरदायी जरूर है। मी लार्ड, उसके लिए जरूर कोई न कोई एजेंट रहे हैं, और इसके पीछे एक षड्यंत्र है। अरी, यह आग कौन लागाया जानती है?
(नर्तकी चुप है)

कूपर : कह दे—कुछ डर नेंही हाय!
(नर्तकी चुप)

हरनाथ : डरने की कोई बात नहीं, तू बता दे किसने लगायी आग?
(नर्तकी कुछ बोलती नहीं।)

हरनाथ : बता दे।

कूपर : आदालट में साच्चा बोलना चाहिए। टुम अगर जानटा हाय टो नाम बाटला डो।

नर्तकी : साहब! बारूद-घर मे आग मैंने ही लगायी थी।
(नर्तकी की बात सुनकर कूपर, पियली और हरनाथ दंग-से रह जाते हैं और लगभग एक साथ कहते हैं)

कूपर : क्या?

पियली : यह झूठ है।

हरनाथ : तूने आग लगायी थी?

पियली : यह झूठ है। बिलकुल झूठ। बारूद-घर में आग लगाने का उत्तरदायी सिर्फ मैं हूं और कोई नहीं।

नर्तकी : अदालत में--लोगों के सामने--मैं झूठ नहीं बोलती।

कूपर : (हंसता हुआ) अरे, टुम टो रोज हम लोगों का केंप में डास करटा टा। टुम केइसे आग लागाया? ठीक बाट बोलो। टुम अगर डोर्सा का नाम जानटा हाय, टो बाट्ला डो। नेइ जानटा टो चला जाव।

नर्तकी : आग लगाने का पलीता मैंने ही दिया था

पियली : नर्तकी?

कूपर : क्या है?

न्यूविल : माननीय महोदय, ऐसा लगता है कि यह नर्तकी होश मे नहीं है। (नर्तकी से) एइ। टेरा माठा खराब हो गिया हाय।

नर्तकी : धर्म के नाम पर शपथ कर चुकी हूं--मैं झूठ नहीं बोलूगी। आज इतने सारे लोगों के सामने मैं धर्म की गवाही देकर कहती हूं--बारूद-घर में आग मैंने ही लगायी थी।

पियली : कभी नहीं। नर्तकी। साहब! तुम लोग खुद मुझे पकड़ लाये हो। अब न्यायालय में तुम्हें अनावश्यक गवाह आदि लाने की कोई जरूरत नही। तुम्हें मैं बता रहा हूं--बारूद-घर मे आग मैंने ही लगायी थी।

न्यूविल : माननीय महोदय, यह तो हर आदमी जानता है कि जिस तारीख को यह घटना हुई थी, उस दिन यह नर्तकी हमारे शिविर में थी। मैं निश्चित

रूप से कहता हूं कि उसके दिमाग में झटका लगा था और वह बिलकुल होश-हवास खो बैठी थी। इसलिए इसका मंतव्य किसी भी समझदार व्यक्ति के लिए स्वीकार करने लायक नहीं है। अतः इसकी बातों को दर्ज नहीं किया जाना चाहिए।

कूपर : ऑलराइट। पेशकार बाबू। साखी को जाने डो।

पेशकार : चपरासी!

(पेशकार चपरासी को इशारा करता है। चपरासी नर्तकी को ले जाता है।)

कूपर : कैप्टन न्यूविल, प्लीज रीड आउट योर चार्जिस।

न्यूविल : हिअर आर दि चार्जिस– योर आनर!

(कागज पढ़कर)

1. ही सेट फायर टु दि मैगेजिन आफ शिव सागर फॉर विच ही इज लायेबल टु दि चार्ज आफ आर्सन।
   शिव सागर का मैगेजिन में आग लागाने का अपराढ को वास्टे डोसी हाय।
2. ही एंड हिज पार्टी–इन्क्लूडिंग दोज हू आर एट लार्ज अपटिल नाउ शॉट सिक्स सोल्जर्स ओन ड्यूटी आफ विच टू आर इंग्लिश एंड फोर नेटिव्ज फार विच दे आर लायेबल टु बी चार्ज्ड फार मर्डर।
   डो इंगलिश पल्टन आउर चार नेटिव पल्टन को मारने का अपराढ को वास्ते पियली फुकन आउर आसामी लोग डोसी हाय।
3. हिज इटैन्शंस फॉर सैटिंग फायर टु दि मैगेजिन प्रोबेबली मैंट फॉर क्रिएटिंग डिसआर्डर इन दि कंट्री टु दि डेट्रीमैंट ऑफ दि कंट्रीज पीस, फार विच ही इज लायेबल टु वी चार्ज्ड विद ट्रीजन।
   वह डेस का डुश्मन हाय। ढानंजय गोहॉइ ढानुढार होहाइ इये लोग बंडुक-गन पावडार देकर पियली फुकन का मडड किया हाय। इसलिये उन लोग भी डोसी हाय। हां–लेकिन पियली बरुआ वहां में नहीं ठा। नडी किनार में ठा। उसका ऊपर में भारी "चार्ज" हामारा नेहीं हाय।

कूपर : (अभियुक्तों से)टुम लोग आपना डोस मानता हाय?

अभियुक्त सभी : हम नहीं मानते।

पियली : और साहब। तुम्हें किसी तरह का न्याय-विचार करने का अधिकार है, यह वात भी हम नहीं मानते। मैंने बारूद-घर में आग लगायी थी–देशके

दुश्मनों को यहा से निकाल-बाहर करने के उद्देश्य से। देश के दुश्मन हो तुम लोग। शांति-स्थापना की दुहाई देकर तुम लोगों ने जो गुंबद वाली कचहरी बनायी है, फिर से बर्मियों का हमला हो सकता है, यह आशंका जगाये रखकर तुम लोगों ने जो लाल-पलटन रखी है, और अपने रहने के लिए चार-छप्परों वाले बंगले बनवाये हैं--ये सब कुछ गरीब, दुखी असमिया लोगों के प्रति उदारमना ईस्ट इंडिया कंपनी के महान सौहार्द को ही प्रकट करते हैं। तुम लोग चतुर बनिये-जाति वाले हो। तुम्हें यह बखूबी पता है कि बर्मियों के आक्रमण से जर्जर असमिया प्रजा तुम लोगों के ऐसे कामों का विरोध नहीं कर सकती और उसी का मौका पाकर तुम लोग भी अपना साम्राज्य कर ले सकते हो। तुम लोगों के इस साम्राज्य-स्थापना के सपने को चूर-चूर करने के लिए ही मैने बारूद-घर में आग लगायी थी।

कूपर : ऑलराइट। हाम पांच मिनट को वास्ते अंदर जाता है। बहस पांच मिनट बंड रहेगी। इसका बाद टुम लोग पर हुकुम जारी किया जायेगा। लेकिन पियाली फुकन! आखिरी बार हाम टुम लोग को फिर सोच कर डेखने का वास्ते टाइम देता हाय। टुम लोग फरार आडमी लोग का खबर बटला देगा टो हाम टुम लोग का पनिशमेंट, आइ मीन सजा कम करने का वास्टे कसिडर, आइ मीन विचार कर सकटा हाय। हा--टुम को छोड़ भी दे सकटा हाय।

(सभी गोरे साहबों का प्रस्थान। हरनाथ उठकर पियली के पास जाता है।)

हरनाथ : फुकन जी! जबकि आप लोग चार आदमी पकड़े ही गये हैं तब तो अपने छुटकारे की व्यवस्था कर उन शेष कुछ लोगों के नाम बता देने से ही तो काम हो जाता है। कर्नल साहब ने क्या कहा, आपने तो खुद ही सुन लिया है न? खास कर आपके बारे में वे तरस खा रहे हैं। और भी एक बात है फुकन! राजनीति में कोई धर्म नहीं होता। अगर उनके नाम आप बता दें तो भला कौन-से रौरव नरक में जा पड़ेंगे?

पियली : मैं उन सबके नाम नहीं बताऊंगा।

हरनाथ : आप कुछ के नाम बता दें तो शेष लोगों को मैं...

पियली : हरनाथ, मित्र के रूप में हो, या चाहे कंपनी के अधिकारी के रूप में ही हो, मेरी जबान से उन शेष लोगों के नाम कभी निकाल नहीं सकते तुम। तुम मुझे परेशान न करो।

(साहब लोग फिर से प्रवेश करते हैं। हरनाथ अपने आसन पर जा बैठता है।)

कूपर : नाऊ, पियाली फुकन, फरार असामियों के नाम बटलाने को राजी हाय?

पियली : साहब, जिस बात को बताने से मैंने एक बार इनकार कर दिया है, फांसी के फंदे का डर दिखला कर तुम उस बात को कभी मेरी जबान से निकलवा नहीं सकते।

कूपर : आलराइट!

(कागज पर राय लिखकर उसके बाद पढ़ के सुनाता है।)

पियली फुकन, धनंजय गोंहाइ, धनुढर गोंहाइ, आउर पियाली बरुआ–मैगेजिन में आग लगाने के अपराढ में आउर देश को शांटि आउर शक्ति नष्ट करने को अपराढ को वास्ते टुम लोग डोसी प्रमाण हुआ हाय। लेकिन पियाली फुकन को हामने मैगेजिन में नहीं पाया ठा। उसका मटलब प्रमाण नेही हुआ हाय। इसलिए आदालट उसको छुटकारा डेटा हाय। धनंजय गोहांइ को अडालट बारह बरिष, आउर धनुढर को डस बरिष–मटलब काठोर काराबास का हुकुम डेटा हाय। आउर पियाली फुकन। टुम सब लोग का लीडार हाय–सब षड्यंत्र आउर बगावट का कारण टुम हाय। इसलिए टुमारा कसूर भी बहुट जाडा हाय। अदालट टुमको फांसी का हुकुम देटा हाय।

सभी : (अचरज से) फांसी का!

(फांसी का शब्द उच्चारित होते ही नेपथ्य में एक साउंड इफैक्ट होता है और सारे अभियुक्त एक साथ आगे बढ़कर पियली फुकन को बाहों में भर लेते हैं। मंच पर सन्नाटा। पियली की जबान से अचानक एक अस्फुट-सी आवाज निकल जाती है, परंतु अपने को संयत कर वह गंभीर हो, खड़ा रहता है। जन्मि संयमित न रह पाने के कारण आंसू बहाने लगता है। नेपथ्य में बारह बजने का घंटा बजने की आवाज होती है। इसके बाद पियली संयमित होकर कहता है।)

पियली : कानून की ओट में, सत्ता का दुरुपयोग कर तुम लोगों ने मुझे फांसी दी है। फांसी के फंदे को गले लगाने वाले इस पियली फुकन की जबानबंदी के दो शब्द तुम अपने उस विचार के कागज पर लिख लो साहब! मैं कहता जाता हूं–

आज तुम लोग भले ही एक पियली फुकन को फांसी दे दो, पर ऐसा दिन भविष्य में आने वाला है–जबकि छह सौ वर्ष स्वतंत्रता में

सांस लेने वाले असमिया लोग इस पराधीनता की ग्लानि सहन न कर पाने के कारण तुम लोगों के इस आधिपत्य के खिलाफ घर-घर में सिर उठाकर जग उठेंगे। और तब तुम लोग कितने पियली को सजा दोगे? ऐसा एक दिन आनेवाला है, जिस दिन सिपाही-संतरियों से घिरे बारूद-घर, नुकीली चोटी वाले कचहरी-घर, चार-छप्परों वाला मचान-घर--इन सबको छोड़-छाड़ कर अपने अनगिनत बोटों पर चढ़कर, जिधर से आये थे, इस देश को छोड़ उसी ओर तुम्हें वापस जाना पड़ेगा। यह तुम लोगों के प्रति मेरी आवेश में कही बात नही है, यह मेरी भविष्यवाणी है--अपने उस कागज पर लिख रखो। बारूद-घर में आग लगाकर मैंने असमिया जनों को सिर्फ उपदेश ही नहीं दिया है, उदाहरण भी दिखा दिया है।

कूपर : असमिया अढिकारी आप लोग बाटाइये आप लोग के देश मे क्या टरीका से देशड्रोही को फांसी डेटा हाय?

(अधिकारीगण एक दूसरे के मुंह की ओर देखते है। कोई कुछ नहीं कहता।)

कूपर : बाटाइये-बाटाइये। क्यूं नेही बाटाटा।

दुतिराम : काठ-काकती और बरभांडार बरुआ हमारे देश के सारे नियम कानून जानते हैं। ये ही बतायें। वे ही बतायें। वे जो कुछ कहेंगे, हमारी भी वही राय है।

कूपर : कौन बरभांडार बरुआ जानटा हाय? डीवान मोनिराम बरभांडार बरुआ?

दुतिराम : जी हां, साहब!

कूपर : डीवान को सेलाम बाटाइये।

पेशकार : चपरासी, दीवान जी को तुरंत आने के लिए कहो।

(चपरासी का प्रस्थान और मणिराम के साथ पुन: प्रवेश।)

कूपर : टुम लोग के देश में देशड्रोही को फांसी केइसे डेटा हाय-- हामको बाटलाओ।

मणिराम : साहब! अदालत में अगर यह प्रमाणित हो जाय कि कोई व्यक्ति राजद्रोही है, तो उसके गले में फटी मेखला[1] डाल कर--

सारे अभियुक्त--मणिराम--

मणिराम : हां, तरह-तरह की दुर्गति कर मार डालना ही हमारे देश का नियम है।

---

1. असमिया महिलाओं का पहनावा

जन्मि : (लोगों को धकेल कर मणिराम की ओर लपक कर) हरामखोर, कंपनी का गुलाम!

हरनाम : (विरक्ति से) छिः दीवान जी! यह हमारे देश का दस्तूर नहीं है।

धनंजय

धनुधर : कभी नहीं है।

(समूचे रंग मंच पर विरोध और विक्षोभ की भावना दिखाई पड़ती है।)

कूपर : आर्डर! आर्डर!!

(सिपाही लोगों को धकेलकर पीछे ले जाते हैं।)

बरभांडार बरुआ की बाट जरूर जारी रहेगा!

पियली : मणिराम! तू भी दुबरा काकति[1] वंश का है और मैं भी सातधरीया आहोम[2] के दुबरा वंश का हूं। मुझे फांसी देकर मरवाने पर भी तेरा पेट नहीं भरा है? तेरा कलेजा ठंडा नहीं हुआ है? सज्जन वंश में जन्म लेकर प्रतिष्ठित आदमी के मरने के समय में ऐसा ज्वलंत अपमान करवा कर ही तुझे संतोष मिला है? जिस अपराध के कारण मेरी यह दशा हुई है–उसके लिए मुझे जरा भी दुख नहीं। परंतु मरने के समय ऐसा घोर अपमान देकर मुझे मरवाया है–इस कारण अपने गले में फांसी का फंदा डाले हुए मैं अपने अंतर से यह कहे जाता हूं कि जो फंदा मैंने कर्म करके पाया है, वही फंदा अकारण ही तेरे गले में पड़ेगा।

(पर्दा गिरता है)

1. आहोम राज्य के प्रतिष्ठित सामंतों के वंश।
2. आहोमो के प्रतिष्ठित सात परिवार।

फांसी

(समय—सुबह। शिव सागर जेलखाने का सामने का हिस्सा। दरवाजे पर बारह सशस्त्र संतरी हैं। एक ओर फांसी का फंदा दिखायी पड़ता है। जेलखाने के दरवाजे के सीधे आने-जाने का बीच में एक मार्ग है। उस मार्ग के दोनों ओर फांसी देना देखने के लिए आये हुए लोगों की भीड़ है। कुछ लोग बैठे रहते हैं, और कुछ खड़े रहते हैं। एक ओर पियली की मां, सुचिता और लवणी का हाथ पकड़ जन्मि खडा है। नेपथ्य में छह बजने की घंटी सुनायी पड़ती है। कर्नल कूपर, मेथी और हरनाथ बरुआ का प्रवेश। कूपर जेल के दरवाजे की ओर आगे बढ़ता है और सिपाही सलाम कर जेल का दरवाजा खोल देता है। कूपर जेल के अंदर चला जाता है। हरनाथ और मेथी बाहर रहते हैं।

सभी लोग गंभीर हैं। चारों ओर निस्तब्धता! जेलखाने के अंदर पियली अपने साथी धनंजय और धनुधर को बांहों में भरकर विदाई लेता दिखायी पड़ता है। उसके बाद कूपर निकल आता है। साथ ही चार सिपाही घेर कर पियली फुकन को जेल के अंदर से निकाल लाते हैं।

जेल का दरवाजा पार कर निकल आते ही पियली को देखकर लवणी "पिताजी, पिताजी" कहकर चीखती हुई जन्मि के हाथों से छूटकर पास जाना चाहती है। जन्मि धीरे से उसे गोद में उठा लेता है। पियली क्षण भर के लिए विचलित होता है। पर संयमित होने के लिए कोशिश कर आगे बढ़ता रहता है। मंच के बीचों-बीच पहुंचते ही सभी ठहर जाते हैं। कूपर दो कदम आगे बढ़ कर पियली से कहता है)

कूपर : पियली फुकन! टुमारा ऊप्पर में जो हुकुम जारी किया गया है उसको फिर एक डफे पढ़ के बाटलाटा हाय!
(पढ़कर सुनाता है)
शिव सागर मैगेजिन में आग लगाने का अपराढ में आउर कपनी पलटन को मारने का आपराढ में, आउर देश में शांटि भंग करने का अपराढ में आउर शक्टि बरबाड करने को आपराढ में आडालट टुमको डोसी बनाया हाय। इस क़सूर को वास्टे आडालट टुम को फांसी डेने का हुकुम डेटा हाय!
(घड़ी देखता है।)

आभी फांसी का समय हो गिया। टुमारा कोई इच्छा हाय तो आडालट को बाटलाओ। टुमारा आखिरी इच्छा पूरा करने का वास्ते आडालट बिचार कर सकटा हाय!

पियली : मेरी कोई भी इच्छा नहीं है।

कूपर : कानून का डस्तूर मान के हाम ट्म को डस मिनट समय डेटा हाय। (फिर घड़ी देखता है।)

टुमारा कोन-कोन आडमी रिलेसन हाय? आई मीन, टुमारा कोई अपना आडमी हाय टो टुम बात चीट कर सकटा हाय! आडर धरम को वास्ते ईस्सर को भी "प्रेयर" कर सकटा हाय।

(कूपर की बात सुनकर पियली कूपर की ओर देखकर कुछ कहना चाहते हुए भी रुक जाता है, और बिना कुछ कहे जनता की ओर आगे बढ़ जाता है। जन्मि आगे बढ़ कर पियली को बाहों में भर लेता है और शोक के मारे भर्राई आवाज में कहता है।)

जन्मि : पियली– (लगता है पियली का मन दुनिया के हर्ष-विषाद से बहुत ऊपर है। उसका चेहरा पत्थर की प्रतिमा की भाति अस्वाभाविक रूप से स्थिर है।)

पियली : भैया रोओ मत! मुझे तुम लोग खुशा-खुशी विदा दो!

(लवणी, जन्मि की गोद से उतर कर 'पिताजी, पिताजी' कहती हुई पियली को बाहों से पकड़ लेती है। पियली के बिटिया को गोद में लेने का प्रयास करते ही जन्मि उसे उठा लेता है। पियली लवणी को प्यार कर चूम लेता है।)

लवणी : चलो, हम घर चलें पिताजी, चलो, हम घर चलें!

पियली : जाऊंगा बेटी! कुछ ही देर बाद, बिलकुल अपने घर चला जाऊंगा। (पियली मां के पास जाता है। मां फूट-फूटकर रोने लगती है।)

पि. मां : पियली! मेरे लाल!

पियली : किस्मत में दुख ही लिखवा लायी हो अम्मां! अब रोकर क्या होगा? मत रोओ! मेरे चले जाने पर जितना चाहो जिंदगी भर रोती रहना। ठहर, मैं अपने आखिरी कामों को कर लूं!

(सुचिता रोती रहती है। जनता में से भी दो-एक की रुलाई सन कर पियली लोगों की ओर देखता हुआ कहता है)

पियली : तुम लोग यहां किसलिए आये हो? बर्मियों को लाने वाले बदन के गले में फटी मेखला डालकर गोरे विदेशी फांसी कैसे दे रहे हैं, यही देखने

के लिए? (लोग कुछ कहे बगैर सिर झुकाये सुनते रहते हैं।) कंपनी के बारूद-घर में मैंने आग लगायी थी, इसी कारण फिरंगियों ने न्याय-विचार कर मेरे गले में फांसी का फंदा डाल दिया है, परंतु मेरे देश के लोगों ने मेरे गले में डाली है फटी मेखला। किसलिए? मैंने कौन-सा देशद्रोह किया था? किस महापाप के कारण मेरे मरण-काल में तुम लोगों ने यह लांछना ओढ़ा दी है? कंपनी क्या तुम लोगों के दिली कुटुंबी हैं, जिस कारण उन्हें देश से निकाल-बाहर करने में तुम लोगों के दिल टूट जाते हैं?

आज अपने गले में फांसी का फंदा डाले मृत्यु के दरवाजे पर खड़ा होकर मैं कहे जाता हूं—ये गोरे विदेशी हमें बर्मियों के हाथों से उबारने नहीं आये हैं—ये आये हैं, इस हरे-भरे असम की छाती पर मजबूती से बैठ जाने के उद्देश्य से।

हमें तो तुम लोग गेंहुअन सांप का संपोला समझते हो। हमारे आमने-सामने होने पर अपना मुंह मोड़ लेते हो। हमें "अजीण पातकी"[1] बता कर हुक्का-पानी बंद कर दिया।

आज असम में स्वर्ग-देव नही रहे जो बरफुकन का न्याय कर सकें। मुझे माफी नहीं चाहिए। पिताजी का ऋण मैं जरूर चुकाऊंगा। अंजुरी भर कलेजे के खून से मैं बरफुकन के नाम पर पड़े धब्बे को धो जाऊंगा।

मैं तो मरूंगा—मैं प्रेत बनकर स्वर्ग-देव की कब्रगाहों की पहरेदारी करूंगा। परंतु मैं फिर यहां आऊंगा, मुझे स्वर्ग नहीं चाहिए—मुझे बैकुंठ नहीं चाहिए। इस सोने की पेटी, देव-दुर्लभ असम भूमि पर मैं फिर आऊंगा--फिर से जन्म लूंगा। मैं उनको जीते-जी जला डालूंगा! वे मुझे एक बार फांसी देंगे। मै दो बार आऊंगा। दो बार फांसी देंगे--मैं दस बार आऊंगा। गोरे विदेशियों को जब तक न भगा सकूंगा तब तक मैं जन्म-जन्म गले में फांसी का फंदा डाल लूंगा।

(आवेश के मारे पियली की आंखें चमक उठती हैं और वह नन्हे बच्चे-सा रो पड़ता है।)

पियली : छह सौ साल कलेजे के खून से जिस असम का निर्माण किया गया था, उसे मैं विदेशियों के हाथ छोड़े जा रहा हूं।

(सभी रो पड़ते हैं।)

---

1. महापापी--किसी के साथ मेल न रखने वाला पापी।

कूपर : इंस्पेक्टर! पियली फुकन को बटा डेना कि दिस इज टाइम। आउर जादा डेरी करने का टाइम नेहीं हाय।

हरनाथ : साहब! मरण-समय में वह जो चाहे कर लेने दीजिये। उसे और थोड़ा-सा समय दे दिया जाय, तो वह दिल खोल कर अपनी बात कह सकेगा' तब उसकी आत्मा को भी चैन मिलेगा। मरने के समय उसे अफसोस भी नहीं रहेगा।

पियली : तो अब हम चलें। जाने से पहले मैं हाथ जोड़ कर कह रहा हूं--इस अपंग के सारे दोष, भूल-चूक आप लोग माफ कर दें।

(पियली जमीन में सिर टेक्कर सबको प्रणाम करता है—लोग हरि-ध्वनि देते हैं।)

लोग : ओ - हरि, ओ - राम
ओ - राम, ओ हरि

(पियली प्रणाम करने के बाद उठना चाहता है। पर उठ न पाने के कारण अचानक "नारायण" कहकर पुकार उठता है। जन्मि उसे तुरंत पकड़कर उठा देता है।)

पियली : भैया! अगर मरने के बाद मेरा शव ये फिरगी तुम्हें सौंप दे, तो स्वर्ग-देव की कब्रगाह के पास ही मेरी अंत्येष्टि करें।

(पियली मां के पास जाता है। मां बच्चे की भांति उसे प्यार कर फिर फूट-फूट कर रो पड़ती है। पियली बड़ी कोशिश से धीरज रखकर कहता है)

पियली : अम्मां! मैं फिर आऊंगा।!

(मां के पास से हट आने के समय पियली की नजर नर्तकी पर पड़ जाती है। वह अचानक रुक जाता है। नर्तकी पियली के पैर पर सिर रख प्रणाम करती है और अपनी रिहा[1] के आंचल से आंसू पोंछती है।

पियली : नर्तकी! तू मेरी भवानी है।

(कूपर के संकेत से दो पहरेदार पियली की ओर आगे बढ़ कर कुछ दूर खड़े रहे जाते हैं। सुचिता पियली को प्रणाम कर चरण-धूलि अपने सिर पर लेती है। पियली के संयम का बांध टूटने-सा लगता है। सुचिता के सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद देता है और अपने ही हाथ से उसका सिंदूर पोंछ देता है। शोक-विह्वल हो जाने के कारण किसी ओर देखे बगैर मुड़कर फांसी के फंदे की ओर आगे बढ़ जाता है। सुचिता फूट-फूट कर रोने लगती है।)

---

1. असमिया महिलाओं का बूटेदार पहनावा।

लवणी . पिता जी! पिता जी! कहां जाते हो--न जाओ--न जाओ।

(कहती हुई पियली की ओर दौड़ पड़ती है। तभी जन्मि उसे गोद में उठा लेता है। लवणी उतावली होकर हाथ-पैर पटकने लगती है। और चीख-चीखकर कहती है)

लवणी : मुझे छोड़ दो--मुझे छोड़ दो।

(पियली फुकन किसी की बात पर कान दिये बगैर खुद फांसी के चबूतरे पर चढ़ जाता है। पियली की मां, सुचिता और लवणी को जन्मि हटा ले जाता है। चारों ओर निस्तब्धता! फांसी के मंच पर चढ़कर पियली अपनी पगड़ी, हार आदि खोल देता है। उसके बाद सतरी पियली के शरीर और चेहरे पर काला कपड़ा पहना देता है और उसके गले में फांसी का फंदा डाल देता है। साथ ही समूचे मंच पर अंधेरा हो जाता है। मंच पर अंधेरा रहते ही पियली की ये आवाजें गूंज उठती हैं--मानो वह आकाश से आ रही हों--)

पियली की आवाज : मुझे स्वर्ग नहीं चाहिए--मुझे बैकुंठ नहीं चाहिए--मैं सोने की पेटी हूं। देव-दुर्लभ इस असम भूमि पर मैं फिर आऊंगा--फिर से जन्म लूंगा और जन्म-जन्म में गले में फांसी का फंदा पहनूंगा।

(बिगुल बज उठता है--जो फांसी की दुर्वह स्थिति की ही घोषणा करता है। कुछ देर बाद फिर मंच पर उजाला होता है और जनता के बीच सफेद कपड़े और फूलों से ढका पियली का शव और उसके पास ही उसकी दोनों बैसाखियां दिखायी पड़ती है। लोग हरि नाम का उच्चारण--हरि बोल - हरि बोल - करते हुए अरथी को उठा ले जाते हैं।)

लोग : ओ हरि - ओ राम
ओ राम - ओ हरि

(अरथी उठाने के साथ ही नेपथ्य से एक करुण गीत की आवाज तैरती आती है।)

गीत

''छीन लिया किसने रे वंशज को छाती के
बलिवेदी रंग डाली खून से कलेजे के
कौन हमें सकता है मार

मर-मर लेंगे जन्म
बार-बार
जन्म-जन्म में नौजवान देश के।"[1]

(पर्दा गिरता है)

1. मूल असमिया - बुकुरे बड-हक कोने काढि निले
कलिजार तेजेरे बलीशाल बोलाले
नांवारे बधिब
मरि उपजिब
जनमे जनमे देशर डेका दले।

परिशिष्ट

1. गदाधर राजा : 'बांही' वर्ष ९, अंक 3-4, 1918 ई. मे प्रकाशित। सन् 1966 ई. में पुस्तकाकार प्रथम प्रकाशित। स्वत्व--श्रीमती रत्नावली बरुआ, डिब्रूगढ़, असम।

लक्ष्मीनाथ बेज बरुआ (मृत्यु 1937) इस सदी के प्रभावशाली लेखक थे। ये पत्रकारिता; व्यंग्य, कहानी, नाटक (जयमती, बेलिमार आदि) कविता आदि की रचना में संलग्न रहे। उन्हे आधुनिक असमिया साहित्य का प्रवर्तक माना जाता है।

2. चिरंतन : प्रकाशन--1962। स्वत्व--श्री अनिल चौधुरी, उलूबारी, गुवाहाटी-8। 'प्रतिवाद', 'मानिक राइटं' आदि इनके अन्य नाटक है। 'मानिक राइटं' एक खास लोककथा के आधार पर रचित है। चौधुरी अभिनेता भी हैं।

3 उलझन : 'चित्रबन' पहला वर्ष, अंक-4, 1956 ई. में प्रकाशित। स्वत्व--श्री भोला कटकी, माधव, जागगुरिहाट, असम। कटकी की दिलचस्पी अभिनय में भी है। कुछ दिन एक भ्रमणशील नाटक-मंडली के साथ भी सबद्ध रहे।

4. चकरी . सन् 1961 ई. में प्रकाशित 'त्रितरंग' सकलन से लिया गया है। स्वत्व--श्री प्रवीण फुकन, मणिपुरी बस्ती, गुवाहाटी-8। फुकन 'काल परिणय', 'मणिराम दीवान' आदि नाटकों के रचयिता के रूप में प्रसिद्ध हैं। वे पिछले दिनो अच्छे क्रिकेट खिलाड़ी के रूप में भी परिचिन थे।

5. कठपुतली नृत्य : रचना - 1961 ई.। इस सकलन में संकलित होने से पहले अप्रकाशित। स्वत्व--डा0 भवेन शइकिया, गुवाहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी-14। शइकिया लोकप्रिय कहानीकार हैं। (कहानी सकलन--प्रहरी, गहवर, संदूर) रेडियो नाटक लेखन मे भी उन्होंने अच्छी निपुणता दिखायी है।

डा0 शइकिया गुवाहाटी विश्वविद्यालय के पाठ्य-पुस्तक प्रणयन विभाग के सचिव हैं।

6. भास्वती : ''शाश्वती'' नामक संकलन से, 1966 ई.। स्वत्व--श्री सत्य प्रसाद बरुआ, उजान बाजार, गुवाहाटी-1। श्री बरुआ पहले आकाशवाणी में और उसके बाद सरकारी प्रचार विभाग में सेवारत रहे। 'शिखा', वनहंसी ('वाइल्ड डक' का अनुवाद) आदि उनके नाटक हैं। 'नाटक आरु अभिनय--प्रसंग' उनकी समालोचनात्मक कृति है। अभिनेता के रूप में भी बरुआ की प्रसिद्धि रही है।

7. द्वीप : 1894 शक संवत् के 'आमार प्रतिनिधि' के रङाली बिहु अंक में प्रकाशित। स्वत्व--श्री हिमेंद्र कुमार बरठाकुर, जोरहाट, असम। श्री बरठाकुर पेशे से इंजीनियर हैं। संप्रति ये कुछ समय के लिए संयुक्त राष्ट्र अमेरिका प्रवासी हैं। इनका बड़ा नाटक 'बाघ' प्रसिद्ध है। श्री बरठाकुर की चिंतन शैली मौलिक है।

8. दैनंदिन : अप्रकाशित। स्वत्व--श्री दुर्गेश्वर बरठाकुर, आकाशवाणी गुवाहाटी-3। श्री बरठाकुर का ''निरुद्देश'' (लापता) नाम का प्रहसन प्रकाशित हुआ है। इनके हास्य व्यंग्यात्मक ज्यादातर रेडियो-नाटक अप्रकाशित हैं।

अतिरिक्त संयोजन

पियली फुकन : रचना--सन् 1948 ई। स्वत्व--नगांव नाट्य समाज, नगांव, असम।

इस नाटक में नाटककार के नाम का उल्लेख न रहने पर भी इस विख्यात एवं स्वदेश-प्रेम-स्पंदित नाटक के साथ स्व. चंद्रकात फुकन और श्री शारदा कांत बरदल के नाम जुड़े हुए हैं। फुकन और बरदल दोनों ने अच्छे अभिनेता के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

मैसर्स श्रीराम ग्राफिक्स, जनकपुरी, नई दिल्ली द्वारा लेजर कंपोज तथा मैसर्स दी सेंट्रल इलैक्ट्रिक प्रैस, नारायणा, दिल्ली द्वारा मुद्रित।